आपेक्षिकता
की
मूल संकल्पनाएँ

आपेक्षिकता की मूल संकल्पनाएँ

[फेलिक्स पिरानी के संशोधित संस्करण से अनुवाद]

अनुवादिका
श्रीमती निर्मल जैन



राजकमल प्रकाशन

मूल्य ६.००

प्रकाशक
राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड,
दिल्ली ६

मुद्रक
आर० के० प्रिंटर्स,
८०-डी कमला नगर,
दिल्ली ७

Hindi Translation of
A B C of Relativity by Bertrand Russel

Originally Published by
George Allen & Unwin Ltd London

विज्ञप्ति

यह पुस्तक पहली बार 1925 मे प्रकाशित हुई थी। आपेक्षिकता के मूल सिद्धात तब से बदले नही हैं किन्तु उसके व्यवहार बहुत प्रसत हो गए हैं और प्रस्तुत सस्करण के लिए कुछ सुधार आवश्यक था। श्री फेलिक्स पिरानी ने यह सुधार मेरी सहायता से किया है। उन्होने ११वाँ अध्याय फिर से लिखा है और वतमान ज्ञान के साथ मेल बिठाने के लिए कई दूसरे अनुच्छेद बदल दिए हैं।

विषय सूची

अध्याय 1

स्पर्श और दृष्टि

पृथ्वी और ब्रह्माण्ड

हर कोई जानता है कि आइंस्टाइन ने कोई आश्चर्यजनक काम किया, परन्तु इतना तो बहुत ही कम लोग जानते हैं कि वास्तव में उसने क्या किया। साधारणतः यह माना जाता है कि उसने भौतिक संसार-सम्बन्धी हमारी धारणाओं में क्रांति पैदा कर दी, परन्तु नई धारणाएँ गणितीय जटिलताओं से परिपूर्ण हैं। यह तो सत्य है कि आपेक्षिकता सिद्धान्त को जन-साधारण को समझाने के बहुत-से तरीके अपनाये गए, परन्तु इनमें जब भी हम किसी महत्त्वपूर्ण बात पर पहुँचते हैं तो उसका समझना कठिन हो जाता है। इसके लिए हम लेखकों को दोषी नहीं ठहरा सकते। बहुत सी नई धारणाओं को गणित के बिना भी समझाया जा सकता है, परन्तु फिर वे बहुत ही कठिन हो जाती हैं। आवश्यकता इस बात की है कि विश्व के सम्बन्ध में हमने जो धारणा बना रखी है उसमें परिवर्तन होना चाहिए। विश्व-सम्बन्धी यह धारणा बहुत पुरानी सम्भवतः मानव-पूर्व के पूर्वजों से चली आ रही है और इसे हममें से प्रत्येक ने अपने बाल्यकाल से ही सीखा था। हमारी सकल्पनाओं में परिवर्तन आना सदैव ही कठिन है और विशेष रूप से बड़ी उम्र में तो और भी कठिन है। ऐसे ही परिवर्तन की आवश्यकता कॉपरनिकस के समय में भी थी, जब उसने पहले-पहल यह बताया था कि पृथ्वी स्थिर नहीं है और न ही बाकी समस्त ब्रह्माण्ड पृथ्वी के चारों ओर प्रतिदिन एक परिक्रमा करता है। हमारे लिए यह धारणा ज़रा भी कठिन नहीं है क्योंकि हमने इसे अपने मानसिक स्वभाव में परिपक्वता आने से पहले ही सीख लिया था। इस प्रकार आइंस्टाइन के विचार आने वाली उस पीढ़ी के लिए सरल तथा ग्राह्य होंगे जो इन्हीं के साथ पलेंगे, परन्तु हमारे लिए अब कल्पना शक्ति में काफी बड़े परिवर्तन की आवश्यकता होगी।

पृथ्वी-तल के सम्बन्ध में खोज करने में हम अपनी सभी इन्द्रियों का प्रयोग करना होता है और विशेष रूप से दृष्टि और स्पर्श इन्द्रिय का। विज्ञान के

उदय म पूव लम्बाइयाँ नापने के लिए मनुष्य क अगो का प्रयोग होता था। इसके लिए 'कदम', हाथ और बालिश्त का प्रयोग होता था। लम्बी दूरी नापन के लिए यह देखना होता था कि एक स्थान से दूसर स्थान तक जान म कितना समय लगा। धीरे धीरे हमने दूरी को केवल आंख स देखकर आकना सीखा परन्तु शुद्धता के लिए हम स्पश पर ही निभर करते ह। इसक अतिरिक्त स्पश से हम वास्तविकता का भी भास होता है। कुछ चीजा का स्पश भी सम्भव नहीं है जसे इन्द्रधनुष दपण म प्रतिबिम्ब इत्यादि। इन चीजा पर बच्चा का बडा हैरानी होती है क्योकि उनकी तात्विक परिकल्पनाए केवल इतनी हा जानकारी तक सीमित है कि जिसे म हम जो भी देखते है वह वास्तविक नहा ह। मकबथ की कटार अवास्तविक थी क्योकि दृष्टिबोध की तरह उसका स्पशबोध नही हा सकता था। केवल ज्यामिति और भौतिकी ही नही बल्कि हमार चारो ओर जो भी है उसक सम्ब ध म हमारी धारणा स्पशज्ञान पर ही आधारित है यहा तक कि यह हमारे रूपकालकार तक म आता है हम एक अच्छे भाषण को ठोस और रद्दी भाषण को गप (डाग मारना) कहत है क्योकि हमारे विचार मे गस अधिक वास्तविक नही ह।

ब्रह्माड क अध्ययन म हमारे लिए एकमात्र दृष्टिबोध ही उपलब्ध है। हम सूय का स्पश नहीं कर सकत और न ही उसके पास तक जा सकत हैं हम चद्रमा के चारा ओर पदल चक्कर नही लगा सकत और न ही प्लायोडिज की माप के लिए फुटे का उपयोग कर सकते हैं। फिर भी ज्योतिषज्ञों ने उसके लिए बिना किसी हिचक के ज्यामिति और भौतिकी का प्रयोग किया क्योकि उसन इन्ह पृथ्वी पर उपयोगी पाया था, और चू कि स्पश तथा यात्रा पर आधारित था। ऐसा करने म उनके सामने बहुत-सी कठिनाइयाँ पदा हो गइ जिनका बाद म आइन्स्टाइन ने निवारण किया। बाद म यह ज्ञात हुआ कि हमन स्पश ज्ञान स जो कुछ सीखा था वह हमारा अवज्ञानिक पूव-सस्कार था और यदि हम ससार का यथाथ चित्र प्राप्त करना चाहते हैं तो हम उसका त्याग करना होगा।

एक उदाहरण स यह स्पष्ट हो जाएगा कि एक ज्योतिषज्ञ को उस साधारण व्यक्ति की तुलना म कितनी बातें असम्भव लगती हैं जो पृथ्वी क तल की वस्तुओ स सम्बधित है। माना कि आपको एक एसी औषधि दी जाय जिससे आप कुछ समय क लिए बहोश हो जाए और जब आप होश म आए तो आपकी स्मरण शक्ति तो जाती रह परन्तु आपकी विचार शक्ति बनी रह। अब हम यह मान लें कि जब आप बहोश थ तो उसी समय आपको एक गुब्बार म ले जाया जाता है और जब आप होश म आते हैं तो गुब्बारा किसी अधेरी रात म हवा क साथ उडा चला जा रहा है—वह रात या तो 5 नवम्बर की रात थी यदि आप इगलड क ऊपर उड रह हैं या अगर आप अमरीका के

ऊपर हैं ता वह 4 जुलाई की रात हो। आप उस आतिशबाजी को देख सकते हैं जो जमीन से, रेलगाड़िया स या हवाई जहाजों से छोडी जा रही है, परन्तु अंधेरे के कारण आप जमीन रेलगाडी या हवाई जहाज को नही देख सकते। आपके मन म संसार का क्या चित्र होगा ? आप सोचेंगे कि कोई भी चीज स्थायी नहीं है यहाँ प्रकाश की क्षणिक चमक हैं जो अपनी अल्प अवधि में शून्य म विविध और अद्भुत रूपों म भ्रमण करती हैं। आप इन प्रकाश की चमकों को छू नही सकते, आप इन्हें केवल देख सकते हैं। स्पष्ट है कि तब आपकी ज्यामिति आपकी भौतिकी और आपकी तत्त्वमीमासा साधारण मनुष्यो से भिन्न होगी। यदि उस गुब्बारे म कोई साधारण मनुष्य आपके साथ हो तो उसके शब्द आपको अबाध लगेंगे। परन्तु यदि आपके साथ आइन्स्टाइन हो तो आप साधारण मनुष्य की तुलना म उसकी बातों को अधिक आसानी से समझ लेंगे, क्योंकि अब आप उन सब पूर्व अवधारणाओं से मुक्त होंगे जिनके कारण अधिकांश मनुष्य उन्हें समझने म असमर्थ रहते हैं।

आपेक्षिकता का सिद्धान्त काफी हद तक इस बात पर निर्भर करता है कि उन विचारों का बहिष्कार किया जा सके जो हमारे दैनिक जीवन म उपयोगी हैं परन्तु उनका नहीं जो औषधि खाए हुए गुब्बारे वाले व्यक्ति के लिए उपयोगी थे। कई कारणों से, जो लगभग आकस्मिक ही हैं पृथ्वी पर की परिस्थितियाँ कुछ ऐसी हैं कि यहाँ की मनकल्पनाएँ अशुद्ध ही होती हैं यद्यपि ऐसा मालूम पडता है कि वे विचारों के अभिन्न अंग हैं। इन परिस्थितियों म से सबसे महत्त्वपूर्ण यह है कि पृथ्वी के तल पर अधिकांश वस्तुएँ काफी अटल हैं और पार्थिव दृष्टिकोण से काफी स्थायी हैं। यदि ऐसा न होता तो किसी यात्रा पर जाने का विचार इतना निश्चित न मालूम पडता जितना कि अब लगता है। यदि आप किंग्स क्रॉस से एडिनबरा तक की यात्रा करें तो आपको किंग्स क्रॉस हमेशा वहीं मिलेगा जहाँ वह हमेशा होता है और रेल की पटरी उसी पथ पर होगी जहाँ वह पिछले इसी सफर के समय थी और एडिनबरा में वेवर्ली स्टेशन अपने स्थान से हटकर कैसिल तक नहीं पहुँचा होगा। इसलिए आप सोचते हैं और कहते हैं कि आपने एडिनबरा तक की यात्रा की एडिनबरा चल कर आप तक नहीं पहुँचा है यद्यपि यह बाद वाला कथन भी उतना ही सत्य होगा जितना कि पहला। इस साधारण दृष्टिकोण की सफलता बहुत सी ऐसी बातों पर निर्भर करती है जो एक प्रकार से भाग्य की तरह की हैं। माना कि लन्दन के सभी घर बादल रूप से गति कर रहे हों जैसे कोई मक्खियों का झुण्ड हो, मानें कि रेलगाडी बर्फ के लुढकते हुए ढेर की तरह जा रही हो और उसी प्रकार अपना रूप भी बदलती हो और अन्त म मान लें कि भौतिक वस्तुएँ भी बादलों की भाँति बनती और बिगडती रहती हों। इन कल्पनाओं म कोई ऐसी असम्भव बात नहीं है, परन्तु ऐसी दुनिया मे एडिनबरा तक की यात्रा का

कोई अर्थ ही नही रहेगा । निश्चय ही आप टक्सी ड्राइवर से सबसे पहल यही पूछेंगे कि आज किस क्रॉस कहाँ पर है । स्टेशन पर पहुँचकर भी एडिनबरा के बारे म आपका सबसे पहला प्रश्न यही होगा, परन्तु स्टेशन पर क्लक आपस पूछेगा कि 'महाशय, आप एडिनबरा के किस भाग के बारे म पूछ रहे है ? प्रिंसज स्ट्रीट ग्लासगो पहुँच गई है, कसिल चलकर हाइलडस तक पहुँच गया है और वेवरले स्टेशन फिथ ऑफ फोथ के बीच पानी के नीचे पहुँच गया है ।' यात्रा के दौरान भी स्टेशन स्थिर नही रहगे । उनमे से कुछ उत्तर की ओर जा रहे होंगे कुछ दक्षिण की ओर, और कुछ पूव या पश्चिम की ओर जा रहे होंगे सम्भवत कुछ रेलगाडी से भी तज चाल से जा रहे हो । एसी परिस्थिति म आप यह नहीं कह सकते कि किसी क्षण आप कहाँ पर थ । वास्तव मे यह धारणा, कि कोई व्यक्ति हमेशा किसी निश्चित स्थान पर है इस भाग्यशाली बात पर आधारित है कि इस पृथ्वी-तल की अधिकाश बडी वस्तुएँ अविचल है । स्थान की सकल्पना एक स्थूल प्रायोगिक धारणा मात्र है यह कोई ऐसी परमावश्यक बात नही है और इसको पूणत निश्चित नही बनाया जा सकता ।

यदि हम इलक्ट्रान क आकार के होत तो हमारे लिए स्थायित्व की यह धारणा न होती जो हमारे बोध के स्थूल होन के कारण है । किस श्रा जो हम ठोस मालूम पडता है वह इतना विशाल होगा कि उसकी अवधारणा, कुछ भक्की गणितनो को छोडकर अन्य किसी क लिए भी कठिन ही होगी । उसके जो टुकडे हम देख सकेंगे वे पदाथ के सूक्ष्म कणो से बडे नहा हाग जो कभी एक-दूसरे के सम्पक म नही आते, बल्कि लगातार एक-दूसर क चारो ओर भिनभिनाते रहते हैं जस किसी कल्पनातीत तज बले नत्य म होना है । हमारे अनुभवा का ससार उतना ही पागलपन वाला होगा जितना कि यहाँ होगा जब एडिनबरा के भिन्न भिन्न भाग विभिन्न दिशाओ म जा रहे हागे । इसक विपरीत यदि सूय क समान विशालकाय हों और उतने ही दीर्घायु भी हो और आपका प्रत्यक्ष ज्ञान भी उतना ही मन्द हो तो पुन यह ब्रह्माण्ड आपको अस्त व्यस्त और अस्थायी लगेगा ग्रह और तारे सुबह की धुध के समान आकर लुप्त होते जाएँगे और कोई भी चीज किसी दूसरे क सापेक्ष स्थिर अवस्था म नहीं मालूम पडगी । इस प्रकार आपेक्षिक स्थायित्व की यह धारणा जो हमारी सामान्य विचारधारा का एक अग बन गई है इस कारण है कि हमारा आकार हा एसा है और हम एस ग्रह पर हैं जिसका तल स्नना गम नहीं है । यदि एसा न होता तो आपेक्षिकता स पूव की भौतिकी निश्चित मनुष्य क लिए सन्तोषजनक न होती । वास्तव म हमन एस सिद्धान्तो का आविष्कार ही न किया होता । हम एक ही छलाग म आपेक्षिकता भौतिकी पर पहुँच जाते या वज्ञानिक नियमो म अनभिज्ञ रहत । हमारे लिए यह भाग्य की बात है कि हमारे सामने एसी कोई परिस्थिति नहीं है क्योंकि यह सोचना

कठिन है कि एक ही व्यक्ति वह सब काम कर डालता जो यूक्लिड गलीलियो, न्यूटन और आइन्स्टाइन ने मिलकर किया। परन्तु ऐसे अविश्वसनीय प्रकाण्ड विद्वान के बिना इस संसार में भौतिकी का आविष्कार ही न हुआ होता जहाँ अवलोकित प्रेक्षणों में विश्वव्यापी घनत्व का अस्तित्व व्याप्त था।

ज्योतिष में यद्यपि सूर्य, चन्द्रमा और तारों का अस्तित्व वर्षों से ज्यों-का त्यों बना हुआ है परन्तु दूसरी दृष्टि से ज्योतिष में जिस विश्व से हमारा सम्बन्ध है वह हमारे दैनिक जीवन के संसार से बिलकुल भिन्न है। जैसा कि हम पहले ही कह चुके हैं हम पूर्णतया दृष्टि पर निर्भर हैं, आकाशीय पिण्डों का स्पर्श करना, सुनना, सूँघना या स्वाद सम्भव नहीं है। आकाश का प्रत्येक पिण्ड बाकी सभी पिण्डों के सापेक्ष गतिमान है। पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूम रही है, सूर्य किसी एक्सप्रेस गाड़ी से भी कहीं अधिक तेज चाल से हरकुलीज तारामंडल में एक बिन्दु की ओर जा रहा है और स्थिर तारे मुर्गियों के भयातुर झुण्ड की तरह हड़बड़ी में इधर उधर भाग रहे हैं। आकाश में क्लैपम ग्राम और एडिनबरा की तरह निश्चित स्थान नहीं है। जब आप पृथ्वी पर एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाते हैं तब आप कहते हैं कि रेल-गाड़ी जा रही है, न कि स्टेशन, क्योंकि स्टेशन एक-दूसरे के और आस-पास के नगरों के सापेक्ष अपनी भौगोलिक स्थिति में ज्यों-के त्यों रहते हैं। परन्तु ज्योतिष में स्वेच्छा से आप किसी को भी गाड़ी और किसी को स्टेशन मान सकते हैं। इसका निश्चय पूर्णतया सुविधा और प्रथा के अनुसार ही होगा।

इस दृष्टि से हम आइन्स्टाइन की कॉपरनिकस से तुलना करेंगे। कॉपरनिकस से पहले लोगों का विचार था कि पृथ्वी स्थिर रहती है और आकाश उसके चारों ओर प्रतिदिन एक बार चक्कर लगाता है। कॉपरनिकस ने बताया कि स्वयं पृथ्वी एक दिन में एक बार घूम जाती है और सूर्य तथा तारों की दैनिक परिक्रमा 'आभास' मात्र है। गैलीलियो और न्यूटन ने इस विचार की पुष्टि की तथा अन्य कई बातों से इसकी पुष्टि होती थी—उदाहरण के लिए पृथ्वी का ध्रुवों पर चपटा होना और ध्रुवों पर वस्तुओं का वजन भूमध्य रेखा पर वजन की तुलना में अधिक होना। परन्तु आधुनिक सिद्धान्त के अनुसार कॉपरनिकस और उसके पूर्वगामियों में यही अन्तर था कि कौन-सा मत उनके लिए सुविधाजनक था। सब प्रकार की गति सापेक्ष है और यदि हम कहें कि 'पृथ्वी एक दिन में एक बार घूम जाती है' या कहें कि 'आकाश पृथ्वी के चारों ओर प्रतिदिन एक परिक्रमा करता है' तो इन दोनों कथनों में कोई अन्तर नहीं है। दोनों का ठीक एक ही अर्थ है जैसा कि हम कहें कि अमुक लम्बाई छः फुट या दो गज है। यदि हम पृथ्वी के बजाय सूर्य को स्थिर मान लें तो ज्योतिष में आसानी रहती है। यदि हम कॉपरनिकस के कथन को प्राथमिकता दें तो उसका अर्थ निरपेक्ष गति को महत्त्व देना होगा जो आखिर

भ्रम ही है। प्रत्येक गति सापेक्ष है और यह तो केवल एक प्रथा की बात है कि हम किसे स्थिर मानें। इस प्रकार की सभी प्रथाएँ समान रूप से सही होंगी यद्यपि समान रूप से सुविधाजनक नही होंगी।

एक बात और बडे महत्त्व की है जिसमे ज्योतिष पार्थिव भौतिकी से भिन्न है क्योंकि वह पूर्णतया दृष्टि पर ही निर्भर है। जनसाधारण के विचार और पुरानी भौतिकी दोनो मे ही बल की कल्पना का प्रयोग होता है क्योंकि बल सामान्य अनुभूतियो के साथ सम्बद्ध होने के कारण सुबोध मालूम पडता है। जब हम चलते हैं तो हमारे पुट्ठो से सम्बद्ध जो अनुभव होता है वह उस समय नहीं होता जब हम स्थिर बैठे हो। उन दिनो जब सामान ढोने के यान्त्रिक साधनो का आविष्कार तो नही हुआ था परन्तु लोग अपनी गाडियो मे बैठकर यात्रा कर सकते थे और वे घोडो को परिश्रम करते स्वय देख सकते थे जो बल उसी प्रकार लगाते थे जैसे मनुष्य लगाता है। अपने अनुभव से प्रत्येक व्यक्ति जानता था कि खीचना या धक्का देना और खिच जाना या धक्का खाना कैसा होता है। इन सुपरिचित तथ्यो के कारण ही बल गति विज्ञान का स्वाभाविक आधार मालूम पडता था। परन्तु न्यूटन के गुरुत्व नियम के कारण एक कठिनाई उत्पन्न हो गई। बिलियर्ड की दो गेंदो के बीच का बल तो आसानी से समझ मे आ जाता था क्योंकि हम जानते है कि किसी दूसरे व्यक्ति से टक्कर होने पर कैसा अनुभव होता है परन्तु पृथ्वी और सूर्य के बीच का बल तो रहस्यपूर्ण ही लगता था क्योंकि वे एक-दूसरे से लगभग नवा नौ करोड मील की दूरी पर हैं। न्यूटन को स्वय यह दूर से क्रिया असम्भव लगती थी उसका विश्वास था कि ऐसी कोई अज्ञात विधि है जिससे सूर्य का प्रभाव ग्रहो तक पहुँचता है। परन्तु ऐसी किसी भी विधि का पता नही चला और गुरुत्व एक पहेली ही रहा। वास्तविकता यह है कि बल की सकल्पना ही गलत है। सूर्य ग्रहो पर कोई बल नहीं डालता। आइन्स्टाइन के गुरुत्व नियम के अनुसार ग्रह इस बात पर ध्यान देते हैं कि उनके आस-पास क्या है। इसका प्रभाव किस प्रकार पडता है यह अगले एक अध्याय मे समझाया जाएगा इस समय तो हमारा उद्देश्य केवल बल की धारणा का बहिष्कार करना ही है। यह धारणा स्पर्शेन्द्रिय के कारण उत्पन्न भ्रमात्मक अनुभवो के कारण आई थी।

जस-जस भौतिकी मे प्रगति हुई यह अधिकाधिक स्पष्ट होता गया कि पदार्थ-सम्बन्धी मूल धारणाओ के ज्ञान मे स्पर्श की तुलना मे दृष्टि कम भ्रामक है। बिलियर्ड की गेंदों के बीच टक्कर मे जो सरलता दिखाई पडती है वह बिलकुल भ्रामक है। वास्तव मे बिलियर्ड की दोनों गेंदें कभी भी एक-दूसरे को स्पर्श नहीं करतीं। इसमे जो कुछ होता है वह इतना जटिल है कि उसकी कल्पना करना भी कठिन है और जैसा साधारणतया माना जाता है उसकी

तुलना म वह टक्कर उस धूमकेतु के अधिक समान है जो सौरतन्त्र म घुम कर पुन वापस बाहर निकल जाता है।

अब तक हमने जो कुछ भी कहा है वह आइन्स्टाइन के आपेक्षिकता सिद्धात स पहल भी भौतिकीविद मानत थे। बल' को गणितीय कल्पना माना जाता था और साधारणत यह माना जाता था कि गति केवल एक आपेक्षिक घटना है—अर्थात् जब दो पिण्डो की आपेक्षिक स्थिति म परिवर्तन होता है तब हम यह नही कह सकते कि उनम से एक गतिमान है और दूसरा स्थिर है चूँकि इस घटना म केवल उनकी आपेक्षिक स्थिति म परिवर्तन होता है। परन्तु भौतिकी की वास्तविक प्रणाली का इन नय नियमा क साथ सुसगत बनाने के लिए बडे परिश्रम की आवश्यकता थी। न्यूटन बल म तथा आपेक्षिक आकाश और काल में भी विश्वास रखता था। उसन अपनी तकनीकी विधिया म इनका समावेश किया और उसकी विधिया वही रही जो बाद के भौतिकीविदो की थीं। आइन्स्टाइन ने एक नई प्रणाली का आविष्कार किया जिसम न्यूटन की परिकल्पनाओ का उपयोग नहीं किया गया था। परन्तु ऐसा करन म उस आकाश और काल-सम्ब धी उन पुरान विचारो म मूल रूप से परिवर्तन करना पडा था जो अति प्राचीन काल से अकाट्य रूप से चले आ रहे थे। उसके सिद्धात की सबस कठिन और सबसे रोचक बात यही है। उसके सिद्धात का समझने से पहले कुछ परिचयात्मक बातें बताना आवश्यक है। अगले दो अध्यायों म हम इन्ही पर विचार करेंगे।

अध्याय 2

वास्तविक घटना और प्रेक्षित घटना

एक प्रकार के श्रेष्ठ व्यक्ति को यह कहने का शौक है कि हरक चीज़ आपेक्षिक है। यह तो निरर्थक ही है क्योंकि यदि हरक चीज़ आपेक्षिक हो तो वह स्वय किसके सापेक्ष होगी। फिर भी, बिना किसी तत्त्वमीमासीय उलझन म पडे यह कहा जा सकता है कि इस भौतिक ससार म हर चीज़ प्रेक्षक के सापेक्ष है। यह दृष्टिकोण चाहे सही हो या गलत परन्तु 'आपेक्षिकता सिद्धात' मे मान्य नही है। सम्भवत यह नामकरण ठीक नही है इससे दार्शनिक और अनिश्चित लोग दोनो ही भ्रम म पड जाते हैं। वे सोचने लगते हैं कि नया सिद्धात भौतिक ससार की हर चीज़ को सापेक्ष सिद्ध करता है जब कि इसके विपरीत इस सिद्धात म सभी सापेक्ष चीजो का बहिष्कार करते हैं और भौतिक नियमो का ऐसा रखते हैं कि वे प्रेक्षक की परिस्थिति पर किसी भी प्रकार से निभर न हो। यह तो सत्य है कि प्रेक्षक को जो कुछ दिखाई पडता है उस पर इन परिस्थितियो का जितना प्रभाव पहले सोचा जाता था उससे अधिक ही पडता है परन्तु इसके साथ-साथ आइन्स्टाइन ने यह बताया कि इस प्रभाव को किस प्रकार पूणत उपेक्षा की जा सकती है। उनके सिद्धात म जो कुछ भी आश्चयजनक है उसका मुख्य स्रोत यही है।

यदि दो व्यक्ति एक ही घटना को देखते हैं तो उनके बोध म कुछ समानताएँ होगी और कुछ अन्तर होगा। दनिक जीवन की आवश्यकताओ की दृष्टि स य अन्तर दुर्बोध हो जाएग क्योंकि व्यावहारिक दृष्टिकोण से य अतर महत्त्वहीन हैं। एक व्यक्ति जब किसी घटना को देखता है तो दूसरा व्यक्ति जब उसी घटना को देखता है तो उनके बोध म जो अन्तर है उसके विभिन्न लक्षणों पर मनोविज्ञान और भौतिकी अपने-अपने दृष्टिकोण स जोर देने के लिए बाध्य हो जाते हैं। इनम स कुछ अन्तर तो प्रेक्षको के मस्तिष्क या मन म अन्तर होने क कारण होते हैं कुछ इन्द्रियो म अन्तर क कारण और कुछ भौतिक परिस्थितियों म अन्तर क कारण होते हैं। इन तीन प्रकार के अन्तरो को क्रमश मनोवैज्ञानिक शरीर क्रियात्मक और भौतिक कहा जा सकता है।

हम जानते है कि यदि किसी सुपरिचित भाषा म कोई बात कही जाए तो वह स्वभावत सुनी जाएगी, परतु यदि उतनी ही ज़ोर से कोई बात किसी अज्ञात भाषा मे कही जाए तो शायद उस पर ध्यान न जाए। आल्प्स पर दो व्यक्तियों म से एक उसके सौदय और दृश्या को ही देखता है जबकि दूसरा व्यक्ति जल प्रपात की ओर ध्यान देता है कि इनसे शक्ति कैसे प्राप्त की जा सकती है। ऐसे अतर मनोवैज्ञानिक हैं। एक निकट दृष्टि वाले और एक दूर दृष्टि वाले व्यक्ति का अतर तथा एक ठीक सुनने वाले और एक बहरे व्यक्ति का अतर शरीर क्रियात्मक है। इनसे हमारा कोई सम्बध नही है और मैंने इनका उल्लेख यहा केवल इसलिए किया है कि इन्हें छोडा जा सकता है। हमारा सम्बध तो केवल भौतिक अतर से है। यदि हम प्रेक्षक के स्थान पर कैमरो और अभिलेख यन्त्रों का प्रयोग करें तो दो प्रेक्षको के भौतिक अतर का स्थायी रूप से बनाए रख सकते हैं और उसे फिल्म या ग्रामोफोन के रूप म प्रस्तुत कर सकते हैं। यदि दो व्यक्ति किसी तीसरे व्यक्ति को बोलते हुए सुन रहे है और उनम से एक व्यक्ति दूसरे की तुलना मे बोलने वाले के निकट है तो उसे दूसरे की तुलना म आवाज़ कुछ तज़ सुनाई पडेगी और कुछ जल्दी भी। यदि दो व्यक्ति एक गिरते हुए वृक्ष को देख रहे हो तो वे उसे भिन्न भिन्न कोण पर देखेंगे। ये दोनो प्रकार के अतर अभिलेख यन्त्रो द्वारा भी समान रूप से प्राप्त हो सकते है। ये प्रेक्षको की सनक के कारण नही हैं बल्कि भौतिक प्रकृति म ऐसा साधारणत होता ही है और हम इसका अनुभव करते हैं।

साधारण व्यक्ति की भाति ही भौतिकीविद् भी समझता है कि प्रत्यक्ष ज्ञान मे उसे इस बात की जानकारी प्राप्त होती है कि उसके निजी अनुभवो के अतिरिक्त भौतिक ससार म वास्तव म क्या हो रहा है। भौतिकीविद् होने के नाते वह भौतिक ससार को एकमात्र मानवी स्वप्न न मानकर उसे वास्तविक मानता है। उदाहरण के लिए समुचित स्थिति मे खडा कोई भी व्यक्ति सूय को देख सकता है और सूय की फोटोग्राफी की उन प्लेटो पर भी देखा जा सकता है जो इसी उद्देश्य से रखी गई हो। भौतिकीविद् यह सोचने के लिए बाध्य हो जाता है कि जो कुछ लोगो ने सूय या जो उसके फोटो में देखा है उसके अतिरिक्त भी कोई घटना अवश्य घटती है। हालांकि यह बात स्वय स्पष्ट मालूम पडती है पर मैंने इस पर ज़ोर दिया है क्योंकि कुछ लोगो का विचार है कि आइन्स्टाइन ने इसम कुछ सशोधन किया है। वास्तव म उसने ऐसा कुछ नही किया।

यदि भौतिकीविद यह सही मानता है कि कई लोग एक ही भौतिक घटना को देख सकते हैं तो स्पष्ट है कि भौतिकीविद् का सम्बध वहां घटना के केवल उन लक्षणों से है जो सब प्रेक्षको के लिए समान है क्योंकि अन्य लक्षणों का

घटना का अपना नहीं माना जा सकता । कम-से-कम भौतिकीविद् का एस लक्षण तक ही सीमित रहना चाहिए जो समान रूप से अच्छे प्रेक्षकों के लिए सम न हो । सूक्ष्मदर्शी या दूरदर्शी का उपयोग करने वाला प्रेक्षक अच्छा रहता है क्योंकि जो अन्य सब लोग देखते हैं वह उसको तो देखता ही है उसके अतिरिक्त भी वह बहुत कुछ देखता है । एक सुग्राही फोटोग्राफी प्लेट इससे भी अधिक देख सकती है इसलिए वह आंख के मुकाबले अच्छी मानी जाती है । परन्तु दृश्यभूमिका मे अन्तर या प्रतीयमान आकार के अन्तर, जो दूरियो मे अन्तर के कारण होते हैं ऐसे अन्तर है जो स्वय वस्तु के कारण नही हैं ये पूर्णतया प्रेक्षक के दृष्टिकोण की ही उपज हैं । वस्तुओ के बारे मे अनुमान करते समय सामान्यत इन पर ध्यान नही दिया जाता। भौतिकी मे यही प्रक्रम बहुत आगे तक जारी रखते हैं परन्तु मूल सिद्धान्त यही है।

मैं यहा पर यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि यहा पर किसी प्रकार की अशुद्धता से हमारा ज़रा भी सम्बन्ध नही है । यहाँ पर हमारा सम्बन्ध किसी घटना के विभिन्न कोणो से सही-सही अभिलेखित विवरणो के शुद्ध भौतिक अन्तरो से है । जब कोई व्यक्ति बन्दूक चलाता है तो वे लोग जो उसके बहुत पास नहा हैं ध्वनि सुनने से पहले उसकी दमक देखते हैं । इसका कारण उनकी इन्द्रियो का कोई दोष नही है बल्कि इसका कारण यह है कि ध्वनि का वेग प्रकाश के वेग से कम होता है। प्रकाश की चाल इतनी अधिक है कि पृथ्वी-तल पर किसी घटनास्थल से आने वाले प्रकाश को तात्कालिक ही माना जा सकता है। पृथ्वी पर जब हम कुछ देखते हैं तो वह लगभग उसी समय होता है जब हम उसे देखते हैं। प्रकाश एक सेकिण्ड मे 300 000 किलोमीटर (लगभग 186 000 मील) चलता है। यह सूर्य से पृथ्वी तक लगभग आठ मिनट मे आता है और तारो से पृथ्वी तक आने मे 4 वर्ष से लगाकर सौ करोड वर्ष तक का समय लग जाता है। परन्तु यदि हम सूर्य पर घड़ी रखें और वहाँ पर ग्रीनविच माध्य समय के अनुसार 12 बजे एक प्रकाश दमक प्रेषित करके उसे यहाँ 12 बजकर 8 मिनट पर प्राप्त करके प्रकाश का वेग मालूम करना चाहे तो यह सम्भव नही है । प्रकाश का वेग ज्ञात करने की हमारी विधि तो लगभग परोक्ष ही होगी । सबसे सीधी विधि वह है जो ध्वनि के लिए प्रयुक्त की जाती है जिसमे प्रतिध्वनि का प्रयोग करते हैं। हम किसी दर्पण तक एक प्रकाश-स्पन्द भेजें और देखें कि दर्पण से परावर्तन के पश्चात वापस हमारे पास तक लौटने मे कितना समय लगा इससे हम दर्पण तक की दोहरी यात्रा का समय प्राप्त हो जाएगा। परन्तु पृथ्वी पर यह समय अत्यधिक कम होता है इसलिए भौतिकविदो को अधिक जटिल विधियो का उपयोग करना पड़ता है परन्तु उसका मूल सिद्धान्त तो वही, प्रतिध्वनि का ही है।

यही सिद्धान्त रेडार में, अन्य उद्देश्य से, प्रयुक्त किया जाता है। अति-लघु रेडियो-तरंगें (जिनकी चाल प्रकाश के समान ही होती है) किसी दूर की वस्तु तक भेजी जाती हैं जो उससे परावर्तित होकर लौटती हैं। तरंगों को वस्तु तक जाने और वापस लौटने में जितना समय लगता है उससे वस्तु की दूरी परिकलित की जा सकती है।

हम बता दें कि दर्शक के दृष्टिकोण के लिए छूट देने की समस्या ऐसी है कि जो भौतिकी में हमेशा से रही है और वास्तव में ज्योतिष में तो कापर-निकस के समय से ही इसका प्रभुत्व चला आ रहा है। यह सत्य है परन्तु कई सिद्धान्तों के पूरे परिणाम मालूम होने से पूर्व ही वे मान्य हो जाते हैं। अधिकांश प्रचलित भौतिकी सिद्धान्त के साथ मेल नहीं खाती यद्यपि उसे सिद्धान्त-रूप में सभी भौतिकीविदों ने मान लिया था।

कुछ ऐसे नियम थे जो दार्शनिक प्रवृत्ति के लोगों को अटपटे लगते थे परन्तु भौतिकीविदों के लिए मान्य थे क्योंकि वे व्यावहारिक रूप में कार्यकारी थे। लाक ने द्वितीयक गुणों—रंग, शोर स्वाद गंध आदि—को व्यक्तिनिष्ठ माना और प्राथमिक गुणों—आकार स्थिति और रूप—को भौतिक वस्तुओं का वास्तविक गुण माना था। भौतिकीविद् के नियम ऐसे ही हैं जैसे इस मत के अनुसार होने चाहिए। रंग और शोर को व्यक्तिनिष्ठ माना गया क्योंकि उनकी तरंगें—प्रकाश या ध्वनि की तरंगें—एक निश्चित वेग से स्रोत से प्रेक्षक की आँख या कान तक पहुँचती हैं। आभासी आकार दृश्यभूमि के नियमों के अनुसार बदलते रहते हैं परन्तु ये नियम सरल हैं और यदि कई चाक्षुष आभासी आकार उपलब्ध हों तो इन नियमों की सहायता से 'वास्तविक' आकार का पता लग सकता है। इसके अतिरिक्त जो वस्तुएँ हमारे समीप हों उनके 'वास्तविक' आकार का ज्ञान स्पर्श से प्राप्त हो सकता है। किसी भौतिक घटना के होने का वस्तुनिष्ठ समय उस समय से लग सकता है जब हम उसे देखते हैं। इसमें हम प्रकाश ध्वनि या तन्त्रिका धाराओं—परिस्थिति के अनुसार—के प्रेषण के वेग को भी सम्मिलित कर लेते हैं। भौतिकीविदों ने व्याव-हारिक रूप से इसी दृष्टिकोण को अपनाया चाहे भौतिकीविद होने के नाते उन्हें कितना भी मनस्ताप रहा हो।

यह मत तब तक चलता रहा जब तक कि भौतिकीविदों का सम्बन्ध ऐसे वेगों से न हो गया जो पृथ्वी-तल पर काम आने वाले सामान्य वेग से कहीं अधिक थे। एक एक्सप्रेस गाड़ी एक मील प्रति मिनट की चाल से जाती है जबकि ग्रह एक सेकिण्ड में कई मील चला जाता है। धूमकेतु जब सूर्य के समीप होते हैं तो उनकी चाल बहुत अधिक होती है परन्तु चूँकि उनका आकार बदलता रहता है इसलिए उनकी स्थिति बहुत परिशुद्धता से मालूम करना असम्भव है। व्यावहारिक रूप से ग्रह ही सबसे तेज चलने वाले पिण्ड थे जिन पर गति

विनान ठीक ठीक लागू किया जा सकता था। रेडियोसक्रियता और अन्तरिक्ष किरणो के आविष्कार से और हाल ही म उच्च ऊर्जा वाले त्वरक उपकरणो के निर्माण से अधिक परास तक के प्रेक्षण सम्भव हो सके हैं। परमाणु से भी छोटे आकार के अलग अलग कणो को भी देखना सम्भव हो गया है जिनके वेग प्रकाश के वेग से कुछ ही कम होते हैं। इतनी अधिक चाल से चलते हुए पिण्डो का आचरण वैसा नही होता जसाकि पुराने सिद्धान्तो के अनुसार होना चाहिए। एक बात तो यह है कि चाल के साथ साथ द्रव्यमान एक निश्चित सूत्र के अनुसार बढता जाता है। यदि कोई इलेक्टान बहुत तीव्र गति से जा रहा हो तो उसको प्रभावित करने के लिए हल्की चाल के मुकाबले अपेक्षाकृत अधिक बल की आवश्यकता होगी। गति के कारण वस्तुओ के आकार म भी अन्तर आ जाता है, इसके लिए भी कारण दिये गए हैं। उदाहरण के लिए एक घन लें जो बहुत तेजी से जा रहा हो। अब जो व्यक्ति उसके साथ-साथ गति नही कर रहा है उसके लिए वह घन गति की दिशा मे छोटा हो जाता है परन्तु स्वय अपने आपसे (अर्थात् उस प्रेक्षक के लिए जो उसके साथ ही चल रहा हो) वह उतने का उतना ही रहता है। इससे भी अधिक आश्चर्य की बात यह थी कि समय का गुजरना भी गति पर निर्भर होता है अर्थात् यदि दो बिलकुल सही घडिया हो और उनम से एक बहुत तेज चाल से जा रही हो और वे एक यात्रा के बाद पुन साथ लाई जाएँ तो उनम एक ही समय नहीं होगा। यह प्रभाव इतना कम होता है कि अभी तक इसकी सीधी जाँच सम्भव नही है परन्तु जब भी हम अन्तरिक्ष यात्रा म सफल होंगे तब इसकी जाँच सम्भव होगी क्योकि तब इतनी लम्बी यात्रा हो सकेगी कि यह समय विस्तार (Time dilation) इतना अधिक हो सके कि उसे मापना सम्भव होगा।

समय विस्तार के लिए एक प्रत्यक्ष प्रमाण भी है परन्तु इसे एक भिन्न रीति से प्राप्त करते हैं। यह प्रमाण अन्तरिक्ष किरणो से मिलता है। अन्तरिक्ष किरणें कई प्रकार के परमाणविक कण ही हैं जो बहुत तीव्र गति से बाह्य अन्तरिक्ष से पृथ्वी के वायुमण्डल म आते रहते हैं। इनम से कुछ कण जिन्हें मेसान कहते हैं यात्रा के दौरान ही विघटित हो जाते हैं और इस विघटन का प्रेक्षण सम्भव है। यह देखा गया कि किसी मेसान की गति जितनी तीव्र होगी पृथ्वी पर स्थित वैज्ञानिक की दृष्टि म उसके विघटन म उतना ही अधिक समय लगेगा। इस प्रकार के परिणामों से यह निष्कर्ष निकलता है कि घडियाँ और पैमानो की सहायता से प्राप्त परिणाम जिन्हें हम भौतिक विज्ञान का आधार समझते थे वे वास्तव म हमारी अपनी परिस्थितियो पर निर्भर थे अर्थात् इस बात पर निर्भर थे कि जिन पिण्डो का माप लिया जा रहा था उनके सापेक्ष हमारी गति कितनी थी।

इससे यह स्पष्ट होता है कि अब तक हम अपने और प्रकृति घटनाओ के

लक्षणा म जो भेद करते आए हैं, उसमे परिवतन करना होगा । यदि कोई व्यक्ति नीला चश्मा पहने हुए है तो वह जानता है कि प्रत्येक वस्तु मे उस जो नीला रग दिखाई पडता है वह प्रेक्षित वस्तु का अपना नही है बल्कि चश्मे के कारण दिखाई पडता है । परन्तु माना कि वह बिजली की दो दमक देखता है और अपने प्रेक्षणो के बीच की समयावधि मालूम कर लेता है, तब यदि उसे मालूम है कि ये दमक कहाँ कहा से प्रेषित की गइ और वह प्रत्येक के लिए दमक के उसके पास तक पहुँचने म लगे समय की छूट दे देता है और अगर उसका क्रॉनोमीटर बिलकुल सही है तो उसका यह सोचना स्वाभाविक ही होगा कि उसन दोनो दमकों के बीच की वास्तविक समयावधि मालूम कर ली है और उससे उसका कोई व्यक्तिगत सम्बन्ध नही है । उसकी इस धारणा की पुष्टि इस बात से भी हो जाती है कि जो भी अच्छे प्रेक्षक उसे मिले उन सबके परिणाम उसके अपने परिणामो से मिलते जुलते थे । परन्तु इसका कारण यह है कि ये सभी प्रेक्षक पृथ्वी पर ही है और सबकी गति उसी के समान है, यहाँ तक कि यदि दो प्रेक्षक वायुयानो म विपरीत दिशा मे सफर कर रह हो तो आपेक्षिक वेग अधिक से अधिक तीन हजार मील प्रति घटा होगा जो 186 000 मील प्रति सेकिण्ड (प्रकाश का वेग) की तुलना मे बहुत ही कम है । यदि 170 000 मील प्रति सेकिण्ड के वेग से जाता हुआ कोई इलेक्ट्रान दोनो दमको के बीच का समय प्रेक्षित कर सके तो प्रकाश के वग के अनुसार लगे समय का ध्यान रखने हुए वह पहले प्रेक्षक से बिलकुल भिन्न परिणाम पर पहुँचेगा । पाठक पूछ सकता है कि आपको यह कैसे मालूम है ? आप एक इलेक्ट्रान तो नहा हैं । आप इतने तीव्र वेग से नही चल सकते किसी भी वैज्ञानिक ने आज तक ऐसे प्रेक्षण नही किए जिसमे आपके कथन की सत्यता सिद्ध हो सके । फिर भी जसा कि हम आगे देखेंगे इस कथन के लिए काफी प्रमाण हैं । इसका प्रमाण एक तो प्रायोगिक है और इसका दूसरा प्रमाण जो बडा अद्भुत है, तकमगत है और जो पहले कभी भी प्रस्तुत किया जा सकता था, परन्तु उस समय तक प्रस्तुत नहीं किया गया जब तक कि पुराने सिद्धान्त प्रयोग द्वारा गलत सिद्ध नहीं हो गए ।

एक ऐसा सामान्य सिद्धात भी है जो आपेक्षिकता सिद्धान्त के भी सगत है । जितना कि माना जाता है वह उससे कही अधिक प्रभावशाली है । यदि आप जानते हैं कि एक व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति से दुगुना धनी है तो चाहे आप उनके धन को पौंड मे आँकें, या डॉलर फ्राक या किसी भी मुद्रा मे मापें, एक व्यक्ति दूसरे से दुगुना ही धनी रहेगा । उनके धनों को व्यक्त करने वाली सख्याएँ तो बदलती रहेंगी परन्तु एक सख्या दूसरी की सदा दुगुनी रहेगी । इसी प्रकार की चीज कुछ जटिल रूप में भौतिकी मे भी आती है । चूँकि प्रत्येक गति आपेक्षिक है इस-लिए आप स्वेच्छा से किसी भी पिण्ड का निर्देश के लिए मानक पिण्ड मान

सकते हैं और बाकी सबकी गति इसके सन्दर्भ में मापेंगे। यदि आप किसी रेलगाड़ी में हों और आप उठकर डाइनिंग कार तक जाएँ तो आप एक क्षण के लिए रेलगाड़ी को स्थिर मानते हैं और अपनी गति उसके सापेक्ष ही आँकते हैं। परन्तु जब आप अपनी यात्रा के बारे में सोच रहे हों आप पृथ्वी को स्थिर मानते हैं और आप कहते हैं कि हम 60 मील प्रति घंटा की चाल से जा रहे हैं। एक ज्योतिषज्ञ जिसका सम्बन्ध सौर-तन्त्र से है सूर्य को स्थिर मानता है और आपको घूर्णन तथा परिक्रमा करता हुआ मानता है। इस गति की तुलना में रेलगाड़ी की गति इतनी मन्द है कि वह कुछ भी नहीं है। तारकीय ब्रह्माण्ड में रुचि रखने वाला ज्योतिषज्ञ तारों की औसत गति के सापेक्ष सूर्य की गति भी इसमें जोड़ देगा। आप अपनी गति को मालूम करने की इन विधियों में किसी एक को बाकी दूसरी विधियों की तुलना में अच्छी नहीं कह सकते, निर्देश पिण्ड को निश्चित कर लेने पर इनमें से प्रत्येक विधि पूर्णतः सही है। जिस प्रकार आप किसी व्यक्ति के धन का विभिन्न प्रकार की मुद्रा में मूल्यांकन कर सकते हैं पर दूसरे व्यक्तियों की तुलना में उसके धन में कोई अन्तर नहीं पड़ता उसी प्रकार आप एक ही पिण्ड की गति विभिन्न निर्देश पिण्डों के सापेक्ष मालूम कर सकते हैं पर अन्य गतियों के साथ उसके सम्बन्ध में कोई अन्तर नहीं पड़ेगा। और चूँकि भौतिकी में सम्बन्ध ही प्रधान हैं इसलिए भौतिकी के सभी नियमों का किसी एक पिण्ड की सभी गतियों में से प्रत्येक को मानकर व्यक्त किया जाना सम्भव होना चाहिए।

इसी बात को हम दूसरे ढंग से कह सकते हैं। भौतिकी का अभिप्राय यह है कि भौतिक संसार के बारे में केवल पृथक पृथक प्रेक्षकों के व्यक्तिगत अनुभवों के बजाय हमें बारे में सूचना दे कि भौतिक संसार में वास्तव में क्या होता है। इसलिए भौतिकी का सम्बन्ध भौतिक प्रक्रम के केवल उन लक्षणों से होना चाहिए जो सभी प्रेक्षकों के लिए समान हों चूँकि केवल ऐसे लक्षण ही भौतिक घटना के अपने माने जा सकते हैं। इसके लिए यह आवश्यक है कि घटना सम्बन्धी नियम एक-से ही होने चाहिए चाहे घटना को एक प्रेक्षक के दृष्टिकोण से व्यक्त किया गया हो चाहे दूसरे के दृष्टिकोण से। यह सरल सिद्धान्त ही समस्त आपेक्षिकता सिद्धान्त को बढ़ावा देने वाला उद्देश्य है।

अभी तक हमने भौतिक घटना के जिन गुणों को स्थानिक (Spatial) और कालिक (Temporal) माना है व एक बड़े हद तक प्रेक्षक पर निर्भर पाए गए। दावा बच केवल कुछ ही गुण घटना के अपने माने जा सकते हैं। केवल इन्हीं विशिष्ट गुणों को किसी ऐसे भौतिक नियम के सूत्रण में प्रयुक्त हो सकते हैं जिसके सत्य होने की सम्भावना प्रागनुभविक है। आइन्स्टाइन के पास तुरन्त प्रदान के लिए शुद्ध गणित का उपकरण था जिसे टेन्सर सिद्धान्त कहते हैं। उसकी सहायता से वह ऐसे नियमों का आविष्कार करने में सफल हुआ

जो वस्तुनिष्ठ अवशिष्ट गुणों पर आधारित थे और प्रचलित नियमों के जो लगभग अनुकूल थे। जहाँ जहाँ आइंस्टाइन के नियम प्रचलित नियमों के प्रतिकूल थे वे सभी प्रेक्षणों के अनुकूल सिद्ध हुए हैं।

यदि भौतिक संसार में कोई सत्य न होता तो यह एकमात्र विभिन्न व्यक्तियों द्वारा देखे गए स्वप्न जैसा ही होता, और उसमें ऐसे नियमों का होना सम्भव न होता जिनसे हम एक व्यक्ति के स्वप्न और दूसरे व्यक्ति के स्वप्न में सम्बन्ध स्थापित कर सकें। एक व्यक्ति के प्रत्यक्ष ज्ञान और दूसरे व्यक्ति के (लगभग) समकालिक प्रत्यक्ष ज्ञान में निकट सम्बन्ध होने से ही यह विश्वास हो जाता है कि विभिन्न सम्बन्धित प्रत्यक्ष ज्ञान का एक ही बाह्य स्रोत होना चाहिए। एक ही घटना के बारे में भिन्न व्यक्तियों के प्रत्यक्ष ज्ञानों में जो समानताएं और भेद हैं उन्हें भौतिकी की सहायता से समझा जा सकता है। वे ठीक वैसे नहीं हैं जैसा कि हम उन्हें मानते आए हैं क्योंकि यदि अलग अलग देखा जाए तो न तो दिक् और न काल ही पूर्णत वस्तुनिष्ठ है। इन दोनों का मिश्रण 'दिक् काल' वस्तुनिष्ठ है। इसको समझाना सरल नहीं है फिर भी इसके लिए प्रयत्न करना चाहिए। यह हम अगले अध्याय में आरम्भ करेंगे।

सकते हैं और न वो सकती गति इनके मापन में सापेक्ष है। यदि आप किसी स्टेशन में हों और आप उसके डाइनिंग-कार में हों जो ... तो आप उस गाड़ी के लिए स्थिर हो को स्थिर मानते हैं और आपकी गति उसके साथ ही होती है। परन्तु जब आप अपनी यात्रा के बारे में सोचते हैं तो आप पृथ्वी को स्थिर मानते हैं और आप कहते हैं कि हम 60 मील प्रति घण्टा की गति से जा रहे हैं। एक ज्योतिषी जिसका सम्बन्ध सौर-मण्डल से है सूर्य को स्थिर मानता है और आपको घूमता तथा परिक्रमा करता हुआ मानता है। इस गति की तुलना में रेलगाड़ी की गति इतनी कम है कि वह छूट भी रहा है। नक्षत्रीय अन्तरिक्ष में रुचि रखने वाला ज्योतिषी तारों की औसत गति के सापेक्ष सूर्य की गति को ध्यान में रख लेगा। आप अपनी गति को मालूम करने के इन विधियों में किसी एक को बाकी दूसरी विधियों की तुलना में अच्छी नहीं कह सकता, निर्देशित प्रत्येक निश्चित कर लेने पर इनमें से प्रत्येक विधि पूर्ण सही है। जिस प्रकार आप किसी व्यक्ति के धन का विभिन्न प्रकार की मुद्रा में मूल्यांकन कर सकते हैं पर दूसरे व्यक्तियों की तुलना में उसके धन में कोई अन्तर नहीं पड़ता उसी प्रकार आप एक ही पिण्ड की गति विभिन्न निर्देश पिण्डों के साथ मालूम कर सकते हैं पर अन्य गतियों के साथ उसके सम्बन्ध में कोई अन्तर नहीं पड़ता। और चूँकि भौतिकी में सम्बन्ध ही प्रधान हैं इसलिए भौतिकी के सभी नियमों को किसी एक पिण्ड की सभी गतियों में से प्रत्येक को मानकर व्यक्त किया जाना सम्भव होना चाहिए।

इसी बात को हम दूसरे ढंग से कह सकते हैं। भौतिकी का अभिप्राय यह है कि भौतिक संसार के बारे में केवल पृथक पृथक प्रेक्षकों के व्यक्तिगत अनुभवों के बजाय हम बारे में सूचना दे कि भौतिक संसार में वास्तव में क्या होता है। इसलिए भौतिकी का सम्बन्ध भौतिक प्रक्रम के केवल उन लक्षणों से होना चाहिए जो सभी प्रेक्षकों के लिए समान हों, क्योंकि केवल ऐसे लक्षण ही भौतिक घटना के अपने माने जा सकते हैं। इसके लिए यह आवश्यक है कि घटना सम्बन्धी नियम एक-से ही होने चाहिए चाहे घटना को एक प्रेक्षक के दृष्टिकोण से व्यक्त किया गया हो चाहे दूसरे के दृष्टिकोण से। यह अकेला सिद्धान्त ही समस्त सापेक्षिकता सिद्धांत को बढ़ावा देने वाला उद्देश्य है।

अभी तक हमने भौतिक घटना के जिन गुणों को स्थानिक (Spatial) और कालिक (Temporal) माना है वे एक बड़ी हद तक प्रेक्षक पर निर्भर पाये गए। घटना के केवल कुछ ही गुण घटना के अपने माने जा सकते हैं। केवल ये अवशिष्ट गुण ही किसी ऐसे भौतिक नियम के सूत्रपात में प्रयुक्त हो सकते हैं जिनके सत्य होने की सम्भावना प्रागनुभविक है। आइन्स्टाइन के पास तुरन्त प्रयोग के लिए शुद्ध गणित का उपकरण था जिसे टेन्सर सिद्धांत कहते हैं। उसकी सहायता से वह ऐसे नियमों का आविष्कार करने में सफल हुआ

जो वस्तुनिष्ठ अवशिष्ट गुणों पर आधारित थे और प्रचलित नियमों के भी लगभग अनुकूल थे। जहा जहा आइन्स्टाइन के नियम प्रचलित नियमों के प्रतिकूल थे वे सभी प्रेक्षणा के अनुकूल सिद्ध हुए हैं।

यदि भौतिक ससार मे कोई सत्य न होता तो यह एकमात्र विभिन्न व्यक्तियों द्वारा देखे गए स्वप्न जैसा ही होता और उसमे एसे नियमो का होना सम्भव न होता जिनसे हम एक व्यक्ति के स्वप्न और दूसरे व्यक्ति के स्वप्न म सम्बन्ध स्थापित कर सकें। एक व्यक्ति के प्रत्यक्ष ज्ञान और दूसरे व्यक्ति के (लगभग) समक्षणिक प्रत्यक्ष ज्ञान म निकट सम्बन्ध होने से ही यह विश्वास हो जाता है कि विभिन्न सम्बन्धित प्रत्यक्ष ज्ञान का एक ही बाह्य स्रोत होना चाहिए। एक ही घटना के बारे म भिन्न व्यक्तियों के प्रत्यक्ष ज्ञानों म जो समानताएँ और भेद हैं उन्ह भौतिकी की सहायता स समझा जा सकता है। व ठीक वसे नहीं हैं जसा कि हम उन्ह मानते आए हैं क्योंकि यदि अलग अलग देखा जाए तो न तो दिक और न काल ही पूर्णत वस्तुनिष्ठ है। इन दोनों का मिश्रण दिक्-काल वस्तुनिष्ठ है। इसको समझाना सरल नहीं है फिर भी इसके लिए प्रयत्न करना चाहिए। यह हम अगले अध्याय म आरम्भ करेंगे।

अध्याय 3

प्रकाश का वेग

सापेक्षिकता सिद्धान्त में जितनी भी विचित्र बातें हैं उनमें से कुछ का सम्बन्ध प्रकाश के वेग से है। यदि पाठक इसी प्रकार न्यूटनीय पुनर्व्यवस्था का कारण समझना चाहें तो उन्हें पुरानी धारणाओं की अपर्याप्तता के कारणों का कुछ ज्ञान होना आवश्यक है।

यह तथ्य कि प्रकाश एक निश्चित वेग से प्रगति (गमन) करता है सबसे पहले ज्योतिष-सम्बन्धी प्रमाणों द्वारा निर्धारित हुआ था। बृहस्पति के चन्द्रमाओं में कभी-कभी बृहस्पति से ग्रहण हो जाता है और इसका परिकलन करते हैं कि ग्रहण कब होगा। यह देखा गया कि जब बृहस्पति पृथ्वी के सबसे अधिक समीप था तब उसके एक चन्द्रमा का ग्रहण प्रत्याशित समय से कुछ मिनट पहले ही हो गया था और जब बृहस्पति पृथ्वी से सबसे दूर था तब ग्रहण प्रत्याशित समय से कुछ मिनट बाद हुआ। यह ज्ञात हुआ कि समय का यह अन्तर यह मानकर समझाया जा सकता है कि प्रकाश का एक निश्चित वेग होता है। *इसलिए जब हम बृहस्पति की किसी घटना को देखते* हैं तो वह वास्तव में कुछ समय पहले घटी थी और जब बृहस्पति अपेक्षाकृत अधिक दूर था तो पास वाली स्थिति के मुकाबले और भी पहले घटी होगी। सौरतन्त्र के अन्य भागों में इसी प्रकार की घटना की व्याख्या करने के लिए भी *प्रकाश का वेग इतना ही होना चाहिए।* इस प्रकार यह *माना गया* कि निर्वात में प्रकाश सदा एक निश्चित स्थिर वेग से चलता है यह वेग ठीक 300 000 किलोमीटर प्रति सेकिण्ड है। (एक किलोमीटर लगभग 5/8 मील के बराबर होता है)। जब यह सिद्ध हो गया कि प्रकाश तरंग रूप है तो यह वेग ईथर में *तरंगों के संचार का वेग ही हुआ।* यह माना जाता था कि तरंगें ईथर में चलती हैं परन्तु अब ईथर का अस्तित्व कुछ सन्देहजनक माना जाता है यद्यपि तरंगें तो हैं ही। रेडियो-तरंग (जो प्रकाश-तरंगों की भांति हैं, पर कुछ दीर्घ होती हैं) और ऐक्स किरणें (जो प्रकाश-तरंगों की तरह हैं परन्तु लघु) का वेग भी इतना ही होता है। अब सामान्यतः यह माना जाता है कि गुरुत्वाकर्षण भी इसी वेग से संचारित होता है। (आपेक्षिकता सिद्धान्त

में पहले यह माना जाता था कि गुरुत्वाकर्षण का संचार तत्काल ही होता है, परन्तु अब यह बात मान्य नहीं है।)

अभी तक तो सब ठीक चल रहा था। परन्तु जब बहुत शुद्ध माप लेना असम्भव सिद्ध हुआ तब कठिनाइयां कभी शुरू हो गई। यह माना गया था कि तरंगें ईथर में होती हैं तो उनका वेग ईथर के सापेक्ष होना चाहिए। परन्तु हम स्पष्ट रूप से जानते हैं कि ईथर (यदि है तो) आकाशीय पिण्डों की गति में कोई अवरोध उत्पन्न नहीं करता इसलिए यह मानना स्वाभाविक है कि ईथर उनके साथ गति नहीं करता। यदि पृथ्वी को बहुत से ईथर को आगे धकेलना पड़ता, ठीक उसी प्रकार जैसे किसी स्टीमर को बहुत सारा पानी आगे धकेलना पड़ता है तो जैसे पानी स्टीमर पर प्रतिरोध डालता है उसी प्रकार ईथर के कारण भी प्रतिरोध होना चाहिए। इसलिए सामान्य विचार यह था कि जैसे हवा किसी छलनी से होकर निकल जाता है उसी प्रकार ईथर सभी वस्तुओं से बिना किसी कठिनाई के गुजर सकता है। यदि ऐसा होता तो अपनी कक्षा में पृथ्वी का ईथर के सापेक्ष वेग होना चाहिए। यदि कक्षा में किसी स्थान पर पृथ्वी का वेग ठीक ईथर के समान हो तो किसी अन्य स्थान पर वह ईथर में से तीव्र वेग से जा रही होगी। यदि किसी दिन पवन तीव्र हो और आप एक वृत्ताकार रास्ते पर घूमने जाएँ तो चाहे पवन की दिशा कुछ भी हो कुछ दूर के लिए पवन की दिशा आपके विरुद्ध अवश्य होगी। यहाँ भी सिद्धान्त वही है। इससे यह निष्कर्ष निकला है कि यदि आप छः महीने के अंतर से कोई दो दिन लें जब कि पृथ्वी अपनी कक्षा में विपरीत दिशा में होगी तो वह इनमें से किसी एक दिन निश्चय ही ईथर वायु में विपरीत दिशा में होगी।

अब यदि ईथर वायु का अस्तित्व है तो यह स्पष्ट है कि पृथ्वी पर किसी प्रेक्षक के सापेक्ष प्रकाश-संकेत वायु की पार दिशा की अपेक्षा ईथर वायु के साथ-साथ तेज गति से चलते प्रतीत होंगे और वायु की विपरीत दिशा की तुलना में उसके पार अधिक तीव्र प्रतीत होंगे। माइकलसन और मार्ले अपने सुविख्यात प्रयोग से इसी बात की जाँच करना चाहते थे। उन्होंने दो परस्पर लम्ब दिशाओं में प्रकाश संकेत भेजे, प्रत्येक प्रकाश किरण एक दर्पण से परावर्तन के पश्चात् उसी स्थान पर वापस आता है जहाँ से प्रकाश-संकेत भेजे गए थे। नदी में धारा के विरुद्ध कुछ दूरी तक जाने और वापिस लौटने में जितना समय लगता है वह उस समय से अधिक होगा जो उतनी ही दूरी तक धारा के पार जाने और वापस लौटने में लगता है। यह बात कोई भी व्यक्ति प्रयोग या गणित द्वारा प्रमाणित कर सकता है। इसलिए यदि कोई ईथर वायु होती तो प्रकाश के संकेत—जो ईथर में चलने वाली तरंगें ही हैं—में से एक को दर्पण तक जाने और वापस लौटने में दूसरे की अपेक्षा कम समय लगना

चाहिए था। माइकल्सन और मार्ली ने यह प्रयोग किया, उन्होंने यह प्रयोग कई भिन्न स्थितियों में किया और उन्होंने यह प्रयोग कई बार किया। उनका उपकरण इतना यथार्थ था कि वे चाल में इस प्रत्याशित अंतर या इससे भी कम अन्तर, यदि कोई अंतर होता तो अवश्य माप सकते थे। परन्तु कोई सूक्ष्मातिसूक्ष्म अंतर भी दिखाई नहीं पड़ा। इसका परिणाम उनके लिए तथा दूसरों के लिए आश्चर्यजनक था परन्तु बार-बार ठीक से प्रयोग करने पर इसमें कोई सन्देह नहीं रह गया। सबसे पहला प्रयोग 1881 में किया गया था तथा अधिक अच्छे ढंग से 1887 में पुनः दोहराया गया परन्तु इसकी सही व्याख्या कई वर्ष बाद ही हो सकी।

यह अभिधारणा कि पृथ्वी अपने साथ-साथ आस-पास के ईथर को भी ले जाती है असम्भव सिद्ध हुई। इसके कई कारण थे। फलस्वरूप इसमें एक स्वाभाविक शिथिलता आ गई जिसका निवारण करने के लिए भौतिकी विदों ने पहले तो स्वेच्छ परिकल्पनाएँ प्रस्तुत कीं। इसमें सबसे महत्त्वपूर्ण फिट्सजरल्ड की थी जिसका लारेंट्ज ने विकास किया। इसे फिट्सजेरल्ड की आकुंचन परिकल्पना कहते हैं।

इस परिकल्पना के अनुसार जब कोई पिण्ड गतिमान हो तो वह गति की दिशा में आकुंचित हो जाता है। यह आकुंचन पिण्ड के वेग पर निर्भर करता है। आकुंचन की मात्रा इतनी थी कि माइकल्सन मार्ली प्रयोग के नकारात्मक परिणाम ठीक से समझ में आ सकें। नदी में धारा के विरुद्ध और वापस यात्रा वास्तव में धारा के पार वाली यात्रा से छोटी थी और केवल इतनी ही छोटी थी कि मन्द प्रकाश-तरंग भी यह यात्रा उतने ही समय में पूरी कर सकें। यह सत्य है कि इस आकुंचन को मापना सम्भव नहीं है क्योंकि मापदण्ड स्वयं सिकुड़ जाएगा। एक फुटे को यदि पृथ्वी की गति की दिशा में रखा जाए तो उसकी लम्बाई, उस लम्बाई से कम होगी जो उसे पृथ्वी की गति से लम्ब दिशा में रखने पर होगी। यह विचार इतना किसी से भी नहीं मिलता जितना कि व्हाइट नाइट की योजना से जिसके अनुसार अपनी गलमूछों को हरा रंगो और इतने बड़े पंखों का प्रयोग करो कि वे दिखाई ही न दें। मजे की बात यह थी कि यह योजना बहुत सफल सिद्ध हुई। बाद में (1905) जब आइन्स्टाइन ने अपना आपेक्षिकता का विशिष्ट सिद्धान्त प्रस्तुत किया तो यह परिकल्पना एक दृष्टि से सही पाई गई, परन्तु एक ही दृष्टि से। इसका अभिप्राय यह है कि वह कल्पित आकुंचन वास्तविक नहीं है बल्कि मापन पद्धति ही कुछ ऐसी है। एक बार सही दृष्टिकोण ज्ञात हो जाने पर मालूम होगा कि ऐसी मापन-पद्धति लेना कुछ आवश्यक ही हो जाता है। परन्तु मैं अभी से आइन्स्टाइन द्वारा दिये गए इस समस्या के हल को प्रस्तुत नहीं करूँगा। अभी तो मैं स्वयं इस गुत्थी के स्वरूप को ही स्पष्ट रूप से बताना चाहता हूँ।

तत्काल मानी हुई इस परिकल्पना को छोड़कर भी माइकल्सन मोर्ली प्रयोग (और इसके साथ के अन्य प्रयोगों) से इतना तो स्पष्ट होता ही है कि प्रकाश का वेग सभी दिशाओं में समान है, तथा यह बात पूरे वर्ष भर के लिए सत्य है, यद्यपि सूर्य की परिक्रमा करने के कारण पृथ्वी की दिशा सदा बदलती रहती है। इसके अतिरिक्त यह भी स्पष्ट था कि यह केवल पृथ्वी के लिए ही सत्य नहीं थी बल्कि सभी पिण्डों के लिए सत्य थी। यदि किसी पिण्ड से प्रकाश किरणें भेजी जाती हैं, तो चाहे पिण्ड की गति जो भी हो—कम से कम पिण्ड के साथ-साथ जाते हुए प्रेक्षक के लिए तो—वह पिण्ड, बाहर जाती हुई तरंगों के सकेन्द्र पर ही रहेगा। इन प्रयोगों का स्पष्ट और स्वाभाविक अर्थ यही था और आइन्स्टाइन ने जिस सिद्धान्त का आविष्कार किया वह इसके अनुकूल था। परन्तु आरम्भ में यह स्पष्ट और स्वाभाविक अर्थ असम्भव माना गया था।

कुछ उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जायगा कि तथ्य कितने विचित्र हैं। जब एक गोला छोड़ा जाता है तो वह ध्वनि से भी तेज़ वेग से जाता है। जिन लोगों पर यह छोड़ा गया वे पहले चमक देखते हैं, इसके बाद (यदि वे भाग्यशाली हों) वे गोले को फटता हुआ देखेंगे और अन्त में ध्वनि सुनेंगे। यह स्पष्ट है कि यदि गोले पर कोई वैज्ञानिक प्रेक्षक सवार हो सके तो वह ध्वनि को कभी भी नहीं सुन पाएगा क्योंकि ध्वनि के उसके पास तक पहुँचने से पहले गोला फट जाएगा और वह व्यक्ति जीवित नहीं रहेगा। परन्तु यदि ध्वनि प्रकाश वाले सिद्धान्त का अनुकरण करे तो वह प्रेक्षक सभी ध्वनि ऐसे सुन सकेगा मानो वह स्थिर हो। इस स्थिति में यदि आपके पास कोई ऐसा पट्ट हो जिससे प्रतिध्वनि उत्पन्न हो सके, और उसे गोले के साथ जोड़ दिया जाए, उदाहरण के लिए, ऐसे ढंग से कि वह गोले से 100 गज की दूरी पर गोले के साथ-साथ चलता रहे तो वह प्रेक्षक ध्वनि की प्रतिध्वनि ऐसे ही सुनता रहेगा मानो वह स्वयं और गोला दोनों स्थिर अवस्था में हों। ऐसा प्रयोग सम्भव नहीं है, परन्तु दूसरे प्रयोग जो सम्भव हैं अन्तर को स्पष्ट कर देंगे। हम रेल की पटरी पर कोई ऐसा स्थान ढूंढ लें कि वहाँ पटरी पर किसी स्थान से प्रतिध्वनि आती हो—उदाहरण के लिए जब पटरी किसी सुरंग में होकर जाती है—और माना कि रेल पटरी पर से आगे जा रही है और कोई व्यक्ति किनारे से बन्दूक चलाता है। यदि रेल प्रतिध्वनि की दिशा में जा रही हो तो रेल के यात्री किनारे वाले व्यक्ति से पहले ही प्रतिध्वनि सुन लेंगे, और यदि गाड़ी विपरीत दिशा में जा रही है तो यात्री प्रतिध्वनि बाद में सुनेंगे। परन्तु ये परिस्थितियाँ ठीक माइकल्सन मोर्ली प्रयोग की परिस्थितियों-जैसी नहीं हैं। उस प्रयोग के दर्पण प्रतिध्वनि के अनुरूप हैं और चूंकि दर्पण पृथ्वी के साथ-साथ चलते हैं इसलिए प्रतिध्वनि भी रेलगाड़ी

के साथ-साथ चलनी चाहिए। माना कि गार्ड के डिब्बे से सीटी बजाई जाती है और प्रतिध्वनि इंजिन पर स्थित किसी पटल से आती है। हम यह मानेंगे कि गार्ड के डिब्बे से इंजिन तक की दूरी उतनी ही है जितनी कि ध्वनि एक सेकिण्ड में चलती है (यानी 115 मील) और माना कि रेलगाड़ी की चाल ध्वनि के वेग का बारहवाँ भाग (अर्थात 60 मील प्रति घंटा) है। अब एक ऐसा प्रयोग है जिसे रेलगाड़ी में बैठे लोग कर सकते हैं। यदि रेलगाड़ी स्थिर होती तो गार्ड दो सेकिण्ड बाद प्रतिध्वनि सुनता परन्तु अब तो वह $2\frac{2}{143}$ सेकिण्ड में ही प्रतिध्वनि सुनता है। यदि उसे ध्वनि का वेग मालूम हो तो इस अन्तर ($\frac{2}{143}$) से वह गाड़ी का वेग ज्ञात कर सकेगा चाहे रात इतनी धुंधली हो कि किनारे पर भी न देख सके। परन्तु यदि ध्वनि प्रकाश की तरह का आचरण करती तो उसे प्रतिध्वनि 2 सेकिण्ड में ही सुनाई देती चाहे गाड़ी कितनी भी तेज क्यों न जा रही होती।

कई दूसरे उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाएगा कि—परम्परा और साधारण दृष्टिकोण से—प्रकाश के वेग से सम्बन्धित तथ्य कितने असाधारण हैं। हर कोई जानता है कि यदि आप चलती हुई सीढ़ी (escalator) पर हों और आप स्थिर खड़े रहने के बजाय ऊपर चलना शुरू कर दें तो आप ऊपर अपेक्षाकृत शीघ्र पहुँचेंगे। परन्तु यदि चढ़ती हुई सीढ़ी प्रकाश के वेग से जा रही हो (न्यूयार्क में भी इतनी तेज सीढ़ियाँ नहीं हैं) तो आप ऊपर उतने ही समय में पहुँचेंगे चाहे आप स्थिर खड़े हों या सीढ़ियों पर ऊपर चढ़ रहे हों। पुनः मान लीजिए कि आप सड़क पर चार मील प्रति घंटा की चाल से जा रहे हैं और उसी दिशा में एक मोटरगाड़ी आपके पास से होकर गुजरती है जिसकी चाल चालीस मील प्रति घंटा है। यदि आप और मोटर चलते रहें तो एक घंटे बाद आप दोनों के बीच की दूरी 36 मील होगी। परन्तु यदि वह मोटर आपसे विपरीत दिशा में होती तो एक घंटे बाद आप और मोटर के बीच की दूरी 44 मील होती। यदि मोटर प्रकाश के वेग से जा रही होती तो मोटर चाहे आपके साथ होती या पास से गुजर जाती हर हालत में वह एक सेकिण्ड बाद *आपसे 186 000 मील की दूरी पर पहुँच जाती। यह और किसी उस दूसरी* मोटर से भी 186 000 मील की दूरी पर ही होगी जो इससे पहले सेकिण्ड में आपके पास से गुजरी थी। यह असम्भव मालूम होता है। सड़क के कई विभिन्न स्थानों से वह मोटर समान दूरी पर कैसे हो सकती है?

अब हम एक दूसरा उदाहरण लें। जब कोई मक्खी किसी स्तब्ध तालाब के तल को छूकर चली जाती है तो उसमें वीचि (हिलोर) उत्पन्न हो जाती है जिसके वृत्त बड़े होते हुए बाहर की ओर फैलते हैं। इन वृत्तों का केन्द्र वही बिन्दु होता है जहाँ मक्खी ने तल को स्पर्श किया था। यदि मक्खी तालाब के तल के ऊपर घूमती रहे तो वह वीचि के केन्द्र पर नहीं रहेगी। परन्तु यदि

वीचि प्रकाश की तरगें होतीं और मक्खी के बजाय कोई चतुर भौतिकीविद् ज्ञाता तो उसे मालूम पडता कि चाहे वह कहीं भी घूमता रहे वह हमेशा ही वीचि के केन्द्र पर होता है। अभी तो यदि एक चतुर भौतिकीविद तालाब के किनारे बैठा हो तो वह यही समझेगा कि साधारण वीचि की भाँति उनका केन्द्र मक्खी नहीं है बल्कि वह स्थान ही है जहाँ मक्खी ने तल का स्पर्श किया था। और यदि एक दूसरी मक्खी ने भी पानी को उसी स्थान पर और उसी क्षण छुआ होता तो वह भी वीचि के केन्द्र पर ही रहेगी चाहे वह पहली मक्खी से कितनी भी दूर क्यों न हो। यह माइकल्सन मार्ली प्रयोग के पूर्णत सदृश है। तालाब ईथर के अनुरूप है, मक्खी पृथ्वी के अनुरूप है, मक्खी का तालाब के पानी को स्पर्श करना माइकल्सन और मोर्ली के प्रकाश-सकेतों के अनुरूप है, और वीचि प्रकाश-तरगो के अनुरूप है।

पहली दृष्टि में तो यह परिस्थिति बिलकुल असम्भव मालूम पडती है। माइकल्सन मोर्ली प्रयोग 1881 में किया गया था, यदि इसकी व्याख्या 1905 तक नहीं हो सकी तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। जरा विचार करें कि हमने अभी तक क्या कहा है। उस व्यक्ति को लें जो सडक पर खडा है और उसके पास से मोटर गुजरती है। मान लो कि सडक के एक ही स्थान पर बहुत-से व्यक्ति हैं कुछ पैदल चल रहे हैं, और कुछ मोटरगाडी में हैं। मानो कि उनकी चाल भिन्न भिन्न है और कुछ एक दिशा में जा रहे हैं तो कुछ दूसरी दिशा में। मैं कहता हूँ कि यदि जहाँ वे सब हैं उस स्थान से इस क्षण एक प्रकाश की दमक छोडी जाए तो प्रकाश की तरगें, उनमें से प्रत्येक से अपनी अपनी घडियों के अनुसार, एक सेकिण्ड पश्चात 186 000 मील की दूरी पर होंगी यद्यपि एक सेकिण्ड के बाद वे सब यात्री एक ही स्थान पर नहीं होंगे। आपकी घडी से एक सेकिण्ड पश्चात् वह आपसे 186,000 मील होगी और इसके जाते समय आपको जो व्यक्ति मिला था उससे भी उसकी अपनी घडी से एक सेकिण्ड बाद 186 000 मील की दूरी पर ही होगी यद्यपि वह व्यक्ति आपसे विपरीत दिशा में जा रहा था। यहाँ हम यह मानते हैं कि आप दोनो की घडियाँ परम शुद्ध थीं। यह सब कैसे सम्भव हो सकता है ?

इन तथ्यों की व्याख्या एक ही प्रकार से की जा सकती है। इसके लिए यह मानना होगा कि घडी और घटे की गति से प्रभावित होते हैं। मेरा कहने का अभिप्राय यह नहीं है कि उन पर कोई ऐसा प्रभाव पडता है जिसे बनावट में परिशुद्धता लाकर दूर किया जा सके मेरा कहने का अभिप्राय तो यह है कि यह प्रभाव कहीं अधिक मूलभूत होता है। यानी यदि आप कहें कि दो घटनाओं के बीच की अवधि एक घटा है और आपका यह कथन आदर्श रूप से शुद्ध क्रोनामीटर से ली गई आदर्श शुद्ध माप पर आधारित है तो एक दूसरा समान परिशुद्धता वाला व्यक्ति इसी समय को एक घटे से कम या अधिक

बताएगा बताने कि यह आपके सापेक्ष तेजी म जा रहा है। आप यह नहीं कह सकते कि एक व्यक्ति सही है और दूसरा गलत, क्योंकि यह तो ऐसा ही है मानो एक व्यक्ति की घड़ी प्रीनविच समय से कम रही है और दूसरे की घड़ी यूयार्क समय स चल रही है। यह कैसे हो सकता है इसकी व्याख्या मैं अगले अध्याय म करूँगा।

प्रकाश के वेग के सम्बन्ध म अन्य विलक्षण बातें भी हैं। उनम स एक यह है कि कोई भी द्रव्यात्मक वस्तु प्रकाश के समान तेज नहीं चल सकती चाहे उस पर कितना भी बड़े-से-बड़ा बल क्यों न लगाया जाए और चाहे वह कितने भी समय तक क्यों न लगा रहे। इस एक उदाहरण स स्पष्ट किया जा सकता है। प्रदर्शनियों म कभी कभी गतिमान मचों की ऐसी श्रृंखला देखने मे आती है जो वृत्त म गति करते रहते हैं। उनम स एक बाहर वाला चार मील प्रति घण्टा की दर स जाता है उसम अगला इस पहले वाले की तुलना म चार मील प्रति घंटा अधिक तेज चलता है, इसस आगे उनकी चाल इसी प्रकार बढ़ती जाती है। आप एक स दूसरे पर कूदते जाएँ तो आप देखेंगे कि आपकी चाल बढ़कर जबदस्त हो जाती है। आप सोचेंगे कि यदि पहले मच की चाल चार मील प्रति घण्टा है और दूसरे मच की चाल पहले की अपेक्षा चार मील प्रति घंटा अधिक है तो दूसरे मच की चाल पृथ्वी के सापेक्ष आठ मील प्रति घण्टा होगी। यह गलत है वास्तव म उसकी चाल कुछ कम होती है यह अन्तर इतना कम है कि अत्यधिक शुद्ध माप स भी इस अन्तर का पता लगाना असम्भव है। मैं यहाँ स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मेरा अभिप्राय यही है। माना कि सुबह जब उपकरण घूमना आरम्भ करता है तीन व्यक्ति एक लाइन म खड़े हैं जिनके पास आदर्श रूप से परिशुद्ध क्रोनोमीटर हैं। उनम स एक भूमि पर है एक पहले मच पर और एक दूसरे पर है। पहला मच पृथ्वी के सापेक्ष चार मील प्रति घंटा की दर स चलता है। चार मील प्रति घण्टा 252 फुट प्रति मिनट के बराबर है। भूमि पर खड़ा व्यक्ति अपनी घड़ी स ठीक एक मिनट बाद देखता है कि पहले मच पर खड़ा दूसरा व्यक्ति भूमि के जिस स्थान तक पहुँच गया है जबकि वह व्यक्ति मच पर स्थिर खड़ा है और मच उसे आगे ले जा रहा है। भूमि पर खड़ा व्यक्ति भूमि पर अपने स उस स्थान तक की दूरी मापता है जहाँ पहले मच वाला व्यक्ति पहुँच चुका है। यह दूरी 352 फुट आती है। पहले मच पर खड़ा व्यक्ति अपने मच पर उस स्थान की दूरी मापता है जहाँ दूसरे मच वाला व्यक्ति इस समय पहुँच चुका था यह भी ३५२ फुट आती है। प्रश्न—भूमि पर खड़ा व्यक्ति दूसरे मच पर खड़े व्यक्ति की एक मिनट बाद की दूरी कितनी आँकता है ? क्या आपका उत्तर होगा 352 फुट का दुगुना अर्थात् 704 फुट। परन्तु वास्तव म यह कुछ कम होगा यद्यपि यह कमी नगण्य होगी। इस असगति का कारण यह है कि वे दोनो घड़िया सही

नहा हैं यद्यपि वास्तव म उनमे से प्रत्यक अपनी अपनी दृष्टि स सही है। यदि ऐसे घूमते हुए मचा की एक श्रेणी हाती जिनम से प्रत्यक, पहले वाले के सापक्ष चार मील प्रति घटा के वेग से चल रहा हा, और आपके पास यदि लाखा ऐस मच हो तो भी आप ऐसी स्थिति पर नही पहुँच सकेंगे कि अतिम मच का वेग पृथ्वी के सापेक्ष प्रकाश वेग के बराबर हा जाए। यह असगति जा कम वग क लिए बहुत कम होती है, वेग के बढने क साथ-साथ बढती जाती है और इस प्रकार प्रकाश वेग की सीमा प्राप्त करना असम्भव हो जाता है। यह सब कसे होता है, अब हम इस बार मे विचार करेंगे।

अध्याय 4

घड़ियाँ और फुटे

आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धांत के प्रतिपादन से पूर्व इस विषय में किसी को भी सन्देह नहीं हो सकता था कि विभिन्न स्थानों पर दो अलग अलग घटनाएँ एक साथ घटीं। यह तो मानना पड़ेगा कि वे स्थान एक-दूसरे से बहुत अधिक दूरी पर हों तो यह निश्चित रूप से मालूम करना कठिन होगा कि दोनों घटनाएँ समक्षणिक (simultaneous) थीं या नहीं परन्तु हर कोई *इस प्रश्न का अर्थ निश्चित रूप से समझता था। परन्तु यह सिद्ध हुआ कि यह* भ्रम था। दूर के स्थानों की दो घटनाएँ एक प्रेक्षक के लिए समक्षणिक हो सकती हैं जबकि उसने यथार्थता के लिए सभी सावधानियाँ ली हों (और विशेष रूप से उसने प्रकाश के वेग का भी हिसाब रखा हो) परन्तु समान रूप से सावधान किसी दूसरे प्रेक्षक को पहली घटना दूसरी से पूर्वगामी मालूम पड़ेगी और किसी तीसरे प्रेक्षक को दूसरी घटना पहली से पूर्वगामी मालूम हो सकती है। यदि तीनों प्रेक्षक एक-दूसरे के सापेक्ष तेजी से गति कर रहे हों तो ऐसा ही होगा। ऐसा नहीं हो सकता कि उनमें से एक सही हो और बाकी दो गलत हों वे तीनों ही समान रूप से सही होंगे। घटनाओं का समय क्रम एक हद तक प्रेक्षक पर निर्भर होता है यह सदा और पूर्णतः घटनाओं के किसी आपसी आंतरिक सम्बन्ध पर निर्भर नहीं करता। आइन्स्टाइन ने दिखाया कि इस मत से न केवल घटना क्रम को ही समझाया जा सकता था बल्कि यदि पुराने तथ्यों को आधार मानकर विवेकपूर्वक विचार किया जाए तो भी परिणाम स्वरूप यही मत सत्य मालूम होगा। परन्तु वास्तव में आपेक्षिकता सिद्धांत के तर्कसंगत आधार पर किसी का भी ध्यान तब तक नहीं गया जब तक प्रयोग के असंगत परिणाम से लोगों की विचार शक्ति को आघात नहीं पहुँचा।

हम इस बात का निर्णय कैसे करें कि विभिन्न स्थानों की दो घटनाएँ समक्षणिक थीं या नहीं ? इसका स्वाभाविक उत्तर यही होगा कि यदि कोई व्यक्ति उन दोनों के ठीक बीच में खड़ा हो और दोनों घटनाएँ उसे एक साथ दिखाई दें तो वे समक्षणिक होंगी। (यदि दो घटनाएँ एक ही स्थान पर हों

तो उनके समक्षणिक होने के बारे में कोई कठिनाई नहीं होगी, उदाहरण के लिए एक साथ प्रकाश देखना और ध्वनि सुनना)। मानो कि तड़ित की दो दमक दो विभिन्न स्थानों पर पड़ती हैं उदाहरण के लिए ग्रीनविच वेधशाला और कीव वेधशाला पर। मानो कि सेंट पाल वेधशाला उन दोनों के ठीक बीच में है और सेंट पॉल के गुम्बद पर किसी प्रेक्षक को दोनों दमक समक्षणिक प्रतीत होती हैं। परन्तु कीव पर कोई प्रेक्षक कीव वाली दमक को पहले देखेगा और ग्रीनविच पर कोई प्रेक्षक ग्रीनविच वाली दमक को पहले देखेगा क्योंकि दोनों स्थानों के बीच की दूरी तय करने में प्रकाश को कुछ समय लगता है। लेकिन यदि वे तीनों प्रेक्षक आदर्श रूप से सही हैं तो वे सभी को दोनों दमक समक्षणिक मालूम पड़ेंगी क्योंकि वे प्रकाश के संचरण में लगे समय की आवश्यक छूट देंगे। (मैंने यहाँ जितनी यथार्थता मानी है वह मानव शक्ति की सीमा से बहुत परे है।) इस प्रकार जब तक हम पृथ्वी के तल की घटनाओं पर विचार कर रहे हैं, पृथ्वी पर स्थित प्रेक्षकों को तो समक्षणिकता की यह परिभाषा बिलकुल उचित मालूम पड़ेगी। इससे जो परिणाम निकलते हैं वे परस्पर संगत हैं और उनका उपयोग पार्थिव भौतिकी की उन सभी समस्याओं में किया जा सकता है जिनमें पृथ्वी की अपनी गति की उपेक्षा की जा सकती है।

परन्तु यदि दो ऐसे प्रेक्षक हों जो एक-दूसरे के सापेक्ष तेज़ी से गति कर रहे हों तो हमारी यह परिभाषा यथेष्ट नहीं रहेगी। मानो कि हम प्रकाश के स्थान पर ध्वनि लें और उन दोनों के ठीक बीच में कोई व्यक्ति दोनों ध्वनियाँ एक साथ सुनता है। यदि हम इसे समक्षणिक कहें तो क्या होगा? सिद्धान्त रूप से स्थिति में कोई अन्तर नहीं पड़ता, बल्कि यह और भी आसान मालूम पड़ेगा क्योंकि ध्वनि का वेग बहुत कम है। मानो कि किसी कुहरे वाली रात डाकुओं के एक दल के दो व्यक्ति रेलगाड़ी के चालक और गार्ड दोनों को गोली से मार डालते हैं। गार्ड रेलगाड़ी के अन्त में था और डाकू पटरी पर, और डाकू दोनों पर काफ़ी पास से गोली चलाते हैं। एक वृद्ध आदमी, जो रेलगाड़ी के ठीक बीच में था, दोनों गोलियों की ध्वनि एक साथ सुनता है इस लिए आप कहेंगे कि दोनों गोलियाँ समक्षणिक थीं। लेकिन स्टेशन मास्टर जो दोनों शत्रुओं के ठीक बीच में था, उस गोली की ध्वनि पहले सुनता है जिससे गार्ड मारा गया था। गार्ड और इंजिन-चालक (जो चचेरे भाई हैं) के एक करोड़पति चाचा ने अपनी सारी धन-दौलत गार्ड के नाम वसीयत कर रखी थी, और यदि वह पहले मर जाए तो सारी दौलत इंजिन चालक को मिलनी। सारी धन दौलत का स्वामित्व इसी पर निर्भर था कि पहले किसकी मृत्यु हुई। मुकदमा हाउस ऑफ लार्ड्स में पहुँचा और दोनों ही पक्षों के वकील, जो ऑक्सफ़ोर्ड के पढ़े हुए थे, इस बात से सहमत थे कि वृद्ध आदमी और स्टेशन

मास्टर म से एक अवश्य ही गलत होगा। वास्तव मे दोनो ही पूर्णत नही हो सकते हैं। रेलगाडी गार्ड की लगी गोली से इंजिन चालक की लगी गोली की ओर जा रही है इसलिए गार्ड को लगी गोली की ध्वनि का वह तक पहुँचने के लिए अधिक दूरी तय करनी पडगी जबकि इंजिन-चालक को लगी गोली की ध्वनि को कम दूरी तय करनी होगी। इस प्रकार यदि वह यह कहता है कि उसने दोनो ध्वनियाँ एक साथ सुनी तो स्टेशन मास्टर भी यह कहने म सही है कि उसने गार्ड को लगी गोली की ध्वनि पहले सुनी।

यह स्वाभाविक ही है कि ऐसी परिस्थिति म हम अर्थात् इस पृथ्वी के रहने वालो को, रेलगाडी पर यात्रा करते हुए व्यक्ति के बजाय पृथ्वी पर स्थिर रूप से खड़े व्यक्ति की दृष्टि म घटनाओं का समक्षणिक होना अधिक सही मालूम पडेगा। परन्तु सैद्धान्तिक भौतिकी म ऐसे संकीर्ण दृष्टिकोण का कोई स्थान नही है। यदि किसी धूमकेतु पर कोई भौतिकीविद् हो तो उसके दृष्टिकोण से घटनाओं का समक्षणिक होना उतना ही सही होगा जितना पृथ्वी के भौतिकीविदों की दृष्टि से है। परन्तु उनके परिणाम भिन्न होंगे ठीक उसी तरह जैसे हमारे रेलगाडी और गोली से मारने वाले उदाहरण म थे। रेलगाडी की गति भी उतनी ही वास्तविक है जितनी पृथ्वी की उसमे अधिक नही इसमे कोई सन्देह नही है। कल्पना करो कि एक खरगोश और एक दरियाई घोडा इस बात पर बहस कर रहे हैं कि क्या मनुष्य 'वास्तव म' एक बड़ा प्राणी है। उनम से प्रत्येक का अपना दृष्टिकोण ही स्वाभाविक और सत्य मालूम पडेगा और दूसरे का एकमात्र काल्पनिक मालूम पडेगा। पृथ्वी या रेलगाडी म स किसकी गति वास्तविक है इस पर कोई वादविवाद भी उतना ही निरर्थक होगा। इसलिए जब हम दो दूर की घटनाओं की समक्षणिकता की व्याख्या करते है तो उनके ठीक बीच के स्थान की व्याख्या करने के लिए हम यह कोई अधिकार नही है कि हम उसके लिए कोई से भी दो पिण्ड ले लें। सभी पिण्डो म किसी को भी लेना समान रूप से सही होगा। परन्तु यदि एक व्यक्ति के लिए दो घटनाएं परिभाषा के अनुसार समक्षणिक हैं तो कुछ व्यक्ति एस भी होगे जिनके अनुसार पहली घटना दूसरी घटना स पहले घटी, कुछ दूसरे एस होगे जिनके लिए दूसरी घटना पहली घटना से पहले घटी। इसलिए हम निश्चित रूप स यह नही कह सकते कि दूर की दो घटनाएँ समक्षणिक थी या नही। ऐसे कथन का निश्चित अर्थ तभी हो सकता है जब हम किसी विशेष प्रेक्षक की दृष्टि से विचार करें। यह भौतिक घटना सम्बन्धी हमारे प्रेक्षणो का व्यक्तिनिष्ठ भाग है वस्तुनिष्ठ (objective) नही जिसे हम अब अपने भौतिक नियमो म सम्मिलित करेंगे।

विभिन्न स्थानो पर समय का प्रश्न कल्पना शक्ति के लिए आपेक्षिकता

सिद्धांत का, सम्भवतः सबसे कठिन पक्ष है। हम इस विचार के अभ्यस्त हैं कि हर चीज का काल निर्धारण हो सकता है। इतिहासकार इस तथ्य का उपयोग करते हैं कि ई० पू० 776[1] में 29 अगस्त को चीन में सूर्यग्रहण दिखाई पड़ा था। इसमें सन्देह नहीं कि ज्योतिषज्ञ घंटे और मिनट तक सही नहीं बता सकते थे कि उत्तरी चीन के किस स्थान पर पूर्ण ग्रहण कब शुरू होगा। और यह भी स्पष्ट है कि हम किसी क्षण ग्रहों की स्थिति बता सकते हैं। न्यूटन के सिद्धांत की सहायता से हम ग्रीनविच घड़ियों के अनुसार किसी समय, पृथ्वी से (किसी पिण्ड) बृहस्पति तक की दूरी की संगणना कर सकते हैं। इससे हम यह ज्ञात कर सकते हैं कि उस समय प्रकाश को बृहस्पति से पृथ्वी तक आने में कितना समय लगा—मानो कि आधा घंटा लगा। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि बृहस्पति आधा घंटा पहले उस स्थान पर था जहां हम अब उसे देखते हैं। यह सब प्रत्यक्ष मालूम पड़ता है। परंतु व्यावहारिक रूप से यह सब केवल इसलिए सत्य मालूम पड़ता है क्योंकि ग्रहों का सापेक्ष वेग प्रकाश-वेग की तुलना में बहुत कम होता है। जब हम यह अनुमान लगाते हैं कि पृथ्वी पर एक घटना और बृहस्पति पर एक घटना साथ-साथ हुई—उदाहरण के लिए बृहस्पति के एक चन्द्रमा का ग्रहण ठीक उस समय हुआ जब ग्रीनविच घड़ियों में रात के बारह बजे थे—परंतु यदि एक व्यक्ति पृथ्वी के सापेक्ष तेज गति से जा रहा है तो उसका अनुमान भिन्न होगा। यहां हमने यह मान लिया है कि उस व्यक्ति ने और हमने भी प्रकाश के वेग के लिए पर्याप्त छूट दे दी है। स्वाभाविक है कि समक्षणिकता के बारे में हमारा जो मतभेद है वह समयावधि के सम्बन्ध में ही है। यदि हमारा अनुमान हो कि बृहस्पति पर दो घटनाएँ चौबीस घंटे के अंतर से हुईं और यदि कोई व्यक्ति पृथ्वी और बृहस्पति दोनों के सापेक्ष तीव्र गति से जा रहा है तो उसके अनुमान में यह समय चौबीस घंटे से अधिक होगा।

इस प्रकार सार्वत्रिक ब्रह्माण्ड समय, जिसे निश्चित माना जाता था अब मान्य नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति के लिए आस-पास की घटनाओं का एक निश्चित कालक्रम होता है, इसे हम उस व्यक्ति का 'निजी' समय कह सकते हैं। हमारा अनुभव ज्ञान हमारे निजी समय के अनुसार होता है। चूँकि हम सभी पृथ्वी पर लगभग स्थिर हैं इसलिए सभी भिन्न व्यक्तियों के निजी समय एक-से ही हैं जिन्हें हम सामूहिक रूप में पार्थिव समय कहते हैं। परंतु यह

---

1 एक समकालीन चीनी कविता में ठीक ठीक तिथि और वर्ष दर्ज किया है—

चन्द्रग्रहण का होना तो
है साधारण घटना
अब सूर्यग्रहण का होना है
किसी अनिष्ट का सूचक।'

लम्बी दूरियों की केवल स्थूल मापों के लिए ही उचित है। इस शताब्दी में मीटर दण्ड (रोड,डि) के लिए एक नया मानक का आधार प्रकाश तरंगों और यदि हम चाहें भी तो यही समय के अनुसार मापन कर सकते हैं क्योंकि ... गति के बीच होने के कारण माप बहुत कम सही होता है। स्वयं उनके अपने दूर स्थान से तो उनका इतना अधिकांश रहता है पर हम व्यावहारिक रूप का भारी होने लगते हैं। एक मानक दण्ड का दृष्टि में किसी भौतिकविद की परिभाषा में ... की मात्रा मिल जाता।

अब प्रश्न यह उठता है कि घड़ी से वास्तव में हम क्या मापते हैं? वास्तविकता में हम जब घड़ी का निरीक्षण करते हैं तो हमारा अभिप्राय केवल मनुष्य निर्मित घड़ियों से नहीं होता बल्कि हर उस चीज से होता है जिसमें कोई नियमित बारंबार घटना हो रहा हो। पृथ्वी एक घड़ी है क्योंकि यह प्रत्येक तेईस घंटे छप्पन मिनट में एक बार घूम जाती है। परमाणु एक घड़ी है क्योंकि उसमें एक सुनिश्चित आवृत्ति की प्रकाश की तरंगें निकलती हैं जो परमाणु के स्पेक्ट्रम में दीप्त रेखा के रूप में दिखाई पड़ती है। यह विश्व परमाणुओं के समान अन्य आवर्ती घटनाओं और मूल प्रक्रियाओं से भरा पड़ा है जो विश्व के विभिन्न भागों में असाधारण रूप से समान रूप से होता है। इनमें से किसी भी आवर्ती घटना को समय मापन के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। मनुष्य निर्मित घड़ियां का एकमात्र लाभ यही है कि उनसे समय मापना आसान होता है। फिर भी कुछ अन्य घड़ियाँ इनसे भी अधिक यथार्थ हैं। आजकल सीजियम परमाणु और अमोनिया के अणुओं से विशिष्ट परिस्थितियों में जो रेडियो तरंगें उत्सर्जित होती हैं उनसे समय की जो माप मिली है वह पृथ्वी के घूर्णन पर आधारित समय की माप से अधिक एक समान सिद्ध हुई है। परन्तु प्रश्न यह उठता है कि यदि ब्रह्माण्ड समय का बहिष्कार कर दे तो फिर घड़ी से क्या मापा जाता है? घड़ी शब्द का प्रयोग यहाँ हमने व्यापक रूप में किया है जैसा कि ऊपर बताया गया है।

प्रत्येक घड़ी से उसका निजी समय ठीक ठीक मापा जा सकता है और जैसा कि हम अभी देखेंगे यह एक महत्त्वपूर्ण भौतिक राशि है। परन्तु इससे उन पिण्डों से सम्बन्धित भौतिक राशि की कोई शुद्ध माप नहीं मिलती जो इसके सापेक्ष तीव्र गति से जा रहे हों। इससे हम ऐसी घटनाओं से सम्बन्धित भौतिक राशि की एक आधार माप प्राप्त होती है परन्तु एक अन्य आधार माप की भी आवश्यकता है और इसे हम आकाश में दूरियों की माप से मालूम करते हैं। समयावधियों की भाँति आकाश में दूरियाँ भी साधारणतः वस्तुनिष्ठ भौतिक तथ्य नहीं हैं बल्कि प्रेक्षक पर निर्भर होती हैं। यह कैसे होता है इसकी व्याख्या करनी होगी।

सबसे पहली बात यह है कि हम दो घटनाओं के बीच की दूरी पर विचार करते हैं न कि दो पिण्डों के बीच की दूरी पर। यह समय के बारे में हमारे निश्चय के अनुकूल है। यदि दो पिण्ड परस्पर एक दूसरे के सापेक्ष गतिमान हों—जैसा कि वास्तव में हमेशा होता है—तो उनके बीच की दूरी लगातार बदलती रहेगी, इसलिए जब हम उनके बीच की दूरी के बारे में कहते हैं तो वह किसी एक क्षण उनके बीच की दूरी होगी। यदि आप रेलगाड़ी में एडिनबरा जा रहे हैं तो हम कहेंगे कि एडिनबरा से आपकी दूरी किसी क्षण कितनी है। परन्तु जैसा कि हम पहले ही कह चुके हैं, रेलगाड़ी पर एक घटना और एडिनबरा में एक घटना का समय समान होने के बारे में विभिन्न प्रेक्षकों का अनुमान भिन्न भिन्न होगा। इस प्रकार से दूरी की माप भी आपेक्षिक हो जाती है, ठीक उसी तरह जैसे समय की माप आपेक्षिक थी। साधारणतः हम सोचते हैं कि दो घटनाओं के बीच दो विभिन्न प्रकार के अन्तराल हैं—एक समय का अन्तराल और दूसरा आकाश में अन्तराल। आपके लन्दन से प्रस्थान से एडिनबरा तक पहुँचने के बीच में 400 मील और 10 घंटे का अंतर है। हम पहले ही देख चुके हैं कि किसी अन्य प्रेक्षक का समय के बारे में भिन्न अनुमान होगा, यह तो और भी स्पष्ट है कि उसका दूरी का अनुमान भी भिन्न होगा। सूर्य पर किसी प्रेक्षक की दृष्टि से रेलगाड़ी की गति बिलकुल नगण्य होगी और उसका अनुमान यही होगा कि आपने पृथ्वी की कक्षीय गति और उसकी दैनिक घूर्णन के बराबर ही दूरी तय की है। दूसरी ओर रेल के डिब्बे में किसी मक्खी का अनुमान यही होगा कि आपकी आकाश में गति शून्य है और आप केवल कुछ समय के लिए उसके साथ थे जिसको वह निजी समय से मापेगी, ग्रीनविच वेधशाला के समय से नहीं। हम यह नहीं कह सकते कि आप या सूर्यवासी, या मक्खी में से कोई गलती पर है। आपमें से प्रत्येक समान रूप से सही है परन्तु यदि कोई भी अपनी व्यक्तिनिष्ठ माप को वस्तुनिष्ठ माप समझने लगे तो वह गलत होगा। इस प्रकार दो घटनाओं के बीच की आकाशीय दूरी, स्वयं एक भौतिक तथ्य नहीं है, परन्तु जैसा कि हम देखेंगे, आकाश में दूरी और समय में दूरी को मिलाकर एक भौतिक तथ्य प्राप्त होता है। इसे हम आकाश काल या दिक्-काल का 'अन्तराल' कहते हैं।

यदि हम विश्व में कोई दो घटनाएं लें, तो उनके बीच दो प्रकार के सम्बन्ध सम्भव हैं। या तो किसी व्यक्ति के लिए तेज चाल से चलकर दोनों घटनाओं पर भौतिक रूप से उपस्थित होना सम्भव है या सम्भव नहीं है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि कोई भी प्रकाश के समान तेज चल नहीं सकता। उदाहरण के लिए मान लो कि पृथ्वी से प्रकाश की एक दमक चन्द्रमा तक भेजना और वहाँ से उसका परावर्तित होकर लौटना सम्भव है।

(यह प्रयोग वास्तव में किया जा चुका है परन्तु उसमें प्रकाश के स्थान पर रडार तरंगें भेजी गई जो प्रकाश वेग से चलती हैं)। प्रकाश दमक के प्रेषण से परावर्तित होकर वापस लौटने तक का कुल समय लगभग ढाई सेकिण्ड होगा। कोई भी इतनी तीव्र गति से न जा सकता कि इस ढाई सेकिण्ड की अवधि में पृथ्वी पर भी किसी समय उपस्थित हो और चन्द्रमा पर भी प्रकाश दमक के पहुँचने के समय उपस्थित हो सके। चूंकि किसी भी चीज के लिए इतना तीव्र गति से जाना असम्भव है कि वह भौतिक रूप में दोनों घटनाओं के समय उपस्थित हो सके इसलिए हम कहेंगे कि दो घटनाओं के बीच का अन्तराल[1] 'आकाशमय' है और यदि किसी चीज के लिए दोनों घटनाओं पर भौतिक रूप से उपस्थित होना सम्भव हो तो हम कहेंगे कि उन दो घटनाओं के बीच का अन्तराल 'कालमय' है। जब अन्तराल आकाशमय हो तो किसी चीज के लिए इतनी गति से जाना सम्भव होगा कि उस पर स्थित किसी प्रेक्षक को दोनों घटनाएं समक्षणिक मालूम होंगी। इस स्थिति में दो घटनाओं के बीच का 'अन्तराल' उतना ही होगा जितना कि उस प्रेक्षक के अनुमान से उन घटनाओं के बीच की दूरी होगी। जब अन्तराल कालमय हो और एक ही वस्तु दोनों घटनाओं पर उपस्थित हो सके तब उस स्थिति में दोनों घटनाओं के बीच का 'अन्तराल' उतना ही होगा जितना कि वस्तु पर स्थित किसी प्रेक्षक के अनुमान से दो घटनाओं के बीच का समय है अर्थात् उसके निजी समय के अनुसार दोनों घटनाओं के बीच के समय के बराबर होगा। इन दोनों के बीच एक सीमान्त उदाहरण भी है और वह है जब दोनों घटनाएं एक ही प्रकाश दमक के भाग हों—या हम कहें कि एक घटना का देखना ही दूसरी घटना हो। इस स्थिति में दोनों घटनाओं के बीच का अन्तराल शून्य होगा।

इस प्रकार यहाँ तीन सम्भावनाएं हो सकती हैं—(1) यह सम्भव है कि प्रकाश की एक ही किरण दोनों घटनाओं में हो जब उनमें से एक घटना दूसरी घटना का देखना ही हो तब ऐसा होता है। इस स्थिति में दोनों घटनाओं का अन्तराल शून्य होगा। (2) यह हो सकता है कि कोई भी चीज एक घटना से दूसरी घटना तक यात्रा न कर सके क्योंकि ऐसा करने में उसे प्रकाश-वेग से भी अधिक तेज़ जाना पड़ेगा। इस स्थिति में किसी चीज के लिए ऐसे ढंग से जाना सदा ही भौतिक दृष्टि से सम्भव होगा कि उस चीज़ पर किसी प्रेक्षक को दोनों घटनाएँ समक्षणिक मालूम पड़ेंगी। उनका अन्तराल उतना ही होगा जितना उसके अनुमान से दोनों घटनाओं के बीच आकाश में दूरी होगा। ऐसे अन्तराल को 'आकाशमय' कहेंगे। (3) भौतिक दृष्टि से किसी चीज के लिए इतने वेग से चलना सम्भव हो कि वह दोनों घटनाओं पर उपस्थित हो सके। इस अवस्था में

1 अन्तराल की परिभाषा मैं अभी आगे करूँगा।

उनके बीच का अन्तराल उतना ही होगा जितना कि उस चीज़ पर किसी प्रेक्षक के अनुमान से उन दोनों घटनाओं के बीच का समय होगा। ऐसा अन्तराल 'कालमय' कहलाता है।

दो घटनाओं के बीच का अन्तराल उन घटनाओं का एक भौतिक सत्य है जो प्रेक्षक की विशेष परिस्थितियों पर निर्भर नहीं होता।

आपेक्षिकता सिद्धान्त के दो रूप हैं—विशिष्ट और व्यापक। इनमें से पहला साधारणतः ठीक निकट रूप से ही सही है, परन्तु गुरुत्वाकर्षी पदार्थ से बहुत दूरी होने पर काफी यथातथ हो जाता है। जब गुरुत्वाकर्षण की उपेक्षा की जा सके तब विशिष्ट सिद्धान्त लागू होता है और तब किसी प्रेक्षक द्वारा अनुमानित आकाश और काल में उनके बीच की दूरियाँ ज्ञात होने से दो घटनाओं के बीच का अन्तराल परिकलित किया जा सकता है। यदि आकाश में दूरी उस दूरी से अधिक है जितना कि प्रकाश उस समय में चलेगा तो उनका अन्तराल आकाशमय है। तब निम्नलिखित संरचना से दो घटनाओं के बीच का अन्तराल मालूम किया जा सकता है : प्रकाश उस समय में जितनी दूर चलेगा उसके बराबर एक रेखा A B खींचो। एक को केन्द्र मानकर एक वृत्त खींचो जिसकी त्रिज्या उन दो घटनाओं के बीच आकाश में दूरी के बराबर हो। B से A B पर लम्ब B C खींचो, जो वृत्त को C बिन्दु पर काटता है। तब उन दोनों घटनाओं के बीच का अन्तराल B C होगा।

जब दूरी कालमय हो तब भी यही आकृति काम में आएगी : इस स्थिति में A C वह दूरी है जो उस समय में प्रकाश तय करेगा और A B उन दो घटनाओं के बीच आकाश में दूरी के बराबर है। अब उनके बीच की दूरी उस समय के बराबर है जो प्रकाश को B C दूरी तय करने में लगेगा।

यद्यपि A B और A C का मान विभिन्न प्रेक्षकों के लिए भिन्न भिन्न होगा परन्तु B C का मान सब प्रेक्षकों के लिए समान होगा केवल उसमें व्यापक सिद्धान्त के अनुसार आवश्यक संशोधन करने होंगे। पुरानी भौतिकी के दिक् और काल में अलग अलग दो अन्तरालों को यह दिक्-काल में एक अन्तराल के रूप में व्यक्त करता है। अभी तक अन्तराल की यह संकल्पना कुछ रहस्यमय मालूम पड़ती है परन्तु आगे यह क्रम रहस्यमय होती जाती है और वस्तुओं के मूल स्वरूप में इसका आविर्भाव स्पष्ट होता जाता है।

अध्याय 5

दिक्-काल

जिस किसी ने आपेक्षिकता के बारे में कभी भी कुछ सुना है तो वह 'दिक्-काल' शब्द से भी परिचित होगा और जानता होगा कि पहले जिसके लिए हम 'दिक्' और 'काल' शब्दों का प्रयोग करते थे अब उसके लिए 'दिक्-काल' का प्रयोग करते हैं। परन्तु जो लोग गणितज्ञ नहीं हैं उनमें से बहुत कम ही ऐसे होंगे जिन्हें शब्द प्रयोग में इस परिवर्तन का अर्थ स्पष्ट रूप से समझ में आता होगा। आपेक्षिकता सिद्धान्त पर आगे विचार करने से पहले मैं पाठक को यह बता देना चाहता हूँ कि इस नये शब्द 'दिक्-काल' का क्या उपयोग है। दार्शनिक और कल्पनात्मक दृष्टिकोण से आइन्स्टाइन द्वारा प्रतिपादित नई बातों में सम्भवत यह सबसे महत्त्वपूर्ण है।

मान लो कि आप कहना चाहते हैं कोई घटना कब और कहाँ हुई—उदाहरण के लिए वायुपोत पर एक विस्फोट—उसके लिए आपको चार राशियाँ बतानी पड़ेंगी—अक्षांश, देशान्तर, भूमि के ऊपर ऊँचाई और समय। रूढ़िगत दृष्टि से इनमें से पहली तीन आकाश में उसकी स्थिति निर्धारित करती हैं और चौथी काल में स्थिति को व्यक्त करती है। आकाश में स्थिति निर्धारित करने वाली तीन राशियाँ कई विभिन्न ढंग से ली जा सकती हैं। उदाहरण के लिए आप विषुवत वृत्त से गुजरने वाला समतल, ग्रीनविच के याम्योत्तर का समतल और 10वें याम्योत्तर का समतल ले सकते हैं और इनमें से प्रत्येक से वायुपोत की दूरी ले सकते हैं। ये तीनों दूरियाँ डेकार्ट के नाम पर कार्तीय निर्देशांक कहलाती हैं। आप कोई अन्य तीन समतल ले सकते हैं जो परस्पर समकोण पर हों, तब भी ये कार्तीय निर्देशांक ही होंगे। या आप लन्दन से जमीन पर वायुपोत के ठीक नीचे वाले बिन्दु तक की दूरी, इस दूरी की दिशा (उत्तर पूर्व, पश्चिम दक्षिण पश्चिम या जो भी हो) और जमीन से वायुपोत की ऊँचाई ले सकते थे। आकाश में स्थिति निर्धारण की असंख्य विधियाँ हैं और सब समान रूप से वैध हैं और उनमें से किसी एक को लेना केवल सुविधा की बात है।

जब लोग कहते थे कि आकाश की तीन विमाएं हैं तो उनका अभिप्राय था कि आकाश में स्थिति निर्धारण के लिए तीन राशियां अपेक्षित है, परन्तु इन राशियों का चुनाव पूर्णत: यादृच्छिक है।

जहां तक समय का सम्बन्ध है स्थिति बिलकुल भिन्न थी। समय का निश्चित करने में केवल मात्रका का ही स्वेच्छ चुनाव हो सकता था और इस बात का चुनाव हो सकता था कि समय की सगणना कहां से आरम्भ की जाए। आप समय चाहे ग्रीनविच समय से मापें या पैरिस समय से, या न्यूयार्क समय से मापें तो उससे केवल प्रस्थान-समय में अन्तर पड़ेगा। आप समय सेकिंडों में, मिनटों में घंटों में, दिनों में या वर्षों में माप सकते हैं यह मात्रकों का अन्तर था। ये दोनों ही प्रत्यक्ष और उपेक्षणीय थे। जिस प्रकार आकाश में स्थिति निर्धारण की विधि के चुनाव के बारे में स्वतन्त्रता थी, समय के सम्बन्ध में ऐसा नहीं था। और, विशेष रूप से यह माना जाता था कि आकाश में स्थिति निर्धारण की विधि और काल में स्थिति निर्धारण की विधि एक दूसरी से पूर्णत: स्वतन्त्र हो सकती थी। इन कारणों से लोग आकाश और काल को बिलकुल अलग अलग मानते थे।

आपेक्षिकता सिद्धान्त ने इसे बदलकर रख दिया। समय में स्थिति निर्धारण की अब अनेक विधियां हैं जिनमें केवल मात्रका और आरम्भिक बिन्दुओं का ही अन्तर नहीं है। वास्तव में, जैसा कि हम देख चुके हैं, यदि एक सगणना में एक घटना दूसरी से समक्षणिक है तो दूसरी सगणना में वह दूसरी से पूर्वगामी होगी और तीसरी सगणना में वह दूसरी से पश्चगामी हो सकती है। इसके अतिरिक्त आकाश और काल में सगणना एक दूसरी से स्वतन्त्र नहीं रहा हैं। यदि आप आकाश में स्थिति निर्धारण की प्रणाली बदलते हैं तो आप दो घटनाओं के बीच का कालान्तराल भी बदल सकते हैं। इस प्रकार अब आकाश और काल उसी प्रकार स्वतन्त्र नहीं है जिस प्रकार आकाश की तीन विमाएँ स्वतन्त्र नहीं हो सकतीं। किसी घटना की स्थिति को निर्धारित करने के लिए हम अब भी चार राशियों की आवश्यकता है परन्तु पहले की भांति उनमें से एक या बाकी तीन से स्वतन्त्र रूप से नहीं ले सकते।

यह कहना पूर्णत: सत्य नहीं होगा कि अब आकाश और काल के बीच कोई भेद नहीं रह गया है। जैसा कि हम देख चुके हैं अन्तराल कालमय और आकाशमय हो सकते हैं। परन्तु उनका अन्तर जैसा पहले माना गया था उससे भिन्न प्रकार का है। अब कोई ऐसा सार्वत्रिक समय नहीं है जो बिना किसी सन्देह के विश्व के हर भाग के लिए लागू हो सके। विश्व में विभिन्न पिण्डों के लिए अलग अलग कई निजी समय हैं। ये निजी समय ऐसे पिंडों के लिए लगभग एक-जैसे हैं जो तीव्र गति नहीं कर रहे हो, परन्तु एक दूसरे के सापेक्ष स्थिर दो पिण्डों को छोड़कर कभी भी एक-दूसरे के समान नहीं होते।

इस नई परिस्थिति में मिश्र कालिक संसार का चित्र इस प्रकार है माना कि मुझ पर कोई घटना E होती है और उसके साथ-साथ मुझसे प्रकाश की एक दमक सब दिशाओं में फैलती है। यदि किसी पिंड पर दमक का प्रकाश पहुँचने के पश्चात् कोई घटना होती है तो वह निश्चित रूप से घटना E के बाद ही होगी चाहे समय मापन की प्रणाली कोई भी हो। अन्यत्र कहीं भी होनेवाली कोई भी घटना जो मैंने घटना E से पहले देखी हो निश्चय ही घटना E से पहले हुई होगी चाहे समय मापने की प्रणाली कोई भी हो। परन्तु इन दोनों के बीच के समय में होनेवाली किसी घटना के बारे में निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि वह घटना E से पहले हुई या बाद में हुई। अब हम इसका एक विशिष्ट उदाहरण लें माना कि मैं सीरियस पर स्थित किसी व्यक्ति को देख सकता हूँ और वह मुझे देख सकता है। वह जो कुछ भी करता है यदि वह मुझे घटना E के मुझ पर होने से पहले ही दिखाई पड़ती है तो वह निश्चय ही घटना E से पहले हुआ होगा। परन्तु यदि वह कोई कार्य घटना E देखने से पहले करता है वह निश्चय ही E के पश्चात होगा और यदि वह घटना E को देखने से पहले कुछ करता है जो मुझे घटना E के बाद में दिखाई पड़ता है तो वह निश्चित रूप से घटना E से न पहले ही हुआ न बाद में हुआ। चूँकि प्रकाश को सीरियस से पृथ्वी तक आने में कई वर्ष लगते हैं इसलिए इससे दुगुने वर्ष तक का समय सीरियस के लिए घटना E के समकालिक होगा चूँकि ये वर्ष E से पहले या बाद में नहीं होंगे।

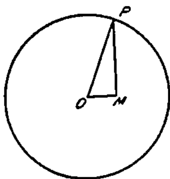
डा० ए०ए० रोब ने अपनी पुस्तक 'आकाश और काल का सिद्धांत' में जो दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है वह दार्शनिक दृष्टि से चाहे मूलभूत हो या नहीं, परन्तु जिस परिस्थिति पर हम विचार कर रहे हैं उसे समझने में सहायक अवश्य है। उनका विचार है कि एक घटना दूसरी घटना से निश्चित रूप से तभी पहले होगी जब इसका दूसरी घटना पर किसी प्रकार का प्रभाव पड़ सके। हम जानते हैं कि प्रभाव किसी केन्द्रीय बिंदु से विभिन्न दरों से फैलते हैं। समाचार पत्र की सहायता से समाचार लन्दन से शुरू होकर 20 मील प्रति घंटा की औसत दर से फैलते हैं—लम्बी दूरी के लिए और भी तेजी से फैलते हैं। समाचारपत्र पढ़ने के बाद कोई व्यक्ति जो कार्य करता है वह स्पष्ट रूप से समाचारपत्र छपने के बाद ही होगा। ध्वनि इससे बहुत तेज चलती है। यह संभव है कि मुख्य मार्गों में बराबर दूरी पर लाउड-स्पीकर लगे हों और इस प्रकार समाचारपत्र एक लाउड-स्पीकर से दूसरे में प्रसारित किए जाएं। परन्तु तार (टेलीग्राफी) इससे भी तेज है और बेतार का तार प्रकाश वेग से चलता है जो सबसे तेज है इससे अधिक तेज और कोई साधन नहीं हो सकता। यदि कोई व्यक्ति बेतार के तार द्वारा समाचार प्राप्त करने के बाद कोई कार्य करता है तो वह कार्य समाचार भेजने के बाद ही होगा। यह

निष्पप समय मापन की पद्धति पर निर्भर नही होगा। लेकिन यदि वह कोई काय उस समय करता है जब समाचार प्रेषित किया जा चुका हो और रास्ते म हो तो उस पर प्रेषित समाचार का कोई प्रभाव नही पडेगा। और उसके काम से समाचार भेजने वाले पर प्रेषण के समय से कुछ दर बाद तक कोई प्रभाव नही पडगा, अर्थात् यदि दो व्यक्ति एक दूसरे से काफी दूरी पर हो तो एक का दूसरे पर कोई प्रभाव नहीं पड सकता जब तक कि कुछ समय न गुजर जाए। उदाहरण के लिए, माना कि सूय पर कोई विशिष्ट घटना होती है। उसके पश्चात पथ्वी पर सोलह मिनट तक का समय ऐसा होगा जिसम पृथ्वी की किसी घटना का सूय की उस विशिष्ट घटना पर या विशिष्ट घटना का पथ्वी की घटना पर कोई प्रभाव नहीं पडेगा। इस प्रकार हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि पथ्वी पर सोलह मिनट का समय न तो सूय की घटना से पहले का है न बाद का है।

आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धात म जो विरोधाभास है वह केवल इसलिए है कि हम उस दष्टिकोण के अभ्यस्त नही हैं और हम चीजो को अवश्यम्भावी मानने की आदत है जबकि हम ऐसा मानने का कोई अधिकार नहीं है। विशेष रूप से लम्बाई की माप के लिए तो यह बात सत्य है। अपने दनिक जीवन मे हम फुटे या अन्य किसी मापक दण्ड से लम्बाई मापते हैं। जब हम फुटे का प्रयोग करते हैं तो वह मापी जाने वाली वस्तु के सापेक्ष स्थिर है। इसके फलस्वरूप हम उससे जो लम्बाई मापते हैं वह उसकी निजी लम्बाई है, अर्थात् उस प्रेक्षक द्वारा अनुमानित लम्बाई जिसकी गति मापी जाने वाली वस्तु के समान है। साधारण जीवन म हमारे सामने ऐसी समस्याएँ नही आती जिनम ऐसी वस्तु की माप लेनी हो जो शाश्वत रूप से गतिमान हो। और यदि कोई समस्या हो भी तो पथ्वी पर दश्य वस्तुओं का पथ्वी के सापेक्ष वेग इतना कम होता है कि उनम आपेक्षिकता सिद्धात के विरोधाभास दष्टिगोचर नहीं होगे। परन्तु ज्योतिष म, या परमाणु-सरचना-सम्बन्धी अन्वेषण म ऐसी समस्याएँ आती हैं जिन्हे इस प्रकार हल नही किया जा सकता। जोशुआ (Joshua) की भाँति सूय की माप लेते समय हम उसे ठहराए नहीं रख सकते, यदि हम उसका आकार मापना है तो हमारे सापेक्ष गतिमान स्थिति म ही उसको मापना पडेगा। इसी प्रकार यदि आप इलक्ट्रान का आकार मापना चाहे तो तीव्र गति की स्थिति म ही मापना होगा क्योकि वह एक क्षण के लिए भी स्थिर नहीं होता। आपेक्षिकता सिद्धान्त म हमारा सम्बन्ध ऐसी ही समस्याओ से होता है। जब-जब फुटे से मापना सम्भव हो तो सब माप एक समान होगी क्योकि उससे हम वस्तु की 'निजी' लम्बाई मापते हैं। परन्तु जब यह विधि सम्भव नहीं होती तब विचित्र बातें देखने म आती हैं विशेष रूप से यदि मापी जाने वाली वस्तु प्रेक्षक के सापेक्ष तीव्र गति कर रही हो।

पिछले अध्याय के अन्त में दिये गए चित्र की सहायता से परिस्थिति समझने में सहायता मिलेगी।

माना कि जिस वस्तु की लम्बाई हम मापना चाहते हैं वह हमारे सापेक्ष तीव्र गति कर रही है और एक सकिण्ड में वह OM दूरी चलती है। प्रकाश एक सकिण्ड में जितनी दूर चलता है उस दूरी की त्रिज्या का एक वृत्त खींचा जिसका केन्द्र O हो। M से एक लम्ब MP खींचो जो वृत्त को P बिन्दु पर काटता है। इसमें OP वह दूरी है जो प्रकाश एक सकिण्ड में तय करेगा। OP और OM का अनुपात प्रकाश के वेग और वस्तु के वेग का अनुपात होगा। OP और MP का अनुपात गति के कारण आभासी लम्बाइयों में होने वाले परिवर्तनों के अनुपात के बराबर है। इसका अभिप्राय यह है कि यदि गति की दिशा में दो बिन्दुओं के बीच की दूरी को प्रेक्षक MP के बराबर मानता है तो वस्तु के साथ साथ गति करने वाला कोई व्यक्ति उन बिन्दुओं की दूरी को (उसी स्केल के अनुसार) OP के बराबर मानेगा। गतिमान वस्तु पर जो दूरियाँ गति की दिशा से समकोण पर होती हैं उन पर गति का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। ये सब बातें अन्योन्य हैं अर्थात् यदि वस्तु के साथ गति करने वाला प्रेक्षक पहले प्रेक्षक के पिण्ड पर लम्बाइयाँ मापे तो वे भी ठीक इसी अनुपात में बदल जाएंगी। जब दो वस्तुएं एक दूसरे के सापेक्ष गतिमान हों तो उन पर स्थित प्रेक्षकों को अपनी दूरियों की तुलना में दूसरी वस्तु की लम्बाइयाँ छोटी मालूम पड़ेंगी। यही फिट्सजेरल्ड आकुंचन है जिसका आविष्कार सबसे पहले माइकलसन मार्ली प्रयोग के परिणामों को समझाने के लिए किया गया था। परन्तु अब इसकी उत्पत्ति स्वयं ही इस बात से हुई है कि दो प्रेक्षकों का समक्षणिकता का अनुमान भिन्न होता है।



जिस विधि से समक्षणिकता आती है वह इस प्रकार है

हम कहते हैं कि किसी पिण्ड पर दो बिन्दुओं की दूरी एक फुट है। इसके लिए आवश्यक है कि हम एक साथ ही फुटे का एक सिरा एक बिन्दु पर और दूसरा सिरा दूसरे बिन्दु पर रख सकें। अब यदि समक्षणिकता के बारे में दो व्यक्तियों का मत भिन्न हो और पिण्ड गतिमान हो तो प्रत्यक्ष है कि उनकी मापों के परिणाम भिन्न होंगे। इस प्रकार समय के बारे में जो कठिनाई है वह दूरी सम्बन्धी कठिनाई में मूलभूत होती है।

इन सभी स्थितियों में OP और MP का अनुपात ही महत्त्वपूर्ण है। जब

कोई पिण्ड प्रकाश के सापेक्ष गति कर रहा हो तो समय, लम्बाइयाँ और द्रव्य मान इसी अनुपात मे बदल जाते हैं। जैसा कि हम देखेंगे यदि OM का मान OP से बहुत कम हो अर्थात् यदि पिण्ड प्रकाश की अपेक्षा बहुत धीमी गति से चल रहा हो तो MP और OP लगभग बराबर होंगे और गति के कारण परिवर्तन बहुत कम होगा। यदि OM लगभग OP के बराबर ही हो अर्थात् यदि पिण्ड लगभग प्रकाश के वेग से जा रहा हो तो MP का मान OP की तुलना म बहुत कम होगा और गति के प्रभाव बहुत अधिक होंगे। तीव्र रूप से गति करते हुए कणों के द्रव्यमानों में आभासी वृद्धि देखी गई है और इसके लिए सही सूत्र भी आइन्स्टाइन के आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धान्त से पहले ही मालूम हो गया था। वास्तव म लारेंटज ने वे सूत्र मालूम कर लिए थे जिनम आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धान्त के समस्त गणितीय तत्व का समावेश है। परन्तु आइन्स्टाइन ने ही यह बताया कि सारी परिस्थिति वैसी ही है जो हमारी प्रत्याशा के अनुसार होना चाहिए थी वह विचित्र प्रायोगिक परिणामों की व्याख्या के लिए कामचलाऊ साधन मात्र नहीं है। फिर भी यह नहीं भुला देना चाहिए कि प्रयोगों के परिणाम ही उस समस्त सिद्धान्त के मूल उद्देश्य थे और वे ही आइन्स्टाइन के सिद्धान्तों के विकट तर्कपूर्ण पुनर्गठन का आधार रहे हैं।

अब हम उन बातों को पुनः दुहरा दें जिनके कारण आकाश या दिक् और काल के लिए दिक्-काल का प्रयोग आवश्यक हो गया था। पहले दिक् और काल को अलग अलग रखने का आधार यह था कि यदि हम कहें कि दूर के दो स्थानों पर दो घटनाएं एक ही समय पर हुई तो इसमे कोई संशय नहीं था। इसके फल स्वरूप यह माना गया था कि किसी एक क्षण ब्रह्माण्ड की स्थूल रूपरेखा पूर्णतः स्थानिक रूप से बताई जा सकती है। परन्तु अब चूँकि समकालिकता अलग अलग प्रेक्षकों के लिए अलग अलग होगी इसलिए यह सम्भव नहीं है। एक प्रेक्षक की दृष्टि में किसी क्षण विश्व की जो स्थिति होगी वह दूसरे प्रेक्षक की दृष्टि म ऐसी घटनाओं का एक क्रम होगी जो विभिन्न समय पर हो रही हैं और जिनका पारस्परिक सम्बन्ध न केवल स्थानिक ही होगा बल्कि कालिक भी होगा। इन्हीं कारणों से हमारा सम्बन्ध घटनाओं से होता है पिण्डों से नहीं। पुराने सिद्धान्त के अनुसार हम एक क्षण कई पिण्डों पर एक साथ विचार कर सकते थे और चूँकि उन सबके लिए एक ही समय लागू होता था इसलिए समय की उपेक्षा की जा सकती थी परन्तु अब यदि हम भौतिक घटनाओं का वस्तुनिष्ठ वर्णन करना चाहें तो ऐसा नहीं कर सकते हैं। यदि हम किसी पिण्ड पर विचार करना चाहें तो हम उसकी तिथि भी बतानी होगी, इस प्रकार से यह एक 'घटना' होगी अर्थात् किसी निश्चित समय पर होने वाली कोई चीज होगी। यदि हम एक प्रेक्षक की पद्धति से किसी घटना का समय और स्थान मालूम कर ज्ञात हो तो हम दूसरे प्रेक्षक के अनुसार उसका स्थान और समय

कोई पिण्ड प्रेक्षक के सापेक्ष गति कर रहा हो तो समय, लम्बाइयाँ और द्रव्य मान इसी अनुपात में बदल जाते हैं। जैसा कि हम देखेंगे यदि OM का मान OP से बहुत कम हो अर्थात् यदि पिण्ड प्रकाश की अपेक्षा बहुत धीमी गति से चल रहा हो तो MP और OP लगभग बराबर होंगे और गति के कारण परिवर्तन बहुत कम होगा। यदि OM लगभग OP के बराबर ही हो, अर्थात् यदि पिण्ड लगभग प्रकाश के वेग से जा रहा हो तो MP का मान OP की तुलना में बहुत कम होगा और गति के प्रभाव बहुत अधिक होंगे। तीव्र रूप से गति करते हुए कणों के द्रव्यमानों में आभासी वृद्धि देखी गई है और इसके लिए सही सूत्र भी आइन्स्टाइन के आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धान्त से पहले ही मालूम हो गया था। वास्तव में लोरेन्टज ने वे सूत्र मालूम कर लिए थे जिनमें आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धान्त के समस्त गणितीय तत्व का समावेश है। परन्तु आइन्स्टाइन ने ही यह बताया कि सारी परिस्थिति वैसी ही है जो हमारी प्रत्याशा के अनुसार होना चाहिए थी, वह विचित्र प्रायोगिक परिणामों की व्याख्या के लिए कामचलाऊ साधन मात्र नहीं है। फिर भी यह नहीं भुला देना चाहिए कि प्रयोगों के परिणाम ही उस समस्त सिद्धान्त के मूल उद्देश्य थे और वे ही आइन्स्टाइन के सिद्धान्तों के विरुद्ध तर्कपूर्ण पुनर्गठन का आधार रहे हैं।

अब हम उन बातों को पुनः दुहरा दें जिनके कारण आकाश या दिक और काल के लिए दिक-काल का प्रयोग आवश्यक हो गया था। पहले दिक और काल को अलग अलग रखने का आधार यह था कि यदि हम कहें कि दूर के दो स्थानों पर दो घटनाएँ एक ही समय पर हुई तो इसमें कोई संशय नहीं था। इसके फलस्वरूप यह माना गया था कि किसी एक क्षण ब्रह्माण्ड की स्थूल रूपरेखा पूर्णतः स्थानिक रूप से बनाई जा सकती है। परन्तु अब चूँकि समकालिकता अलग अलग प्रेक्षकों के लिए अलग अलग होगी इसलिए यह सम्भव नहीं है। एक प्रेक्षक की दृष्टि में किसी क्षण विश्व की जो स्थिति होगी वह दूसरे प्रेक्षक की दृष्टि में ऐसी घटनाओं का एक क्रम होगी जो विभिन्न समय पर हो रही हैं और जिनका पारस्परिक सम्बन्ध न केवल स्थानिक ही होगा बल्कि कालिक भी होगा। इन्हीं कारणों से हमारा सम्बन्ध घटनाओं से होता है, पिण्डों से नहीं। पुराने सिद्धान्त के अनुसार हम एक क्षण कई पिण्डों पर एक साथ विचार कर सकते थे और चूँकि उन सबके लिए एक ही समय लागू होता था इसलिए समय की उपेक्षा की जा सकती थी परन्तु अब यदि हम भौतिक घटनाओं का वस्तुनिष्ठ वर्णन करना चाहें तो ऐसा नहीं कर सकते हैं। यदि हम किसी पिण्ड पर विचार करना चाहें तो हमें उसकी तिथि भी बतानी होगी, इस प्रकार से यह एक 'घटना' होगी अर्थात् किसी निश्चित समय पर होने वाली कोई चीज होगी। यदि हमें एक प्रेक्षक की पद्धति से किसी घटना का समय और स्थान ज्ञात हो तो हम दूसरे प्रेक्षक के अनुसार उसका स्थान और समय मालूम कर

सकते हैं। परंतु हम समय और स्थान दोनों ही मालूम होने चाहिएँ क्योंकि हम दूसरे प्रेक्षक के लिए घटना का स्थान पहले प्रेक्षक के समय पर नहीं दता सकते। यदि कई प्रेक्षक एक दूसरे के सापेक्ष स्थिर न हो तो उनके लिए एक ही समय का कोई अर्थ नहीं होगा। केवल आकाश में किसी पिण्ड की स्थिति को निर्धारित करने के लिए ही हम चार मापों की आवश्यकता नहीं होगी बल्कि दिक काल में किसी घटना की स्थिति निर्धारित करने के लिए भी चार मापों की आवश्यकता होगी। दिक और काल के स्थान पर दिक्-काल रखने का अभिप्राय सार रूप में यही है।

अध्याय 6

आपेक्षिकता का विशिष्ट सिद्धान्त

आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धांत की उत्पत्ति विद्युत् चुम्बकत्व के तथ्यों की व्याख्या के फलस्वरूप हुई। इसका इतिहास कुछ विचित्र ही है। अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ तक विद्युत् का सिद्धांत पूर्ण रूप से न्यूटनीय ढंग के तर्कों पर ही निर्भर था। दो विद्युत् आवेश यदि वे भिन्न प्रकार के हों, एक धन और एक ऋण, तो एक दूसरे को आकर्षित करते हैं परन्तु यदि वे एक ही प्रकार के हों तो एक-दूसरे को प्रतिकर्षित करते हैं। प्रत्येक स्थिति में बल, गुरुत्वाकर्षण बल की भाँति उनके बीच की दूरी के प्रतिलोमानुपाती होता है। फैराडे से पहले तक यह बल दूर से क्रिया करता हुआ माना जाता था। उसके बाद फैराडे ने कई असाधारण प्रयोगों की सहायता से माध्यम के प्रभाव को सिद्ध किया। फैराडे गणितज्ञ नहीं था। क्लार्क मैक्सवेल ने सबसे पहले फैराडे के प्रयोगों में निकले परिणामों को गणितीय रूप दिया। इसके अतिरिक्त फैराडे ने कारण देते हुए यह भी बताया कि प्रकाश एक विद्युत् चुम्बकीय घटना है अर्थात् वह विद्युत् चुम्बकीय तरंगों के रूप में होता है। इसलिए विद्युत् चुम्बकीय तरंगों के संचार के लिए ईथर को माध्यम माना जा सकता था जो बहुत समय से प्रकाश-संचार के लिए माना गया था। मैक्सवेल के सिद्धांत की सत्यता विद्युत् चुम्बकीय तरंगों का निर्माण करते समय हर्ट्ज़ के प्रयोगों में सिद्ध हुई। इन प्रयोगों से बेतार के तार का आधार भी मिला। हमारी अब तक की प्रगति सफलतापूर्ण है इसमें कभी प्रयोग और कभी सिद्धांत सर्वोपरि रहा है। हर्ट्ज़ के प्रयोगों के समय ईथर की धारणा सुस्थापित मालूम पड़ती थी। इसकी धारणा उतनी ही दृढ़ थी जितनी अन्य कोई वैज्ञानिक परिकल्पना जिसका सीधा सत्यापन सम्भव न हो। परन्तु कुछ ऐसे तत्त्व खोजे गए जिनसे धीरे-धीरे सारी व्यवस्था बदल गई।

हर्ट्ज़ से जिस आन्दोलन का उदय हुआ वह हर वस्तु में सातत्य मानना ही था। ईथर में सातत्य था उसमें तरंगें भी सतत थीं और यह अनुमान था

कि पदार्थ की सरचना भी ईथर में किसी प्रकार सतत होगी। परन्तु तभी पदार्थ की परमाणवीय सरचना की खोज हुई और स्वय परमाणुओं की विविक्त (discrete) सरचना का पता चला। परमाणु को इलेक्ट्रॉन, प्रोटान तथा न्यूट्रान का बना माना गया था। प्रोटान में धन विद्युत् का निश्चित आवेश होता है और न्यूट्रान में कोई आवेश नहीं होता। (यह केवल परम्परा की बात है कि इलेक्ट्रान के आवेश को ऋण और प्रोटॉन के आवेश को धन मानते हैं, हम चाहे तो इससे विपरीत भी मान सकते हैं)। ऐसा मालूम पड़ता था कि विद्युत केवल इलेक्ट्रॉन और प्रोटॉन के आवेश के रूप में होती है, सभी इलेक्ट्रानों पर समान ऋण आवेश होता है और सभी प्रोटानों पर भी ठीक उतना ही किन्तु विपरीत धन आवेश होता है। बाद में परमाणु से छोटे अन्य कणों की खोज हुई, उनमें से अधिकांश को मेसान या हाइपेरान कहते हैं। सभी प्रोटानों का भार ठीक बराबर होता है वे इलेक्ट्रानों से लगभग अठारह सौ गुने भारी होते हैं। सभी न्यूट्रानों का भार भी बराबर होता है व प्रोटान से थोड़े भारी होते है। मेसान कई प्रकार के होते हैं उनका भार इलेक्ट्रॉन से अधिक किन्तु प्रोटानों से कम होता है। हाइपरान प्रोटान और न्यूट्रानों से भी भारी होते है।

कुछ कणों में विद्युत् आवेश होता है कुछ में नहीं होता। यह देखा गया है कि जितने भी धन आवेशित कण होते हैं उन सबका आवेश प्रोटान के बराबर होता है और सभी प्रकार के ऋण आवेशित कणों में ठीक इलेक्ट्रॉन के बराबर आवेश होता है हालांकि उनके दूसरे गुण बिलकुल भिन्न होते। एक कण गड़बड़ी पैदा करने वाला है यह कण और सब प्रकार से इलेक्ट्रान जैसा है केवल उसका आवेश ऋण की बजाय धन है। इसे पाजिट्रान कहते हैं। हाल ही में एक और कण का पता चला है जो सब प्रकार से प्रोट्रान जैसा है केवल उसका आवेश ऋण है उसे प्रति प्रोटान कहते हैं।

पदार्थ की विविक्त सरचना-सम्बन्धी खोज के साथ-साथ तथाकथित क्वाटम सम्बन्धी अन्य घटनाओं की खोज भी हुई उदाहरण के लिए परमाणु स्पेक्ट्रम में दीप्त रेखाएँ। ऐसा मालूम पड़ता है कि यदि परिशुद्धता के साथ मापा जाए तो सभी प्राकृतिक प्रक्रमों में एक प्रकार का मूल असातत्य दिखाई पड़ेगा।

इस प्रकार भौतिकी में नये तथ्यों का समावेश हुआ और उसमें नई नई समस्याएं सामने आई। यद्यपि क्वाटम सिद्धात अपने लगभग इसी आधुनिक रूप में पिछले 30 वर्ष से चला आ रहा है और आपेक्षिकता का विशिष्ट सिद्धात पचास वर्ष से परन्तु इन दोनों में परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने की दिशा में उल्लेखनीय प्रगति केवल हाल ही में हुई है। क्वाटम सिद्धात में आधुनिक विकास में वह आपेक्षिकता के अधिक सगत हो गया है और इस उन्नति के

फलस्वरूप उप परमाणवीय कणों को समझने में बड़ी सहायता मिली है फिर भी कुछ गम्भीर समस्याएँ बाकी हैं।

क्वांटम सिद्धांत को छोड़कर स्वयं आपेक्षिकता सिद्धांत में जिन समस्याओं का हल निकला था उसका एक विशिष्ट उदाहरण माइकल्सन मोर्ली प्रयोग है। यदि मैक्सवेल के विद्युत् चुम्बकत्व के सिद्धांत को सत्य मानें तो ईथर में से होकर गति करने पर कुछ द्रष्टव्य प्रभाव होने चाहिए थे, पर वास्तव में कोई ऐसा प्रभाव दिखाई नहीं पड़ा। इसके अतिरिक्त प्रेक्षणों से यह भी पता चला कि यदि कोई पिण्ड तीव्र रूप में गति कर रहा हो तो उसका द्रव्यमान अधिक मालूम पड़ता है। द्रव्यमान में यह वृद्धि पिछले अध्याय की आकृति के OP और MP के अनुपात में होगी। इस प्रकार के तथ्य इकट्ठे होते गए और धीरे धीरे एक ऐसे सिद्धांत की आवश्यकता अनुभव होने लगी जिससे उन सबको समझाया जा सके।

मैक्सवेल के सिद्धान्त ने कुछ समीकरणों के रूप ले लिए जिन्हें मैक्सवेल समीकरण कहते हैं। पिछली शताब्दी में भौतिकी में जो भी क्रांतियाँ आई हैं उनमें भी ये समीकरण दृढ़ रूप से बने रहे, वास्तव में उनका महत्त्व और उनकी निश्चितता लगातार बढ़ती रही है—उनके बारे में स्वयं मैक्सवेल की दलीलें इतनी डावाडोल थीं कि उसके परिणामों की सत्यता केवल सहज ज्ञान पर आधारित थी। यह तो सही है कि ये समीकरण पार्थिव प्रयोगशालाओं में किये गए प्रयोगों से प्राप्त हुए थे, परन्तु उनमें एक अन्तर्निहित धारणा यह थी कि ईथर में पृथ्वी की गति की उपेक्षा की जा सकती है। कुछ स्थितियों में, उदाहरण के लिए माइकल्सन मोर्ली प्रयोग में यह सम्भव नहीं होना चाहिए था, क्योंकि ऐसा मानने में कुछ त्रुटि अवश्य होनी चाहिए थी परन्तु यह हमेशा ही सम्भव सिद्ध हुआ। भौतिकीविदों के सामने एक अजीब कठिनाई यह थी कि मैक्सवेल के समीकरण जितने सही होने चाहिएँ थे उनसे कुछ अधिक ही सही थे। एक इसी प्रकार की समस्या की व्याख्या गैलीलियो ने आधुनिक भौतिकी के आरम्भ में ही की थी। अधिकांश लोग समझते हैं कि यदि आप किसी भार को गिराएँ तो वह ऊर्ध्वाधर दिशा में गिरेगा। परन्तु यदि आप यह प्रयोग किसी गतिमान जहाज के कमरे में करें तो वह भार कमरे के सापेक्ष इस ढंग से गिरता है मानो जहाज स्थिर हो। उदाहरण के लिए यदि भार को छत के ठीक मध्य से गिराया जाए तो वह फर्श पर ठीक मध्य में आकर गिरेगा। इसका अर्थ यह है कि तट पर किसी प्रेक्षक की दृष्टि में वह ऊर्ध्वाधर नहीं गिरता क्योंकि उसमें जहाज की गति भी सम्मिलित है। जब तक जहाज की गति एक समान रहती है सब चीजें इस ढंग से होती हैं मानो जहाज स्थिर हो। गैलीलियो ने समझाया कि ऐसा क्यों होना है यद्यपि इससे अरस्तू के शिष्य रुष्ट हो गए थे। गैलीलियो पर आधारित प्रचलित

भौतिकी के अनुसार सीधी रेखा में एक समान गति का कोई दर्शनीय प्रभाव नहीं पड़ता। उस समय में इस प्रकार की आपेक्षिकता उतनी ही विचित्र थी जितनी आइन्स्टाइन की आपेक्षिकता हमें लगती है। आइन्स्टाइन ने अपने आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धान्त में यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि विद्युत् चुम्बकीय घटना पर ईथर में से होकर गुजरने का—यदि ईथर का वास्तव में अस्तित्व हो तो—कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यह तो और भी विकट समस्या थी जो गेलीलियो के सिद्धान्तों के आधार पर नहीं समझाई जा सकती थी।

इस समस्या के हल में सबसे कठिन बात समय के बारे में थी। यह आवश्यक था कि पुराने एवं सार्वत्रिक समय का बहिष्कार करना होगा और उसके बजाय निजी समय की धारणा रखनी होगी जिस पर हम पहले ही विचार कर चुके हैं। विद्युत चुम्बकीय घटना के मात्रात्मक नियमों को मैक्सवेल-समीकरणों के रूप में व्यक्त किया जाता है और ये समीकरण प्रत्येक प्रेक्षक के लिए सही होते हैं चाहे उसकी गति जो भी हो। यदि दो प्रेक्षक एक दूसरे के सापेक्ष गतिमान हों और फिर भी एक ही प्रकार के समीकरण दोनों के लिए सही हों तो एक प्रेक्षक द्वारा प्रयुक्त मापकों और दूसरे प्रेक्षक के मापकों में अन्तर मालूम करना एक सीधी गणितीय समस्या है। इस समस्या का समाधान है 'लोरेंटज रूपान्तरण' जो सूत्र के रूप में लारेंटज ने मालूम किए थे परन्तु आइन्स्टाइन ने उनकी व्याख्या की और उन्हें बोधगम्य बनाया। यदि हम दूरियों और समयावधियों के बारे में एक प्रेक्षक के आँकड़े जानते हैं और उसके सापेक्ष किसी दूसरे प्रेक्षक की गति ज्ञात है तो दूरियों और समयावधियों के लिए उसके अनुमान लोरेंटज रूपान्तरण से मालूम कर सकते हैं। मानो कि आप एक रेलगाड़ी में हैं जो पूरब की ओर जाने वाली है। जिस स्टेशन से आप चले मानो कि उसकी घड़ी से आप समय से यात्रा कर रहे हैं। मानो कि इस क्षण आपके आरम्भ बिन्दु में पटरी पर स्थित व्यक्तियों के अनुमान से x दूरी पर कोई घटना होती है। उदाहरण के लिए पटरियों पर बिजली गिरती है। आप लगातार एक समान वेग v में जा रहे हैं। अब प्रश्न यह है कि आपके अनुमान से यह घटना आपसे कितनी दूरी पर हुई और आपकी घड़ी के अनुसार जब आप चले थे उससे कितनी देर बाद हुई? यहाँ हम यह मानते हैं कि आपकी घड़ी रेलगाड़ी पर स्थित प्रेक्षक की दृष्टि से सही है।

इस समस्या का हमारा जो भी हल हो उससे कुछ शर्तें पूरी करनी होंगी। सबसे पहले तो इससे यह परिणाम निकलना चाहिए कि प्रकाश का वेग सभी प्रेक्षकों के लिए समान होना चाहिए चाहे उनकी गति जो भी हो। फिर इससे यह भी होना चाहिए कि विभिन्न प्रेक्षकों के लिए भौतिक घटना—विशेष रूप से

विद्युत्-चुम्बकत्व—पर एक ही नियम लागू होने चाहिए चाहे उन प्रेक्षकों के समय और दूरी के मापकों पर गति का जो भी प्रभाव पड़ता हो। और उन [illegible] मापों पर ऐसे सभी प्रभाव अन्योन्य (reciprocal) होने चाहिए, अर्थात् यदि आप रेलगाडी में हैं और आपकी गति से रेलगाडी के बाहर की मापों पर प्रभाव पडता है, तो रेलगाडी के बाहर वाले व्यक्तियों के लिए गाडी के अन्दर की मापों पर भी उसी प्रकार प्रभाव पडना चाहिए। समस्या का हल मालूम करने के लिए ये प्रतिबन्ध पर्याप्त हैं परन्तु समस्या का हल प्राप्त करने की विधि में बहुत अधिक गणित की आवश्यकता होगी जिसे यहाँ देना सम्भव नहीं होगा।

इस विषय पर सामान्य रूप से विचार करने से पहले हम एक उदाहरण लेंगे। माना कि आप एक रेलगाडी में हैं जो सीधी पटरियों पर है और आप पूरब की ओर प्रकाश-वेग के 3/5 गुने वेग से जा रहे हैं। माना कि आप अपनी रेलगाडी की लम्बाई मापते हैं और यह 100 गज आती है। माना कि जो लोग आपको गुजरते समय एक क्षण देखते हैं वे दक्ष वैज्ञानिक विधियों से ऐसे प्रेक्षण लेने में सफल हो जाते हैं जिससे आपकी रेलगाडी की लम्बाई मालूम हो जाती है। यदि वे सब काम ठीक ठीक कर लेते हैं तो उनकी माप से रेलगाडी की लम्बाई 80 गज आएगी। रेलगाडी की दिशा में उन्हें हर चीज की लम्बाई उस लम्बाई के मुकाबले छोटी मालूम होगी जितनी आपके अनुमान से होनी चाहिए। भोजन की प्लेटें, जिन्हें आप गोल देख रहे हैं बाहर वालों को अण्डाकार मालूम पड़ेंगी। रेलगाडी की चौडाई की जो लम्बाई है, गाडी की गति की दिशा में वह उसकी 4/5 रह जाएगी। और यह सब-कुछ अन्योन्य होगा। माना कि आप खिडकी से बाहर किसी व्यक्ति को मत्स्य-यष्टी (fishing rod) ले जाते हुए देखते हैं जो स्वयं उसकी माप से 15 फुट लम्बी है। यदि वह इसे खडी पकडे हुए है तो आपको उसकी लम्बाई उतनी ही लगेगी जितनी उस व्यक्ति को और अगर वह उस पटरी की दिशा के लम्बवत् क्षतिज स्थिति में पकडे हुए है तो भी आपको उसकी लम्बाई उतनी ही मालूम पडेगी जितनी बाहर वाले व्यक्ति को। परन्तु यदि वह उस पटरी की दिशा में ही पकडे हुए है तो वह आपको केवल बारह फुट लम्बी मालूम पडेगी। गति की दिशा में सभी लम्बाइयाँ 20 प्रतिशत घट जाती हैं यह बात दोनों के लिए लागू होगा—जो बाहर से रेलगाडी में देखते हैं और जो गाडी के अन्दर से बाहर की ओर देखते हैं।

'परन्तु समय के सम्बन्ध में पडने वाला प्रभाव और भी विचित्र है।' यह विषय एडिंगटन की पुस्तक आकाश काल और गुरुत्व (Space, Time and Gravitation) में पूर्णत सुगम और स्पष्ट रूप से समझाया गया है। वह एक ऐसे उड़ाके (aviator) की कल्पना करता है जो पृथ्वी के सापेक्ष

भौतिकी के अनुसार सीधी रेखा म एक समान गति का कोई दर्शनीय प्रभाव नहीं पडता। उस समय म इस प्रकार की आपक्षिकता उतनी ही विचित्र थी जितनी आइस्टाइन की आपक्षिकता हम लगती है। आइन्स्टाइन न अपन *आपक्षिकता के विशिष्ट सिद्धात म यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि* विद्युत् चुम्बकीय घटना पर ईथर म स होकर गुजरन का—यदि ईथर का वास्तव म अस्तित्व हो तो—कोइ प्रभाव नहा पडता। यह तो और भी विकट समस्या थी जो गेलीलियो के सिद्धान्तो के आधार पर नही समझाई जा सकती थी।

इस समस्या के हल म सबसे कठिन बात समय के बारे म थी। यह आवश्यक था कि पुराने एक सावत्रिक समय का बहिष्कार करना होगा और उसके बजाय निजी समय की धारणा रखनी होगी जिस पर हम पहल ही विचार कर चुके हैं। विद्युत चुम्बकीय घटना के मात्रात्मक नियमो को मक्सवल-समीकरणो के रूप म व्यक्त किया जाता है और य समीकरण प्रत्येक प्रे क्षक क लिए सही होते हैं चाह उसकी गति जो भी हो। यदि दो प्रेक्षक एक दूसरे के सापक्ष गतिमान हो और फिर भी एक ही प्रकार के समीकरण दोनो के लिए सही हो तो एक प्रेक्षक द्वारा प्रयुक्त मापको और दूसर प्रेक्षक *के मापको मे अतर मालूम करना एक सीधी गणितीय समस्या है।* इस समस्या का समाधान है लोरेंटज रूपातरण' जो सूत्र के रूप म लारेंटज ने मालूम किए थे परतु आइन्स्टाइन ने उनकी व्याख्या की और उन्ह बोधगम्य बनाया। यदि हम दूरियो और समयावधियो के बारे म एक प्रेक्षक के आँकडे ज्ञात हैं और उसके सापक्ष किसी दूसरे प्रेक्षक की गति ज्ञात है तो दूरियो और समयावधियो के लिए उसके अनुमान लोरेंटज रूपातरण से मालूम कर सकते हैं। माना कि आप एक रेलगाडी म हैं जो पूरब की ओर जान वाली है। जिस स्टेशन से आप चले माना कि उसकी घडी स आप समय से यात्रा कर रहे हैं। माना कि इस क्षण आपके आरम्भ बिंदु म पटरी पर स्थित व्यक्तियों के अनुमान स x दूरी पर कोई घटना होती है। उदाहरण क *लिए पटरियों पर बिजली गिरती है।* आप लगातार एक समान वेग v स जा रह हैं। अब प्रश्न यह है कि आपके अनुमान स यह घटना आपस कितनी दूरी पर हुई और आपकी घडी क अनुसार जब आप चल थ उसम कितनी देर बाद हुई? यहाँ हम यह मानते हैं कि आपकी घडी रेलगाडी पर स्थित प्रेक्षक की दृष्टि से सही है।

इस समस्या का हमारा जो भी हल हो उसे कुछ शर्तें पूरी करनी होगी। सबस पहले तो इसस यह परिणाम निकलना चाहिए कि प्रकाश का वेग सभी प्रेक्षको के लिए समान होना चाहिए चाह उनकी गति जो भी हो। फिर इसम यह भी होना चाहिए कि विभिन्न प्रेक्षको के लिए भौतिक घटना—विशेष रूप स

विद्युत् चुम्बकत्व—पर एक ही नियम लागू होने चाहिए चाहे उन प्रेक्षकों के समय और दूरी के मापकों पर गति का जो भी प्रभाव पड़ता हो। और उन दूसरे के मापों पर एसे सभी प्रभाव अन्योन्य (reciprocal) होने चाहिए अर्थात् यदि आप रेलगाड़ी में हैं और आपकी गति से रेलगाड़ी के बाहर की मापों पर प्रभाव पड़ता है तो रेलगाड़ी के बाहर वाले व्यक्तियों के लिए गाड़ी के अन्दर की मापों पर भी उसी प्रकार प्रभाव पड़ना चाहिए। समस्या का हल मालूम करने के लिए ये प्रतिबन्ध पर्याप्त हैं परन्तु समस्या का हल प्राप्त करने की विधि में बहुत अधिक गणित की आवश्यकता होगी जिसे यहाँ देना सम्भव नहीं होगा।

इस विषय पर सामान्य रूप से विचार करने से पहले हम एक उदाहरण लेंगे। माना कि आप एक रेलगाड़ी में हैं जो सीधी पटरियों पर है और आप पूरब की ओर प्रकाश-वेग के 3/5 गुने वेग से जा रहे हैं। माना कि आप अपनी रेलगाड़ी की लम्बाई मापते हैं और यह 100 गज आती है। माना कि जो लोग आपको गुजरते समय एक झलक देखते हैं वे दक्ष वैज्ञानिक विधियों से एसे प्रेक्षण लेने में सफल हो जाते हैं जिससे आपकी रेलगाड़ी की लम्बाई मालूम हो जाती है। यदि वे सब काम ठीक ठीक कर लेते हैं तो उनकी माप से रेलगाड़ी की लम्बाई 80 गज आएगी। रेलगाड़ी की दिशा में उन्हें हर चीज की लम्बाई उस लम्बाई के मुकाबले छोटी मालूम होगी जितनी आपके अनुमान से होनी चाहिए। भोजन की प्लेटें, जिन्हें आप गोल देख रहे हैं बाहर वालों को अण्डाकार मालूम पड़ेंगी। रेलगाड़ी की चौड़ाई की जो लम्बाई है, गाड़ी की गति की दिशा में वह उसकी 4/5 रह जाएगी। और यह सब-कुछ अन्योन्य होगा। माना कि आप खिड़की से बाहर किसी व्यक्ति को मत्स्य वंसी (fishing rod) लिए जाते हुए देखते हैं जो स्वयं उसकी माप से 15 फुट लम्बी है। यदि वह उसे खड़ी पकड़े हुए है तो आपको उसकी लम्बाई उतनी ही लगेगी जितनी उस व्यक्ति को और अगर वह उसे पटरी की दिशा के लम्बवत् क्षतिज स्थिति में पकड़े हुए है तो भी आपको उसकी लम्बाई उतनी ही मालूम पड़ेगी जितनी बाहर वाले व्यक्ति को। परन्तु यदि वह उस पटरी की दिशा में ही पकड़े हुए है तो वह आपको केवल बारह फुट लम्बी मालूम पड़ेगी। गति की दिशा में सभी लम्बाइयाँ 20 प्रतिशत घट जाती हैं, यह बात दोनों के लिए लागू होगी—जो बाहर से रेलगाड़ी में देखते हैं और जो गाड़ी के अन्दर से बाहर की ओर देखते हैं।

'परन्तु समय के सम्बन्ध में पड़ने वाला प्रभाव और भी विचित्र है। यह विषय एडिंगटन की पुस्तक आकाश काल और गुरुत्व (Space, Time and Gravitation) में पूर्णतः सुगम और स्पष्ट रूप से समझाया गया है। वह एक एसे उड़ाके (aviator) की कल्पना करता है जो पृथ्वी के सापेक्ष

161 000 मील प्रति सेकिण्ड की चाल से यात्रा कर रहा है। वह आगे लिखता है

"यदि हम उस उडाके को ध्यानपूर्वक देखें तो हमारा अनुमान होगा कि वह अपने कार्यों म अत्यधिक सुस्त है। उसके साथ गति करते हुए यान म होने वाली घटनाए भी उतनी ही मन्द मालूम पडेंगी—*मानो समय रुक-सा गया हो*। उसका सिगार हमारे सिगार से दुगुनी देर चलता है। मैंने यहाँ जान बूझकर 'अनुमान' शब्द का प्रयोग किया है वास्तव म समय का अत्यधिक मन्दन मालूम पडेगा, परन्तु यह तो आसानी से समझ म आ जाता है क्योकि वह उडाका हमसे तेजी से दूर होता जा रहा है और प्रकाश सकेतो को हमारे पास तक पहुँचने मे अधिकाधिक समय लगता जाएगा। हमने जिस मामूली मन्दन का उल्लेख किया है वह प्रकाश सचार म लगे समय की छूट देने के बाद प्राप्त होता है। यहा भी यह अन्योन्य होगा क्योकि उडाके के अनुसार हम 161 000 मील प्रति सेकिण्ड के वेग से जा रहे होगे और सब प्रकार की छूट देने के बाद उसे लगेगा कि हम बहुत ही सुस्त हैं। उसके अनुमान से हमारे सिगार उसके अपने सिगार से दुगुना चलेंगे।

कैसी स्पर्धा की बात है! प्रत्येक व्यक्ति समझता है कि दूसरे का सिगार उसके अपने सिगार से दुगुनी देर चलता है। फिर भी उसे इतना तो सन्तोष होगा ही कि दूसरे व्यक्ति का दन्त चिकित्सक के यहाँ दुगुना समय लगता है।

समय का प्रश्न कुछ जटिल है क्योकि जिन घटनाओ को एक व्यक्ति सम क्षणिक समझता है दूसरा व्यक्ति समझता है कि उनके बीच कुछ समय का अन्तर था। यह स्पष्ट करने के लिए कि समय पर प्रभाव किस प्रकार पडता है मैं पुन पूरब को जाने वाली उस रेलगाडी पर विचार करूगा जिसका वेग प्रकाश-वेग का 3/5 है। निदेशन के लिए मैं यह मानूगा कि पृथ्वी बहुत बडी और चपटी है न कि छोटी और गोल।

यदि हम पृथ्वी के किसी निश्चित स्थान पर होने वाली घटनाओ पर विचार करें और यह जानना चाहे कि वे किसी यात्री को यात्रा आरम्भ करने के समय से कितनी देर बाद मालूम होगी तो इसका उत्तर होगा कि उसमे वह मन्दन होगा जिसका उल्लेख एडिंगटन ने किया है। यहाँ उसके अनुसार यह निष्कर्ष निकलेगा कि स्थिर व्यक्ति के जीवन का एक घण्टा रेलगाडी म बैठ कर देखने वाले व्यक्ति का सवा घटा लगेगा। विलोमत रेलगाडी म बैठे व्यक्ति के जीवन का एक घटा रेलगाडी से बाहर स्थित किसी व्यक्ति की दृष्टि म सवा घटा होगा। प्रत्येक को दूसरे व्यक्ति के जीवन म गुजरा समय सवा गुना लगता है। यह अनुपात जितना लम्बाई के बारे म है उतना ही समय के बारे म है।

परन्तु जब हम पृथ्वी के एक ही स्थान पर होने वाली दो घटनाओ की तुलना करने के बजाय ऐसी घटनाएँ लेते हैं जो एक-दूसरे से बहुत दूरी पर

हो तो परिणाम और भी विचित्र होंगे। अब हम रेल की पटरी की उन सब घटनाओं को लेंगे जो पृथ्वी पर स्थित किसी स्थिर प्रेक्षक की दृष्टि में एक ही समय पर घटी हों। माना हम वह क्षण लेते हैं जब रेलगाड़ी वाला प्रेक्षक स्थिर व्यक्ति के पास से गुजरता है। इन घटनाओं में से जो आगे आने वाली पटरी पर होंगी वे रेल के यात्री को पहले ही घटित मालूम पड़ेंगी और वे घटनाएँ, जो रेलगाड़ी के पीछे होती हैं, यात्री के लिए भविष्य की घटनाएँ होंगी। जब मैं कहता हूँ कि आगे की दिशा की घटनाएँ पूर्वघटित मालूम पड़ेंगी तो यह पूर्णतः यथार्थ नहीं है क्योंकि उसने अभी तक उन्हें देखा भी नहीं होगा। परन्तु जब वह उन्हें देखेगा तो प्रकाश वेग के हिसाब से छूट देकर इसका निष्कर्ष यही होगा कि वे घटनाएँ उस निश्चित क्षण से पहले ही हो चुकी होंगी। कोई घटना जो रेल की पटरी पर आगे की दिशा में होती है और जो स्थिर प्रेक्षक की दृष्टि में अभी हुई है या (उसके अनुमान से तभी हुई जब उसने घटना को देखा) यदि वह इतनी दूरी पर होती है जितना कि प्रकाश एक सेकिण्ड में चलता है तो रेल वाले यात्री के अनुमान से वह घटना पौन (3/4) सेकिण्ड पहले हुई होगी। यदि घटना उन दोनों प्रेक्षकों से इतनी दूरी पर होती है जो पृथ्वी पर स्थित प्रेक्षक के अनुमान से प्रकाश एक वर्ष में चलेगा तो यात्री (जब वह उसे देखेगा) का अनुमान होगा कि घटना पृथ्वी के व्यक्ति से भेंट के समय से नौ महीने पूर्व हुई होगी। घटना से पृथ्वी वाले प्रेक्षक की दूरी को प्रकाश जितने समय में तय करता है भेंट के समय रेल वाला यात्री घटना की तिथि उस समय का तीन चौथाई समय पूर्व की ही मानेगा जबकि पृथ्वी वाले व्यक्ति की दृष्टि में वे घटनाएँ अभी हो रही हैं—बल्कि उसका अनुमान होगा कि घटनाएँ उसी समय हो रही हैं जब उनसे चलने वाला प्रकाश उस तक पहुँचता है। रेलगाड़ी के पीछे पटरी पर होने वाली घटनाएँ ठीक इतनी ही उत्तरदिनांकित होंगी।

इस प्रकार यदि हम प्रेक्षक के समय से यात्री का समय मालूम करना चाहें तो हम उसमें दो संशोधन करने होंगे। उसमें पहले हम पृथ्वीवासी के अनुमानित समय को सवाया (5/4) करना होगा और फिर घटना से पृथ्वीवासी तक की दूरी को तय करने में प्रकाश जितना समय लेता है उसका तीन चौथाई उसमें से घटाना होगा।

किसी ऐसी घटना पर विचार करो जो विश्व के बहुत दूर के किसी स्थान में होती है और पृथ्वीवासी और यात्री इसे एक-दूसरे के पास से गुजरते समय देखते हैं। यदि पृथ्वीवासी को घटना की दूरी ज्ञात हो तो वह मालूम कर सकता है कि घटना कितनी देर पहले हुई होगी क्योंकि उसे प्रकाश का वेग ज्ञात है। यदि घटना उस दिशा में होती जिधर यात्री जा रहा है तो वह यात्री समझेगा कि घटना पृथ्वीवासी के अनुमानित समय से दुगुने समय पहले हुई

है। परन्तु यदि घटना उस दिशा में हो रही है जिधर से यात्री आ रहा है तो वह कहेगा कि घटना पृथ्वीवासी के अनुमानित समय के केवल आधे समय पहले ही हुई है। यदि यात्री की चाल भिन्न हो तो ये अनुपात भी भिन्न होंगे।

अब मानो कि दो नये तारे अचानक उद्दीप्त होते हैं (जैसा कि कभी-कभी होता है) और ये यात्री और पृथ्वीवासी को उस समय दिखाई पड़ते हैं जब वे एक दूसरे के पास से गुज़र रहे थे। मानो कि उनमें से एक उस दिशा में है जिधर रेलगाड़ी जा रही है और दूसरा उस दिशा में है जिधर से गाड़ी आ रही है। मानो कि पृथ्वीवासी किसी तरह दोनों तारों की दूरी मालूम कर लेता है और वह यह अनुमान लगाता है कि रेलगाड़ी के जाने की दिशा में जो तारा है उससे प्रकाश को आने में पचास वर्ष लगते हैं और दूसरे तारे से प्रकाश को उस तक पहुँचने में 100 वर्ष लगते हैं। तब वह कहेगा कि आगे की दिशा के नव तारे की उत्पत्ति करने वाला विस्फोट पचास वर्ष पहले हुआ जबकि पीछे वाले नव तारे को उत्पन्न करने वाला विस्फोट 100 वर्ष पूर्व हुआ होगा। यात्री के अनुमान से ये आंकड़े उलटे होंगे। उसका अनुमान होगा कि सामने की दिशा वाला विस्फोट 100 वर्ष पूर्व हुआ और पीछे वाला विस्फोट 50 वर्ष पहले हुआ था। मैं समझता हूँ कि दोनों का तर्क सही है और सही भौतिक आँकड़ों पर आधारित है। वास्तव में दोनों सही हैं पर उनमें से प्रत्येक समझेगा कि दूसरे का अनुमान अशुद्ध है। यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि प्रकाश वेग के बारे में दोनों का अनुमान एक सा है क्योंकि उन दो नये तारों की दूरी के बारे में उनके अनुमान ठीक उसी अनुपात में होंगे जितना विस्फोट के समय के बारे में उनके अनुमान है। प्रयोगों द्वारा निर्धारित यह तथ्य पुराने सिद्धान्त के संगत नहीं था इसलिए यह परमावश्यक हो गया कि हम एक अद्भुत बात को मान्यता दें। आपेक्षिकता सिद्धान्त तथ्य से जितना संगत है उतना ही कम विचित्र लगता है। वास्तव में कुछ समय बाद वह ज़रा भी विचित्र नहीं लगता।

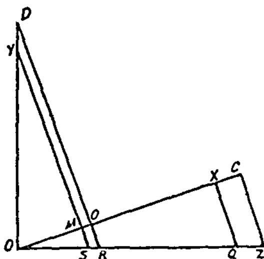
जिस सिद्धान्त पर हम विचार कर रहे हैं उसका एक और बड़ा महत्वपूर्ण लक्षण है। वह यह है कि यद्यपि दूरियाँ और समय भिन्न प्रेक्षकों के लिए भिन्न भिन्न होते हैं, परन्तु इनसे हम वह राशि निकाल सकते हैं जिसे अन्तराल कहते हैं और यह सब प्रेक्षकों के लिए समान होता है। आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धान्त में अन्तराल को निम्नलिखित विधि से प्राप्त करते हैं पहले दो घटनाओं के बीच की दूरी का वर्ग लो, फिर दोनों घटनाओं के बीच के समय में प्रकाश जितनी दूरी तय करेगा उसका वर्ग लो। अब इनमें जो सख्या बड़ी हो उसमें से छोटी को घटा दो। घटाने पर जो संख्या होगी उसे घटनाओं के बीच के अन्तराल का वर्ग माना जाता है। यह अन्तराल सभी प्रेक्षकों के लिए समान होगा और यह दो घटनाओं के बीच एक वास्तविक भौतिक सम्बन्ध को

व्यक्त करता है जबकि समय और दूरी ऐसा सम्बन्ध व्यक्त नही करते। हम पहले ही चौथे अध्याय म अन्तराल का ज्यामितीय रचना बता चुके है, उसस भी वही परिणाम प्राप्त होता है जो उपयुक्त विधि से प्राप्त होता है। यदि दो घटनाओ के बीच का समय उस समय से अधिक हो जो प्रकाश को एक घटनास्थल से दूसरे घटनास्थल तक जाने म लगता है, तो अन्तराल कालमय है और विपरीत दशा म अन्तराल आकाशमय' होगा। यदि घटनाओ के बीच का समय उस समय के ठीक बराबर है जो प्रकाश को एक घटना से दूसरी घटना तक जाने मे लगता है तो अन्तराल शून्य होगा और यदि कोई प्रकाश उस रास्ते स गुजर रहा हो तो दोनो घटनाएँ एक ही प्रकाश किरण के भिन्न भागो पर स्थित होगी।

जब हम आपेक्षिकता के व्यापक सिद्धात पर विचार करें तो हम अन्तराल की धारणा का सामान्यीकरण (generalisation) करना होगा। ससार की सरचना म हम जितनी गहराई तक जाएँ यह धारणा उतनी ही महत्त्वपूर्ण होती जाती है और अन्त म हम कहने लगते है कि यही (अन्तराल ही) वास्तविकता है दूरियाँ और समयावधियाँ तो इसके अस्पष्ट निरूपण है। आपेक्षिकता सिद्धान्त के कारण, ससार की मूल सरचना सम्बन्धी हमारे दृष्टिकोण म परिवर्तन आया है यही इसकी कठिनाई है और इसी वजह से इसका महत्त्व है।

जिन पाठको को रेखागणित और बीजगणित का थोडा बहुत भी ज्ञान नही है वे इस अध्याय के बाकी भाग को छोड सकते हैं। परन्तु जो लोग थोडे बहुत शिक्षित है उनके लाभ के लिए मैं उन सामान्य सूत्रो की कुछ व्याख्या करूँगा जिनके हमने अभी तक विशिष्ट उदाहरण ही लिए हैं। जिस सामान्य सूत्र का हम जिक्र कर रहे हैं वह है लोरेंटज रूपान्तरण। इसके अनुसार यदि एक पिण्ड दूसरे के सापेक्ष निश्चित रूप स गति कर रहा हो और यदि एक पिण्ड के लिए समय और दूरियाँ ज्ञात हो तो दूसरे पिण्ड के लिए समय और दूरियाँ सूत्र से मालूम कर सकते हैं। बीजगणितीय सूत्र देने से पहले मैं रेखागणितीय रचना का वर्णन करूँगा। पहले की ही भाँति माना कि दो प्रेक्षक है जिन्हे हम O और O मे व्यक्त करते हैं। उनम से एक पृथ्वी पर स्थिर है और दूसरा एक सीधी रेल की पटरी पर एक समान गति स जा रहा है। जब स हमने समय मापना शुरू किया था तब दोनो प्रेक्षक पटरी पर एक ही स्थान पर थे परन्तु अब उनके बीच म कुछ दूरी का अन्तर है। पटरी के किसी स्थान X पर बिजली गिरती है। O का अनुमान है कि बिजली गिरने की चमक के समय रेल वाला प्रेक्षक O बिन्दु पर पहुँच गया था। अब प्रश्न यह है कि O अपने आपको चमक स कितनी दूरी पर स्थित मानता है और उसके अनुमान स वह चमक यात्रा के प्रारम्भ से (जब वह O पर था) कितनी देर बाद हुई? माना कि O के अनुमान हमे ज्ञात हैं और O के अनुमान परिकलित करने हैं।

O के अनुसार यात्रा प्रारम्भ होने के बाद जितना समय गुजर चुका है माना कि उस समय में प्रकाश पटरी से साथ-साथ OC दूरी तय करता है। O को केन्द्र मानकर एक वृत्त खींचो जिसकी त्रिज्या OC हो और O से रेल की पटरी पर एक लम्ब खींचो जो वृत्त को D बिन्दु पर काटता है। OD पर एक बिन्दु Y इतनी दूरी पर लो कि OY=OX हो (X पटरी पर वह बिन्दु है जहाँ बिजली गिरती है)। पटरी पर एक लम्ब Y M खींचो और OD पर एक लम्ब OS खींचो। माना कि YM और OS S पर काटते हैं तथा DO′ और OS का आगे बढ़ाने पर वे R पर मिलते हैं। X और C बिन्दु से पटरी पर लम्ब खींचो जो OS को आगे बढ़ाने पर उसे क्रमशः Q और Z पर मिलते हैं। तब O स्वयं को दमक से जितनी दूरी पर समझता है वह दूरी R Q (O की माप के अनुसार) है। पुराने विचार के अनुसार यह दूरी O′ X थी। O समझता है कि यात्रा प्रारम्भ से दमक तक के समय में प्रकाश जो दूरी तय करता है वह OC के बराबर है पर O समझता है कि यह समय उतना ही है जितनी देर में प्रकाश S Z दूरी (O की माप के अनुसार) तय करता है। O के अनुसार OX के वर्ग में से OC का वर्ग घटा देने पर अन्तराल प्राप्त हो जाता है परन्तु O के अनुसार अन्तराल का मान RQ के वर्ग में से SZ का वर्ग घटाने पर प्राप्त होगा। थोड़े-से प्रारम्भिक रेखागणित से यह सिद्ध किया जा सकता है कि ये दोनों बराबर हैं।



इस रचना में प्रयुक्त बीजगणितीय सूत्र इस प्रकार है : माना कि O की दृष्टि में कोई घटना पटरी के साथ साथ X दूरी पर होता है और यह यात्रा के प्रारम्भ से (जो O O पर था) T समय बाद होता है। O की दृष्टि में दूरी

घटना पटरी के साथ-साथ x' दूरी पर, और यात्रा के आरम्भ से t' समय के बाद होती है। माना कि प्रकाश का वेग c है और O' का वेग O के सापेक्ष v है।

अब मान लो कि $\beta = \frac{c}{\sqrt{c^2 - v}}$

तब $x' = \beta(x - vt)$

और $t' = \beta\left(t - \frac{vx}{c^2}\right)$

यही लोरेंट्ज का रूपान्तरण है। इसकी सहायता से इस अध्याय की सभी गणनाए की जा सकती है।

अध्याय 7

दिक्-काल में अन्तराल

आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धान्त पर हम अभी तक विचार कर रहे थे, इससे एक निश्चित समस्या पूरी तरह हल हो गई। वह समस्या थी इस प्रायोगिक तथ्य को समझाना कि यदि दो पिण्ड एक समान सापेक्ष गति में हों तो साधारण गति की तथा विद्युत् और चुम्बकत्व से सम्बन्धित सभी भौतिकी नियम दोनों पिण्डों के लिए एक-जैसे होते हैं। 'एक-समान' गति से यहाँ अभिप्राय है सीधी रेखा में एक समान वेग से गति। हालाँकि विशिष्ट सिद्धान्त से एक समस्या तो हल हो गई थी परन्तु एक दूसरी समस्या उठ खड़ी हुई। यदि पिण्डों की गति एक समान नहीं हो तब क्या होगा? उदाहरण के लिए उनमें से एक पिण्ड पृथ्वी है और दूसरा पिण्ड एक गिरता हुआ पत्थर है। पत्थर की गति त्वरित है वह लगातार तेज होता जाएगा। विशिष्ट सिद्धान्त के अनुसार हम यह नहीं कह सकते कि भौतिक घटनाओं के नियम पत्थर पर स्थित किसी प्रेक्षक तथा पृथ्वी पर स्थित प्रेक्षक दोनों के लिए समान होंगे। यह तो विशेष रूप से अजीब है क्योंकि व्यापक दृष्टि से तो पृथ्वी स्वयं एक गिरता हुआ पिण्ड है। प्रत्येक क्षण इसमें सूर्य की दिशा में त्वरण[1] होता रहता है जिसकी वजह से यह सीधी रेखा में जाने के बजाय सूर्य के चारों ओर घूमती है। चूंकि भौतिकी के बारे में हमारा ज्ञान पृथ्वी के प्रयोगों पर ही आधारित है इसलिए हमारे लिए ऐसा सिद्धान्त काफी नहीं होगा जिसमें यह माना गया हो कि प्रेक्षक की गति त्वरित नहीं है। आपेक्षिकता के व्यापक सिद्धान्त में ऐसा कोई प्रतिबन्ध नहीं है इसमें प्रेक्षक की गति कैसी भी हो सकती है चाहे सीधी रेखा में हो, चाहे घुमावदार, चाहे एक समान हो या त्वरित हो। इस प्रतिबन्ध को हटाने में आइन्स्टाइन अपने नये गुरुत्व नियम पर पहुँचा जिस पर हम अभी विचार करेंगे। यह काम बड़ा कठिन था और इसमें उन्हें दस वर्ष लग गए। विशिष्ट

1 इसका यह अर्थ नहीं है कि उसका वेग लगातार बढ़ता है, बल्कि यह है कि उसकी दिशा बदलती रहती है। केवल उन गति को 'अत्वरित' गति कहते हैं जिसमें गति एक समान वेग में और सरल रेखा में होती है।

सिद्धांत 1905 का है जबकि व्यापक सिद्धांत 1915 का है। जब आप एक ऐसी रेलगाड़ी में हों जिसकी गति स्थिर है और यदि आप खिड़की से बाहर न देखें तो रेलगाड़ी की गति का आपको पता भी नहीं चलेगा, परन्तु जब अचानक ब्रेक लग जाते हैं तो आप आगे को गिरते हैं और आपको बिना बाहर देखे ही महसूस होता है कि बाहर कुछ हो रहा है। इसी प्रकार लिफ्ट में जब तक लिफ्ट की गति स्थिर रहती है, आपको कोई विशेष बात महसूस नहीं होती, परन्तु आरम्भ में और रुकते समय जब इसकी गति त्वरित होती है, आपको पेट की नाभि में अजीब सा महसूस होता है (हम इसे त्वरण ही कहते हैं चाहे गति मन्द होती जा रही हो और चाहे तीव्र। मन्दन होने पर त्वरण ऋणात्मक मानेंगे)। यही बात जहाज के कमरे में गिरते हुए पत्थर के लिए लागू होती है। जब तक जहाज की गति एक समान है उस समय तक कमरे के सापेक्ष गिराए जाने वाले भार का आचरण ऐसा होगा मानो जहाज स्थिर है, यदि वह छत के मध्य बिन्दु से गिरता है तो कमरे के फर्श के मध्य बिन्दु पर ही आकर गिरेगा। परन्तु यदि उसमें त्वरण हो तो सब कुछ बदल जाएगा। यदि जहाज की चाल तेजी से बढ़ रही हो तो प्रेक्षक की दृष्टि में वह भार पीछे की ओर एक वक्र में गिरेगा, और यदि जहाज की चाल तेजी से घट रही हो तो वक्र आगे की ओर होगा। ये सभी तथ्य सुपरिचित हैं और इन्हीं की वजह से गलीलियो और न्यूटन त्वरित गति को एक समान गति से बिलकुल भिन्न प्रकृति की मानते थे। परन्तु यह भेद तभी तक रहता था जब तक कि हम गति को सापेक्ष न मानकर निरपेक्ष मानें। यदि प्रत्येक गति सापेक्ष हो तो पृथ्वी का लिफ्ट के सापेक्ष त्वरण भी उतना ही सत्य है जितना कि लिफ्ट का पृथ्वी के सापेक्ष त्वरण। फिर भी जब लिफ्ट ऊपर जाती है तो जमीन पर स्थित लोगों के पेट की नाभि में किसी प्रकार की अनुभूति नहीं होती। इससे हमारी समस्या की कठिनाई स्पष्ट होती है। यद्यपि आधुनिक युग में भौतिकी विद् निरपेक्ष गति में विश्वास नहीं करते, पर वास्तव में गणितीय भौतिकी में अब भी न्यूटन की धारणाएं घुसी हुई थीं। अपनी प्रणाली से उनका बहिष्कार करने के लिए विधियों में क्रांतिक परिवर्तनों की आवश्यकता थी। यह क्रांति आइन्स्टाइन के आपेक्षिकता के व्यापक सिद्धांत ने ला दी।

यह एक हद तक हमारी इच्छा पर निर्भर है कि आइन्स्टाइन के नये विचारों की व्याख्या करने के लिए कहाँ से शुरू करें, पर शायद अन्तराल की धारणा को लेकर शुरू करना अच्छा रहेगा। आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धान्त में इस परिकल्पना का जो उल्लेख आया है वह आकाश और काल में दूरियों की परम्परागत धारणा का ही सामान्यीकरण है परन्तु इसका और आगे भी सामान्यीकरण करना आवश्यक है। यहां सबसे पहले विज्ञान के इतिहास का वर्णन करना आवश्यक होगा और इसके लिए हम पाइथागोरस से

ही शुरू करेंगे।

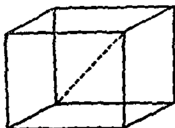
इतिहास की कई महान् विभूतियो की भांति, सम्भवत पाइथागोरस का अस्तित्व था ही नही वह एक अधकाल्पनिक व्यक्ति था जिसम गणित और पुरोहिताई का अनिश्चित मात्राओ म मिश्रण था। मोटे तौर स वह बुद्ध और कन्फ्यूशस का समकालिक था। उसने एक धार्मिक सम्प्रदाय की स्थापना की, जिसका विचार था कि सेम की फलियाँ खाना पाप है और उसन एक गणितज्ञ सम्प्रदाय (school of mathematicians) की भी स्थापना की जो समकोण त्रिभुजो मे विशेष रूप से रुचि रखते थे। पाइथागोरस की प्रमेय (यूक्लिड के 47वें साध्य) के अनुसार किसी समकोण त्रिभुज के दो छोटी भुजाओ के वर्गों का योग समकोण के सामने वाली भुजा के वग के बराबर होता है। सम्पूण गणित म किसी भी साध्य का इतना रुचिकर इतिहास नही है। हमने युवावस्था म इसे सिद्ध करना सीख लिया था। यह तो सच है कि उपपत्ति' (proof) स कुछ भी सिद्ध नही होता और इसका केवल प्रयोग द्वारा ही सिद्ध किया जा सकता है। एक बात यह भी है कि यह साध्य पूणत सत्य नही है—यह केवल सन्निकट रूप स ही सत्य है परन्तु ज्यामिति और उसके बाद भौतिकी म सभी चीजें इसी से ही उत्तरोत्तर सामान्यीकरण द्वारा निगमित (derived) हुई हैं। इनम से नवीनतम सामान्यीकरण आपेक्षिकता का व्यापक सिद्धान्त ही है।

सम्भवत पाइथागोरस का प्रमेय स्वय मिस्रवालो के अनुभव पर आधारित नियम का सामान्यीकरण था। मिस्र म बहुत प्राचीन काल स यह ज्ञात था कि यदि किसी त्रिभुज की भुजाए 3 4 और 5 मात्रक लम्बी हो तो वह समकोण त्रिभुज होता है। मिस्रवासी इस नियम का प्रयोग अपने खेतो का मापन के लिए किया करते थे। अब यदि किसी त्रिभुज की भुजाए 3 4 और 5 इच लम्बी हो तो उनके वग 9 16 और 25 वग इच के होगे 9 म 16 जोड दें तो यह 25 के बराबर होता है। तीन को तीन बार लिखने के बजाय 3^2 चार को चार बार लिखने के बजाय 4^2 और पांच को पाच बार लिखने के बजाय 5^2 लिखा जाता है। इसलिए अब

$$3^2+4^2=5^2$$

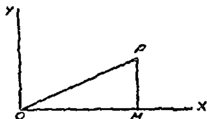
यह माना जाता है कि पाइथागोरस ने जब मिस्र वालो से यह सीखा कि जिस त्रिभुज की भुजाए 3 4 और 5 होती हैं वह समकोण होगा तो उसका ध्यान इस तथ्य की ओर गया। उसने देखा कि यह एक सामान्य नियम हो सकता है और इस प्रकार वह अपने प्रसिद्ध प्रमेय पर पहुँचा किसी समकोण त्रिभुज म समकोण के सामने वाली भुजा पर वग बाकी दो भुजाओ पर बने वर्गों के योग के बराबर होता है।

इसी प्रकार तीन विमाओं में भी होता है। यदि आप कोई समकोण ठोस वस्तु लें तो उसके विकर्ण (जो बिन्दुदार रेखा से दिखाया गया है) पर वर्ग उसकी तीन भुजाओं पर बने वर्गों के योग के बराबर होता है।



पुराने लोग इस सम्बन्ध में यहाँ तक तो पहुँच गए थे।

इसमें अगला महत्वपूर्ण काम डेकार्ट ने किया। उसने पाइथागोरस प्रमेय को वश्लेपिक ज्यामिति की विधि का आधार बनाया। माना कि आप किसी समतल पर सभी स्थानों को क्रमबद्ध रूप से दिखाना चाहते हैं—हम समतल को इतना छोटा मानेंगे कि पृथ्वी के गोल होने के प्रभाव को नगण्य माना जा सके। माना कि आप समतल के मध्य में रहते हैं। किसी स्थान की स्थिति बताने की सबसे सरल विधि यह है कि आप कहें मेरे घर से चलकर आप इतनी दूर पूर्व को जाएँ, फिर उसके बाद इतनी दूर उत्तर की ओर जाएँ (या पहले पश्चिम की तरफ और फिर उसके बाद दक्षिण की तरफ जाएँ)। इससे आपको पता चल जाता है कि अमुक स्थान कहाँ पर है। अमरीका के समकोण चतुर्भुज के आकार के शहरों के लिए सबसे स्वाभाविक विधि यही है। *न्यूयार्क में आपको पता चलेगा कि* पहले आपको पूर्व की (या पश्चिम की) ओर इतने ब्लाक जाना है फिर इतने ब्लाक उत्तर (या दक्षिण) जाना है। पूर्व की ओर आपको जितना



चलना है वह x कहलाता है और उत्तर की ओर वाली दूरी y कहलाती है (यदि आपको पश्चिम की ओर जाना है तो x ऋणात्मक होगा और दक्षिण की ओर जाने पर y ऋणात्मक होता है)। माना कि आपका प्रारम्भिक बिन्दु ('मूल' बिन्दु) O है, और आप पूर्व दिशा में OM दूरी तक जाते हैं और उत्तर दिशा में MP दूरी तक जाते हैं। जब आप P पर पहुँच जाते हैं तो आप घर से कितनी दूरी पर हैं? पाइथागोरस के प्रमेय से इसका उत्तर मिलता है। OP पर वर्ग OM और MP के वर्ग के योग के बराबर है। यदि OM चार मील है और MP तीन मील है तो OP पाँच मील होगा। यदि OM बारह मील हो और MP पाँच मील हो तो OP तेरह मील हुआ, क्योंकि $12^2+5^2=13^2$। इस प्रकार यदि स्थान निर्धारण के लिए आप डेकार्ट की विधि का प्रयोग करते हैं तो स्थान की स्थिति बताने के लिए पाइथागोरस का प्रमेय आवश्यक

है। तीन विमाओं में भी यह समरूप है। माना कि किसी समतल पर स्थान निर्धारण के बजाय आप उसके ऊपर नियन्त्रित गुब्बारा के लिए स्टेशन निर्धारित करना चाहते हैं तो आपको एक तीसरी राशि और रखनी होगी और वह है गुब्बारे की ऊंचाई। माना कि ऊँचाई z है। यदि O से गुब्बारे की सीधी दूरी r हो तो

$$r^2 = x^2 + y^2 + z$$

अब यदि आपको x, y और z का मान ज्ञात हो तो r का मान मालूम कर सकते हैं। उदाहरण के लिए माना कि गुब्बारे तक पहुँचने के लिए आप पहले 12 मील पूर्व 4 मील उत्तर और फिर 3 मील ऊपर जाते हैं तो गुब्बारे की आपसे सीधी दूरी 13 मील होगी क्योंकि $12 \times 12 = 144$ $4 \times 4 = 16$, $3 \times 3 = 9$ तथा $144 + 16 + 9 = 13 \times 13$।

अब माना कि पृथ्वी-तल का इतना छोटा भाग लेने के बजाय जिसे आप चपटा मान सकें आप संसार का एक नक्शा बनाना चाहते हैं। एक चपटे कागज पर संसार का यथार्थ नक्शा बनाना असम्भव है। एक ग्लोब सही हो सकता है क्योंकि उस पर ही चीजें यथास्केल बनाई जा सकती हैं परन्तु एक चपटा नक्शा सही नहीं हो सकता। मैं व्यावहारिक कठिनाइयों का उल्लेख नहीं कर रहा हूँ, मैं तो एक सद्धान्तिक असम्भाव्यता बता रहा हूँ। उदाहरण के लिए ग्रीनविच के याम्योत्तर और पश्चिमी रेखांश के 90वें याम्योत्तर के उत्तरी आधे भागों के साथ विषुवत् रेखा लेने पर जो त्रिभुज बनेगा उसकी सभी भुजाएं बराबर होंगी और सभी कोण समकोण होंगे। चपटे पृष्ठ पर इस प्रकार का त्रिभुज बनाना असम्भव है। दूसरी ओर चपटे पृष्ठ पर आप एक वर्ग बना सकते हैं परन्तु गोले पर वर्ग बनाना असम्भव है। माना कि आप पृथ्वी पर वर्ग बनाना चाहते हैं पहले आप 100 मील पश्चिम जाएँ फिर 100 मील उत्तर फिर 100 मील पूर्व और फिर 100 मील दक्षिण। आप समझेंगे कि यह एक वर्ग बन जाएगा परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है क्योंकि अन्त में आप वापस अपने आरम्भ-स्थान पर नहीं पहुँचेंगे। यदि आपके पास समय हो तो आप यह प्रयोग स्वयं ही करके देख सकते हैं। यदि नहीं तो भी यह आपको आसानी से स्पष्ट हो जाएगा। यदि आप ध्रुव के आस पास हों तो 100 मील जाने में अधिक रेखांश गुजर जाएँगे जबकि इसकी तुलना में विषुवत् पर कम रेखांश गुजरते हैं। इसलिए जब आप 100 मील पूर्व दिशा में जाते हैं—यदि आप उत्तरी गोलार्द्ध में हैं तो आप जिस बिन्दु से चले थे उससे आगे पूर्व की ओर पहुँच जाते हैं और आरम्भ-स्थान के बजाय किसी और स्थान पर पहुँच जाते हैं। अब हम एक दूसरा उदाहरण लेंगे। माना कि आप विषुवत् रेखा पर ग्रीनविच याम्योत्तर से 4000 मील पूर्व से चलना आरम्भ करते हैं और ग्रीनविच याम्योत्तर तक आते हैं और तब आप

उमर साथ साथ ग्रीनविच से ,गुज़रते हुए 4000 मील उत्तर में जाते हैं और ग्रेटलैंड द्वीप के आस पास पहुँच जाते हैं उसके बाद आप 4000 मील पूर्व की ओर जाते हैं और फिर 4000 मील दक्षिण में जाते हैं। इससे आप विषुवत् रेखा के उस स्थान पर पहुँच जाएंगे जो आपके आरम्भ-स्थान से और आगे पूर्व की ओर 4000 मील दूर होगा।

जो कुछ हमने अभी बताया एक दृष्टि से वह उचित नहीं है क्योंकि विषुवत् रेखा को छोड़कर कहीं भी किसी स्थान से पूर्व की ओर वाले किसी दूसरे स्थान तक जाने के लिए पूर्व दिशा में जाने वाला मार्ग न्यूनतम मार्ग नहीं होता। माना कि एक जहाज़ (उदाहरण के लिए) न्यूयार्क से लिस्बन जा रहा है, जो न्यूयार्क के लगभग पूर्व में है, तो सबसे पहले वह कुछ दूर उत्तर की ओर जाएगा। वह एक 'बृहद् वृत्त' से होकर जाएगा, अर्थात् वह वृत्त जिसका केन्द्र पृथ्वी के केन्द्र पर होगा। पृथ्वी-तल पर यदि कोई सीधी रेखा खींचनी हो तो लगभग यही सबसे सीधी रेखा होगी। रेखांशों के याम्योत्तर बृहद् वृत्त होते हैं। विषुवत् वृत्त भी बृहद् वृत्त है परन्तु अक्षांश के समानान्तर रेखाएं बृहद् वृत्त नहीं होतीं। इसलिए हमारा अनुमान यह होना चाहिए था कि जब आप ग्रेटलैंड द्वीप पर पहुँचते हैं तो आप 4000 मील की यात्रा कर लेते हैं, पर पूर्व की ओर नहीं बल्कि एक बृहद् वृत्त पर जिससे आप ग्रेटलैंड द्वीप के पूर्व में किसी स्थान पर पहुँचते हैं। इससे हमारे निष्कर्ष का समर्थन ही होता है अर्थात् आप आरम्भ बिन्दु से पहले के मुकाबले में और भी अधिक पूर्व में पहुँचते हैं।

एक गोले की ज्यामिति में और एक समतल की ज्यामिति में क्या-क्या अन्तर होते हैं? यदि आप पृथ्वी पर एक त्रिभुज खींचें जिसकी भुजाएँ बृहद् वृत्त हों तो आप देखेंगे कि उसके कोणों का योग दो समकोण के बराबर नहीं होगा, उनका योग इससे अधिक होगा। उनका योग दो समकोण से कितना अधिक होगा, यह त्रिभुज के आकार पर निर्भर करता है। आप अपने घास के मैदान में रस्सी की सहायता से जो त्रिभुज बना सकते हैं या परस्पर दिखाई पड़ने वाले तीन जहाज़ों से जो त्रिभुज बनता है उसके कोणों का योग दो समकोण से इतने कम परिमाण में ही अधिक होगा कि आप उस अन्तर को मालूम भी नहीं कर सकते। परन्तु यदि आप विषुवत् रेखा, ग्रीनविच के याम्योत्तर तथा 90वें याम्योत्तर को मिलाकर एक त्रिभुज बनाएं तो इसके कोणों का योग तीन समकोण के बराबर होगा। आप ऐसे त्रिभुज भी बना सकते हैं जिनके कोणों का योग 6 समकोण तक हो सकता है। आप यह सब पृथ्वी-तल पर ली गई मापों से ही कर सकते हैं। इसमें आपको बाहरी आकाश की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

एक गोले पर ली गई दूरियों के लिए पाइथागोरस का प्रमेय भी ग़लत

सिद्ध होगा। पृथ्वी से बद्ध किसी यात्री की दृष्टि में किन्ही दो स्थानो के बीच की दूरी उनसे गुजरने वाले बहद् वृत्त पर दूरी के बराबर होगी अर्थात पृथ्वी से दूर हटे बिना की जाने वाली न्यूनतम यात्रा के बराबर होगी। माना कि आप तीन बहद् वृत्तो के छोटे भाग लेकर एक त्रिभुज बनाते हैं और माना कि उनमे एक भुजा एक दूसरी भुजा से समकोण पर है—विशिष्ट उदाहरण के रूप मे माना कि एक भुजा विषुवत् रेखा है और उत्तर की ओर जाने वाला ग्रीनविच का याम्योत्तर दूसरी भुजा है। माना कि आप विषुवत रेखा पर 3000 मील जाते है और फिर उत्तर की ओर 4000 मील तक जाते हैं तो बहद वृत्त के साथ साथ मापन पर आप आरम्भ बिन्दु से कितनी दूर होगे? यदि आप एक समतल पर होते तो आपकी दूरी 5000 मील होती जैसा कि पहले ही बता चुके हैं। पर वास्तव मे बहद वृत्त पर आपकी दूरी काफी कम होगी। किसी गोले पर बने समकोण त्रिभुज मे समकोण के सामने वाली भुजा का वर्ग बाकी दो भुजाओ के वर्ग के योग से कम होता है।

गोले की ज्यामिति और समतल की ज्यामिति मे ये भेद निज (intrinsic) हैं अर्थात् इनकी सहायता से आप यह बता सकते हैं कि जिस तल पर आप रहते है वह समतल है या गोलाकार है और इसके लिए आपको तल के बाहर की किसी चीज की सहायता लेने की आवश्यकता नही होगी। इन विचारो से हमारे विषय मे एक नया महत्त्वपूर्ण चरण आया जिसके प्रस्तावक थे गाउस। उनका समय अब से डेढ सौ वर्ष पूर्व का है। उन्होने पृष्ठो के सिद्धान्त (theory of surfaces) का अध्ययन किया और बताया कि बिना बाहर जाए ही स्वयं पृष्ठ पर हो लिये गए मापो की सहायता से हम पृष्ठो का सिद्धान्त कम मालूम कर सकते हैं। आकाश मे किसी बिन्दु के स्थान निर्धारण के लिए हम तीन मापो की आवश्यकता होती है परन्तु एक पृष्ठ पर किसी बिन्दु का स्थान निर्धारित करने के लिए केवल दो मापो की आवश्यकता होती है—उदाहरण के लिए पृथ्वी के तल पर किसी बिन्दु का स्थान अक्षांश और देशान्तर से निर्धारित किया जा सकता है।

अब गाउस ने मालूम किया कि चाहे आप माप की जो भी प्रणाली प्रयुक्त करें और चाहे पृष्ठ किसी भी प्रकार का हो पृष्ठ पर यदि दो बिन्दुओ का दूरी बहुत अधिक न हो तो उसके स्थान को निर्धारित करने वाली राशियाँ ज्ञात होने पर आप हमेशा उनके बीच की दूरी परिकलित कर सकते हैं। दूरियाँ मालूम करने का सूत्र पाइथागोरस के सूत्र का सामान्यीकरण ही है। इसके अनुसार दूरी का वर्ग स्थान निर्धारित करने वाली मापो के वर्ग के अन्तर और उनकी गुणा के रूप मे लिया जा सकता है। यदि आपको यह सूत्र ज्ञात हो तो आप पृष्ठ के निज गुणधर्म (intrinsic properties) ज्ञात कर सकते हैं अर्थात् वे सब गुण जो पृष्ठ के बाहर के किसी बिन्दु से सम्बन्धित

नही हैं। उदाहरण के लिए आप यह मालूम कर सकते हैं कि किसी त्रिभुज के कोणो का योग दो समकोण के बराबर है, उससे अधिक है या कम है या कुछ त्रिभुजो म कम और कुछ मे अधिक है।

परतु यदि हम किसी 'त्रिभुज' पर विचार करते हैं तो हम पहले स्पष्ट करना होगा कि उससे हमारा अभिप्राय क्या है क्योकि अधिकाश पृष्ठ ऐसे होग कि उन पर सीधी रेखा हो ही नही सकती। किसी गोले पर सीधी रेखाओ के बजाय वहद् वृत्त लेने होगे क्योकि उसके लिए वे ही सीधी रेखा के सबसे समीप होग। साधारणत हम सीधी रेखाओ के बजाय वे रेखाएँ लेंगे जो पृष्ठ पर एक स्थान से दूसरे स्थान के न्यूनतम पथ को व्यक्त करती हो। ऐसी रेखाओ को 'जिओडेसिक' कहते हैं। पृथ्वी पर जिओडेसिक बृहद् वृत्त होते है। यदि आप पृष्ठ से दूर नही जा सकते तो साधारणत एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाने के लिए न्यूनतम मार्ग ये ही होते है। किसी पृष्ठ की निज ज्यामिति (intrinsic geometry) मे ये सीधी रेखाओ के स्थान पर होते है। जब हम यह जानना चाहे कि त्रिभुज के कोणो का योग दो समकोण है या नही तो हम ऐसे त्रिभुज के बारे मे कहते हैं जिसकी भुजाए जिओडेसिक . । और दो बिन्दुओ के बीच की दूरी पर विचार करते समय हमारा अभिप्राय होता है जिओडेसिक पर दूरी से।

हमारे सामान्यीकरण प्रक्रम का अगला चरण जरा कठिन है। वह है अयूक्लिडीय ज्यामिति (Non-Euclidean Geometry) के रूप म परिवर्तन (transition)। हम एक ऐसे ससार म रहते हैं जहाँ आकाश की तीन विमाएँ हैं और हमारा आनुभविक ज्ञान छोटी दूरियो और छोटे कोण की मापो पर आधारित है। (जब मैं छोटी दूरियाँ कहता हूँ तो मेरा अभिप्राय है ज्योतिष दूरियो की तुलना मे छोटी, इस दृष्टि से पृथ्वी पर सभी दूरियाँ छोटी ही हैं) पहले यह माना जाता था कि हम प्रागनुभव से यह निश्चित मान सकते हैं कि आकाश यूक्लिडीय है—उदाहरण के लिए यह कि त्रिभुज के कोणो का योग दो समकोण होता है। परतु धीरे धीरे यह माना जाने लगा कि हम इसे तर्क द्वारा सिद्ध नही कर सकते, यदि ऐसा हो सकता है तो यह केवल माप के आधार पर ही हो सकता है। आइस्टाइन से पहले यह माना जाता था कि प्राप्य यथार्थता की सीमा म, मापो से यूक्लिडीय ज्यामिति की पुष्टि होती है, परतु अब ऐसा नही माना जाता है। यह अब भी सत्य है कि हम प्राकृतिक युक्ति की सहायता से पृथ्वी जसे किसी छोटे भाग म सर्वथा यूक्लिडीय ज्यामिति को सत्य मालूम पड़ती हुई दिखा सकते हैं। परतु गुरुत्व की व्याख्या करने के लिए आइस्टाइन इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि बडे प्रदेश म जहाँ पर पदार्थ विद्यमान हो वहाँ हम आकाश को यूक्लिडीय नही मान सकते। इसके कारणो की हमे आगे आवश्यकता पडेगी। अभी तो हमारा सम्बन्ध केवल इस बात से है कि

गाउस के विचारों के सामान्यीकरण से अयूक्लिडीय ज्यामिति किस प्रकार उत्पन्न होती है।

त्रिविमितीय आकाश की परिस्थितियाँ भी उदाहरण के लिए गोले के पृष्ठ जैसी ही होनी चाहिएँ। हो सकता है कि किसी त्रिभुज के कोणों का योग हमेशा ही दो समकोण से अधिक हो और यह अधिकता त्रिभुज के आकार के अनुपात में होती है। हो सकता है कि दो बिंदुओं के बीच की दूरी को भी एक ऐसे ही सूत्र से व्यक्त करना सम्भव हो सके जैसा कि गोले के पृष्ठ के लिए होता है परन्तु इसमें दो के बजाय तीन राशियाँ होंगी। यह वास्तव में ऐसा होता है या नहीं केवल प्रायोगिक माप से ही मालूम कर सकते हैं। इस प्रकार की असंख्य सम्भावनाएँ हो सकती हैं।

इस प्रकार की विचारधारा का विकास सबसे पहले रीमान (Riemann) ने अपने प्रबंध 'वह परिकल्पना जो ज्यामिति का आधार है' (1954) में किया था। उसमें गाउस के निष्कर्षों को त्रिविमितीय आकाश में विभिन्न प्रकार के पृष्ठों के लिए प्रयुक्त किया गया है। उसने दिखाया कि किसी प्रकार के आकाश के मुख्य लक्षण छोटी दूरियों के लिए प्रयुक्त सूत्रों से मालूम किए जा सकते हैं। उसने यह माना कि यदि तीन निर्धारित दिशाओं में ऐसी दूरियाँ दी हुई हों जिनसे आप एक बिंदु से दूसरे बिंदु तक पहुँच सकें तो आप इन बिंदुओं के बीच की दूरी ज्ञात कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, यदि आप जानते हैं कि एक बिंदु से दूसरे बिंदु तक जाने के लिए पहले इतनी दूरी पूर्व जाना होगा फिर इतनी दूरी उत्तर और अन्त में इतनी दूरी हवा में ठीक ऊपर जाना पड़ेगा तो आप एक बिंदु से दूसरे बिंदु तक की दूरी परिकलित कर सकते हैं। और इस परिकलन का नियम पाइथागोरस प्रमेय का ही एक रूप होगा क्योंकि जो दूरी मालूम करनी है उसका वर्ग अव्यव दूरियों के वर्गों के गुणज और सम्भवतः अन्यवा का गुणा करके उनके गुणजों को भी एक साथ जोड़ देने से प्राप्त होता है। सूत्र के कुछ लक्षणों से आप बता सकते हैं कि जिस आकाश के बारे में विचार किया जा रहा है वह किस किस्म का है। ये लक्षण इस बात पर निर्भर नहीं करते कि बिंदुओं के स्थान निर्धारण के लिए कौनसी पद्धति चुनी गई है।

आपेक्षिकता सिद्धान्त में हम जिस बात पर पहुँचना चाहते हैं उसके लिए हम एक सामान्यीकरण और करना पड़ेगा हम दो बिंदुओं के बीच की दूरी के बजाय दो घटनाओं का अन्तराल रखना पड़ेगा। इससे हम त्रिकाल में पहुँच जाते हैं। हम पहले ही देख चुके हैं कि आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धान्त में यदि दो घटनाओं के बीच की समयावधि में प्रकाश जितनी दूरी तय करता है उसके वर्ग में से घटनाओं के बीच का दूरी का वर्ग घटा दें तो अन्तराल का वर्ग प्राप्त हो जाता है। व्यापक सिद्धान्त में हम इस विशिष्ट प्रकार के

अंतराल को नही मानते हैं। शुरू मे हम उस व्यापक रूप से आरम्भ करते है, जैसा कि रीमान ने दूरी के लिए प्रयुक्त किया था। इसके अतिरिक्त रीमान की भांति आइन्स्टाइन का सूत्र पास पास की घटनाओ के लिए ही प्रयुक्त किया गया था अर्थात एसी घटनाओ के लिए जिनके बीच का अंतराल छोटा हो। इन आरम्भिक संकल्पनाओ के बाहर जो भी है वह पिण्डो की वास्तविक गति पर जिस प्रकार निर्भर करता है वह हम आगे के अध्यायो मे बताएँगे।

अब हम इस पूरी विधि को संक्षेप मे एक बार फिर से दोहरा दें। तीन विमाओ मे किसी निश्चित बिन्दु (मूल बिन्दु) के सापेक्ष किसी दूसरे बिन्दु की स्थिति तीन राशियो (निर्देशाकों) से निर्धारित की जा सकती है। उदाहरण के लिए यदि आप जानते हो कि पहले एक निश्चित दूरी तक पूर्व मे जाने के बाद, फिर एक निश्चित दूरी तक उत्तर मे जाकर अंत मे एक निश्चित दूरी तक ऊपर जाने पर आप किसी गुब्बारे तक पहुँच सकते हैं तो आपके घर के सापेक्ष गुब्बारे की स्थिति निर्धारित मानी जाएगी। और यदि, जैसा कि इस स्थिति मे है तीनो निर्देशाक एसी तीन दूरियाँ हैं जो परस्पर समकोण पर हैं और एक के बाद एक उन पर जाने से आप मूल बिन्दु से लक्षित बिन्दु तक पहुँच सकते हो तो उस लक्षित बिन्दु तक की सीधी दूरी का वर्ग निर्देशाको के वर्ग के योग के बराबर होगा। चाहे यूक्लिडीय आकाश हो या अयूक्लिडीय हर हालत मे निर्देशाको के वर्गों के गुणज और गुणनफल के गुणजो को किसी विशिष्ट नियम के अनुसार जोडने पर हम दूरी का वर्ग प्राप्त किया जा सकता है। ये ये निर्देशाक किसी बिन्दु की स्थिति को निर्धारित करने वाली कोई भी राशि हो सकती है बशर्ते कि पास वाले दूसरे बिन्दुओ के निर्देशाक की राशियाँ भी इन राशियो के समीप की ही हो। आपेक्षिकता के व्यापक सिद्धांत मे समय को व्यक्त करने वाला हम एक चौथा निर्देशांक भी रखते हैं और तब हमारा सूत्र स्थानीय दूरी के बजाय अंतराल व्यक्त करता है। इसके साथ-साथ हम यह भी मानते हैं कि हमारा सूत्र छोटी दूरियो के लिए ही सही है।

इस प्रकार अब हम आइन्स्टाइन के गुरुत्व-सम्बन्धी सिद्धांत पर चर्चा करने के लिए समर्थ हैं।

अध्याय 8

आइन्स्टाइन का गुरुत्वाकर्षण नियम

आइन्स्टाइन के नये नियम पर विचार करने से पहले हमारे लिए अच्छा होगा कि हम तर्कयुक्त ढंग से यह समझ लें कि न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण नियम पूर्णत सत्य नहीं हो सकता।

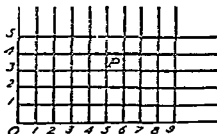
न्यूटन का कहना है कि पदार्थ के दो कणों के बीच एक बल होता है जो उनके द्रव्यमानों की गुना के अनुक्रमानुपाती और उनके बीच की दूरी के व्युत्क्रमानुपाती होता है। अभी यदि हम द्रव्यमान के प्रश्न को छोड़ दें तो इसका मतलब यह होगा कि दो कणों के बीच की दूरी एक मील होने पर उनके बीच जो आकर्षण होगा दूरी दो मील होने पर यह आकर्षण उसका चौथाई और दूरी तीन मील होने पर उसका नवाँ भाग होगा इत्यादि इत्यादि । दूरी बढ़ने के साथ साथ आकर्षण बहुत तेजी से घटता है। परन्तु इसमें न्यूटन ने जहाँ दूरी के बारे में कहा है तो उसका अभिप्राय था किसी क्षण उनके बीच की दूरी उसका विचार था कि समय के बारे में कोई द्विविधा नहीं हो सकती। परन्तु हम देख चुके हैं कि यह उसका भ्रम था। किसी एक प्रेक्षक की दृष्टि में पृथ्वी और सूर्य पर *जिसे एक ही समय कहा जा सकता है वे किसी दूसरे प्रेक्षक की दृष्टि* में भिन्न समय होंगे। इसलिए किसी एक क्षण पर दूरी एक व्यक्तिनिष्ठ सकल्पना है जिसका अन्तरिक्ष-सम्बन्धी नियमों में कोई स्थान नहीं हो सकता। फिर भी हम कह सकते हैं कि हम समय को ग्रीनविच वेधशाला के अनुसार मापें और इस प्रकार अपने नियम को एक निश्चित रूप दे सकते हैं। *परन्तु हम यह नहीं मान सकते हैं कि पृथ्वी की आकस्मिक परिस्थितियों को* विशेष महत्त्व दिया जाए इसलिए दूरी के अनुमान भी विभिन्न प्रेक्षकों के लिए भिन्न भिन्न होंगे। अब हम यह मानने के लिए तैयार नहीं हैं कि गुरुत्वाकर्षण नियम का जो रूप न्यूटन ने दिया वह पूर्णत सही है क्योंकि हम जितनी भी विभिन्न प्रणालियाँ अपनाएँगे उन सबसे भिन्न भिन्न परिणाम प्राप्त होंगे। यह उतना ही बेतुका है जितना यह कहना हो कि एक व्यक्ति के द्वारा दूसरे व्यक्ति की हत्या का प्रश्न इस बात पर निर्भर करता है कि व्यक्तियों के

नाम दिये गए हैं या उनके गोत्र दिये गए हैं। यह तो स्पष्ट ही है कि भौतिक
नियमों मे कोई अन्तर नही पडता, चाहे दूरी मीलों मे मापी जाए चाहे किलो-
मीटर मे, और हमारा सम्बन्ध मुख्यत उसी सिद्धान्त के विस्तृत रूप से है।
हमारे माप उससे भी अधिक परम्परागत हैं जितने कि आपेक्षिकता के
विशिष्ट सिद्धान्त मे मान्य हैं इसके अतिरिक्त प्रत्येक माप भौतिक साधनों
द्वारा सम्पन्न एक प्रक्रम है, जिसके परिणाम निश्चय ही प्रायोगिक आँकडे मात्र हैं,
परन्तु उनकी व्याख्या उस ढग से नहीं की जा सकती जैसा कि सामान्यत
आशा की जाती है। इसलिए अभी हम यह नही मान सकते कि हम किसी
चीज को मापने की विधि पहले से ही जानते हैं। हम मानते हैं कि एक भौतिक
राशि होती है जिसे 'अन्तराल' कहते हैं। यह ऐसी दो घटनाओं के सम्बन्ध को
व्यक्त करती है जो एक दूसरे से बहुत दूर नहीं हैं, परन्तु हम यह नहीं मानते
कि इसे मापने की विधि पहले से ही ज्ञात है। हम तो केवल इतना मानते हैं
कि यह पाइथागोरस प्रमेय का एक प्रकार का सामान्यीकरण है जैसा कि हमने
पिछले अध्याय मे माना था।

परन्तु हम यह मानते हैं कि घटनाओं का एक क्रम होता है और यह क्रम
चतुर्विमितीय है। इसका मतलब है कि यदि हम कह दें कि कोई घटना किसी
दूसरी घटना के मुकाबले किसी अन्य तीसरी घटना से अधिक समीप है तो
इसका अर्थ स्पष्ट है। इसलिए सही सही माप लेने से पहले भी हम किसी
घटना का सामीप्य बता सकते हैं। और हम यह भी मानते हैं कि दिक्-काल
मे किसी घटना की स्थिति निर्धारित करने के लिए चार राशियाँ (निर्देशांकों)
की आवश्यकता होती है—जैसे वायुयान पर विस्फोट वाले उदाहरण मे रेखांश,
अक्षांश, ऊँचाई और समय। परन्तु हमने इस बारे मे कोई धारणा नही बनाई
कि ये निर्देशांक किस प्रकार निर्धारित किए जाएँ केवल इतना ही माना है कि
समीपस्थ घटनाओं के लिए समीपस्थ निर्देशांक ही लिये जाए।

ये संख्याएँ जिन्हें हम निर्देशांक कहते हैं इनका निर्धारण न तो पूर्णत
स्वेच्छ ही है और न ही शुद्ध मापों पर आधारित है—यह इन दोनों के बीच
का है। यदि आप लगातार यात्रा कर रहे हों तो आपके निर्देशांक झटका के
साथ नहीं बदले जाने चाहिएँ। अमरीका मे ऐसा देखने मे आता है कि
(उदाहरण के लिए) गली नं० 14 और गली नं० 15 के बीच के मकानों के
नम्बर 1400 और 1500 के बीच के होंगे, जबकि गली नं० 15 और गली नं०
16 के बीच के मकानों के नम्बर 1500 और 1600 के बीच के होंगे चाहे
1400 वाले नम्बर पूरे खत्म न हुए हों। हमारा इससे काम नहीं चलेगा क्योंकि
यहाँ जब हम एक ब्लॉक से अगले ब्लॉक मे जाते हैं तो नम्बर एकदम बदल
जाते हैं। या फिर हम समय निर्देशांक को निम्न ढग से मान सकते हैं मिश्र
परिवार मे एक के बाद एक दो नामों के जन्म के बीच की अवधि पर विचार

करें। यदि कोई घटना इतिहास में स्मिथ 3000 और 3001 में स्मिथ के जन्म दिवसों के बीच हुई हो तो उसका निर्देशांक 3000 और 3001 के बीच होगा। इस निर्देशांक का एक अंश वर्ष के उस भाग को व्यक्त करेगा जो 3000वें स्मिथ के जन्म के पश्चात् गुजर चुका है। (स्पष्ट है कि स्मिथ-परिवार में एक के बाद एक दो सदस्यों के जन्म के बीच कभी भी एक वर्ष की अवधि नहीं रही होगी)। समय निर्देशांक का इस ढंग से निर्धारण पूर्णतः निश्चित है परन्तु यह हमारे काम के लिए मान्य नहीं है क्योंकि स्मिथ के जन्म से ठीक पहले और ठीक बाद घटनाओं के बीच अनियमित अन्तर होंगे इसलिए सतत यात्रा में आपके समय निर्देशांक में परिवर्तन सतत नहीं होगा। यह माना जाता है कि माप के अभाव में भी हम जानते हैं कि सतत यात्रा क्या होती है। और यदि दिक्-काल में आपकी स्थिति लगातार बदल रही हो तो आपके चारों निर्देशांक भी लगातार बदलते रहेंगे। चाहे उनमें से एक, या दो या तीन बिलकुल न बदलें परन्तु जो भी परिवर्तन होता है वह बिना झटकों के यानी सतत होना चाहिए। इससे स्पष्ट हो जाता है कि निर्देशांक निर्धारित करने में क्या-क्या वर्जित है।



अपने निर्देशांकों में होने वाले वैध परिवर्तनों को समझाने के लिए माना कि आप इन्डिया रबर का एक मुलायम टुकड़ा लेते हैं। जब यह बिना खिंची अवस्था में हो तब इस पर छोटे छोटे खाने बनाओ जिनकी प्रत्येक भुजा 1/10 इंच लम्बी हो। इन खानों के कोनों पर छोटे छोटे पिन लगाओ। इनसे हम किसी एक पिन के दो निर्देशांक ले सकते हैं। सबसे पहले किसी एक निश्चित पिन से चलो और उस पिन के ठीक नीचे तक जाओ और फिर वहाँ से ऊपर उस पिन तक पहुँचो। प्रत्येक में जितने पिन आते हैं वे उस पिन के निर्देशांक होंगे। चित्र में माना कि हम O पिन से आरम्भ करते हैं और P पिन के निर्देशांक मालूम करते हैं। P का स्थान तीसरी पंक्ति और 5वें कॉलम में है इसलिए रबर के समतल में इसके निर्देशांक 5 और 3 होंगे।

अब इंडिया रबर के उस टुकड़े को मनचाहे ढंग से खींचो और मरोड़ो। माना कि अब पिन दूसरे चित्र में दिया गया रूप ग्रहण कर लेते हैं। छोटे खण्ड

अब दूरियों का हमारी सकल्पना के अनुसार व्यक्त नहीं करते, परन्तु वे अब भी निर्देशाक का काम उसी तरह देंगे। रबर के टुकडे के समतल में P के निर्देशाक अब भी 5 और 3 माने जा सकते हैं और हम इंडिया रबर के टुकडे को अब भी समतल मान सकते हैं हालांकि हमने मरोडकर उसका रूप बिगाड दिया है और वह साधारण समतल नहीं रह गया है। इस प्रकार के सतत विरूपणों का कोई असर नहीं पडता।

अब हम एक दूसरा उदाहरण लगे। चारा निर्देशाको को निर्धारित करने के लिए माना कि हम लोहे की छड के बजाय एक जीवित सर्पमीन लेते हैं जो लगातार रेंग रही हो। किसी समय चाहे सर्पमीन किसी भी आकार में हो हम उसके नीप से पूँछ तक की दूरी L मानेंगे। सर्पमीन सतत है और वह सतत रूप से रेंग रही है। इसलिए निर्देशाक निर्धारण के लिए हम उस दूरी का माप मान सकते हैं। सिवाय इसके कि वह सतत हो, इसके अतिरिक्त निर्देशाक-निर्धारण की विधि पूर्णत परम्परागत है इसलिए एक जीवित सर्पमीन भी उतनी ही उपयुक्त होगी जितनी कि लोहे की छड।

हम ऐसा सोचते हैं कि वास्तविक रूप से शुद्ध मापों के लिए जीवित सर्पमीन के बजाय लोहे की छड प्रयुक्त करना अच्छा रहता है। परन्तु यह भ्रम है। यह भ्रम इसलिए नहीं है कि सर्पमीन से भी हम वह काम ले सकते हैं जो लोहे की छड से ले सकते थे बल्कि इसलिए है कि लोहे की छड भी उससे अधिक उपयोगी नहीं है जितनी कि प्रत्यक्ष रूप से सर्पमीन है। कहने का उद्देश्य यह नहीं है कि सर्पमीन दृढ है बल्कि यह है कि लोहे की छड वास्तव में रेंगती है। किसी एक प्रेक्षक की दृष्टि में जो किसी एक प्रकार से गति कर रहा है, सर्पमीन दृढ मालूम पडेगी, जबकि लोहे की छड उसी प्रकार रेंगती हुई मालूम पडेगी जैसी हमें सर्पमीन मालूम पडती है। अन्य व्यक्तियों के लिए जो हमसे प्रेक्षक में अर्थात् दोनों से भिन्न गति कर रहे हैं। सर्पमीन और छड दोनों ही रेंगते हुए मालूम पडेंगे। और यह मानना अनुचित होगा कि उनमें से एक प्रेक्षक सही है और दूसरा गलत है। ऐसी परिस्थितियों में हम जो कुछ देखते हैं वह पूर्णत प्रेक्षित भौतिक घटना का अपना लक्षण नहीं है बल्कि प्रेक्षक के दृष्टिकोण पर भी निर्भर करता है। समय और दूरियों की मापों से वस्तुओं के अपने गुण प्रकट नहीं होते, उनसे केवल मापने वाले से वस्तुओं का सम्बन्ध ही ज्ञात हो सकता है। इसलिए भौतिक संसार के बारे में प्रेक्षणों से जो जानकारी प्राप्त होती है वह जितना हम समझते थे उससे अधिक अमूर्त है।

यह जान लेना जरूरी है कि ज्यामिति जैसी कि हम पुराने समय से स्कूलों में पढ़ते आए हैं अब एक पृथक विज्ञान की शाखा न रहकर भौतिकी में ही आत्मसात हो गई है। प्रारम्भिक ज्यामिति की दो सकल्पनाएँ हैं सीधी रेखा और वृत्त। जो आपको एक सीधी छड मालूम पडती है जिसके सभी अग मौजूद

हैं सम्भवत यह दूसरे प्रेक्षक को एक रॉकेट की उडान या एक प्रकार के वक्र की भांति लगेगी जिसके भाग क्रम से एक एक करके बन रहे हो। वृत्त दूरियों की माप पर निर्भर करता है क्योंकि वह उस बिन्दुओं का बना होता है जो केन्द्र से बराबर दूरी पर स्थित हो और हम देख ही चुके हैं कि दूरियों की माप व्यक्तिनिष्ठ होती है और प्रेक्षक की गति पर निर्भर करती है। वृत्त में वस्तुनिष्ठ प्रामाणिकता का न होना माइकल्सन-मोर्ली प्रयोग से सिद्ध हो गया था, और एक दृष्टि से, यही आपेक्षिकता के सम्पूर्ण सिद्धान्त का आरम्भ बिन्दु है। हमारी मापों के लिए जिन दृढ़ वस्तुओं की आवश्यकता होती है वे कुछ ही प्रेक्षकों के लिए दृढ़ होती हैं अन्य प्रेक्षकों के लिए उनकी परिमाप मतत रूप से बदलती रहती है। केवल पृथ्वी तक सीमित रहने वाली हमारी अपनी दृढ़ धारणाओं के कारण हम ही ज्यामिति को भौतिकी से अलग मानने लगते हैं।

यही कारण है कि हम आरम्भ से ही अपने निर्देशांकों को भौतिक महत्त्व देने का प्रयत्न नहीं करते हैं। पहले भौतिकी में प्रयुक्त निर्देशांकों को ध्यानपूर्वक मापी गई दूरियाँ माना जाता था, परन्तु अब हम समझते हैं कि ऐसी सावधानी की कोई आवश्यकता नहीं है। केवल बाद में ही ऐसी सावधानी की आवश्यकता होती है। अब तो हमारे निर्देशांक केवल घटनाओं का क्रमिक रूप से सारणीबद्ध रूप मात्र है। परन्तु गणित में एक विधि है जिसे टेन्सर विधि कहते हैं। यह एक ऐसी शक्तिशाली विधि है कि हम प्रत्यक्ष रूप से इतनी असावधानीपूर्वक निर्धारित निर्देशांकों को उतनी तत्परता से प्रयुक्त कर सकते हैं मानो हमने उन्हें प्राप्त करने के लिए सभी सम्भव सूक्ष्मतम यथार्थ माप ली हो। आरम्भ में ऊलजलूल रखने का लाभ यह है कि हम भ्रान्त क्षिप्त भौतिक धारणाएं बनाने से बच रहते हैं परन्तु यदि हम आरम्भ से ही यह मान लें कि हमारे निर्देशांकों का किसी प्रकार का भौतिक महत्त्व है तो हम ऐसी धारणाएं बनाने के लिए बाध्य हो जाते हैं।

इस बात की आवश्यकता नहीं है कि हम प्रचलित भौतिक घटनाओं से अनभिज्ञ रहते हुए आगे बढ़ें। हम कुछ बातें मालूम हैं। हम जानते हैं कि जब निर्देशांक किसी विशेष ढंग से चुन गए हों तो पुरानी न्यूटनी भौतिकी लगभग सही होती है। हम जानते हैं कि उपर्युक्त निर्देशांक होने पर आपेक्षिकता का विशिष्ट सिद्धान्त और भी अधिक सही होता है। इन तथ्यों से हम अपने नये निर्देशांकों के बारे में कुछ निष्कर्ष निकाल सकते हैं जो तर्कपूर्ण ढंग से निगमित करने पर *नए सिद्धान्त के अभिगृहीत (postulates)* मालूम पड़ेंगे। ये अभिगृहीत निम्नलिखित हैं —

1 पास-पास की घटनाओं के बीच का अन्तराल उसी रूप में होता है जो सामान्य दूरी के लिए प्रयुक्त किया है।

2 जब किसी पिण्ड पर गुरुत्व बल काम न कर रहे हों तब यह निक

काल में जिओडेसिक पर चलता रहेगा।

3 प्रकाश किरण ऐसे जिओडेसिक पर चली है जिसके किन्हीं दो भागों का अंतराल शून्य हो।

इनमें से प्रत्येक अभिगृहीत की कुछ व्याख्या करनी होगी।

हमारे पहले अभिगृहीत के अनुसार यदि दो घटनाएँ पास पास हैं (यह इतना आवश्यक भी नहीं है) तो उनके बीच का अंतराल, उनके निर्देशांकों के अंतरों की सहायता से किसी ऐसे सूत्र की सहायता से मालूम किया जा सकता है, जिसका वर्णन पिछले अध्याय में किया गया था। इसका मतलब यह है कि यदि हम निर्देशांकों के अंतरों के वर्ग और उनके गुणनफल लें और उन्हें उपयुक्त मात्राओं (जो भिन्न भिन्न स्थानों पर भिन्न होंगी) से गुणा करके जोड़ दें तो जो योगफल प्राप्त होगा वह अंतराल के वर्ग के बराबर होगा। हम पहले से ही यह नहीं मानते कि हम जानते हैं कि वर्ग और गुणनफलों को किस राशि से गुणा किया जाए। यह हम भौतिक घटनाओं के प्रेक्षण से ही मालूम करेंगे। परन्तु जैसा कि रीमान के गणित से सिद्ध होता है हम इतना तो जानते ही हैं कि दिक् काल के किसी छोटे भाग में हम निर्देशांक इस ढंग से ले सकते हैं कि अंतराल का रूप ठीक वैसा ही विशिष्ट हो जैसा कि आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धान्त में था। सीमित क्षेत्र में विशिष्ट सिद्धान्त लागू करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि उस क्षेत्र में गुरुत्व न हो। इतना ही काफी होगा कि गुरुत्व उस समस्त क्षेत्र में लगभग एक समान हो। इसमें हम विशिष्ट सिद्धान्त को किसी छोटे क्षेत्र में लागू कर सकते हैं। क्षेत्र कितना छोटा हो यह समीपवर्ती भाग पर निर्भर करता है। पृथ्वी के तल पर क्षेत्र इतना छोटा होना चाहिए कि पृथ्वी की वक्रता नगण्य हो। ग्रहों के बीच में यह इतना छोटा होना चाहिए कि उसमें सूर्य और ग्रहों का आकर्षण सर्वत्र एक समान हो। तारों के बीच में यही क्षेत्र बहुत बड़ा होगा—दो तारों के बीच की दूरी के आधे के बराबर—और तब भी उसमें इतनी अशुद्धियाँ नहीं होंगी कि उन्हें नापा जा सके।

इस प्रकार गुरुत्वाकर्षी पदार्थ से बहुत अधिक दूरी पर हम अपने निर्देशांक *एस ढंग से चुन सकते हैं कि वहाँ आकाश लगभग यूक्लिडीय हो जाए* वास्तव में यह तो इसी बात के कहने का केवल एक दूसरा तरीका है कि वहाँ आपेक्षिकता का विशिष्ट सिद्धान्त लागू होता है। पदार्थ के आस पास यद्यपि हम एक बहुत छोटा क्षेत्र ऐसा ले सकते हैं, जो लगभग यूक्लिडीय हो परन्तु ऐसे बड़े क्षेत्र में मार्गान्तर यूक्लिडीय नहीं हो सकता जिसमें गुरुत्व में काफी विचरण होता हो—यदि हम ऐसा करेंगे तो हम कम-से-कम दूसरे अभिगृहीत में व्यक्त हम कथन को त्याग देना पड़ेगा कि जो पिण्ड केवल गुरुत्वीय बलों के प्रभाव में गति करते हैं वे जिओडेसिक पर ही चलते हैं।

हम देख चुके हैं कि जिओडेसिक वह छोटी से छोटी रेखा है जो किसी पृष्ठ पर एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु तक खींची जा सकती हो, उदाहरण के लिए पृथ्वी पर बहुत वृत्त ही जिओडेसिक होते हैं। जब हम दिक् काल पर विचार करते हैं, तब गणित तो वही रहता है परन्तु उसकी भौतिक व्याख्या कुछ भिन्न होती है। आपेक्षिकता के व्यापक सिद्धान्त में केवल पास पास की घटनाओं के बीच ही निश्चित अन्तराल हो सकता है जो एक घटना से दूसरी तक जाने के लिए अपनाये गए पथ पर निर्भर नहीं करता। यदि घटनाएँ एक दूसरे से बहुत दूर हों तो उनके बीच का अन्तराल अपनाये गए पथ पर निर्भर करेगा और उसे मालूम करने के लिए पथ को छोटे छोटे खण्डों में बांटकर उनके अन्तरालों को जोड़ना पड़ेगा। यदि अन्तराल आकाशमय होगा तो कोई पिण्ड एक घटना से दूसरी घटना तक नहीं जा सकेगा, इसलिए जब हम पिण्डों के गति करने के ढंग पर विचार करते हैं तो अन्तराल को कालमय मानना पड़ता है। यदि समीप की दो घटनाओं के बीच का अन्तराल कालमय हो तो एक घटना से दूसरी घटना की ओर जाने वाले किसी प्रेक्षक की दृष्टि में यह दो घटनाओं के बीच का समय मालूम होगा। इसलिए उस व्यक्ति के लिए जो एक घटना से दूसरी की ओर जा रहा है दो घटनाओं के बीच का कुल अन्तराल उसकी घड़ी के अनुसार वह समय होगा जो उसे एक घटना से दूसरी तक यात्रा करने में लगता है। कुछ पथों से यह समय लम्बा और कुछ से छोटा होगा। कोई व्यक्ति जितनी धीरे धीरे यात्रा करता है उसके अनुमान से यात्रा में उतना ही अधिक समय लगता है। इसे नीरस उक्ति नहीं समझ लेना चाहिए। मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि अगर आप लन्दन से एडिनबरा तक जा रहे हों तो धीरे यात्रा करने में आपको अधिक समय लगेगा। मैं तो इससे कहीं अधिक विचित्र बात कह रहा हूँ। मैं कह रहा हूँ कि यदि आप सुबह 10 बजे लन्दन से चलें और ग्रीनिच समय से 6 30 साय एडिनबरा पहुँचें तो आप जितना धीरे जाएंगे आपको उतना ही अधिक समय लगेगा—यदि समय आपकी घड़ी से मापा जाए। यह एक बिलकुल भिन्न बात है। पृथ्वी के किसी व्यक्ति के दृष्टिकोण से आपकी यात्रा में साढ़े आठ घंटे लगते हैं। परन्तु यदि आप सौरतन्त्र में घूमने वाली प्रकाश किरण होते और लन्दन से प्रात 10 बजे यात्रा प्रारम्भ करते और वृहस्पति से परावर्तित होकर शनि पर पहुँचते और इस प्रकार चलते हुए अन्त में परावर्तित होकर आप 6 30 बजे एडिनबरा पहुँचें तो आपका अनुमान होगा कि इस यात्रा में आपको कोई समय नहीं लगा है। यदि आप किसी घुमावदार मार्ग से गए होते और आप समय पर पहुँचने के लिए तेज चाल से चलते तो आपका मार्ग जितना अधिक लम्बा होगा आपका अनुमान होगा कि उसमें उतना ही कम समय लगा है। जैसे-जैसे आपकी चाल बढ़कर प्रकाश वेग के समीप होती जाएगी, यात्रा में लगा समय भी घटता जाएगा। मैं कहता हूँ कि यदि किसी

पिण्ड को मुक्त रूप से छोड दिया जाए तो यात्रा के लिए वह ऐसा मार्ग चुनेगा जिसमे यात्रा के दो चरणो के बीच का समय अधिक-से अधिक हो, यदि पिण्ड ने एक घटना से दूसरी घटना तक की यात्रा किसी दूसरे मार्ग से की होती तो उसकी अपनी घडियो के अनुसार कम समय लगता। यह इसी बात को कहने का दूसरा तरीका है कि यदि पिण्डो को अपने आप यात्रा करने के लिए छोड दिया जाए तो वे यात्रा अधिक-से अधिक सम्भव मन्द गति से करते हैं। यह एक प्रकार का अतरिक्षीय आलस्य का नियम है। गणितीय रूप मे व्यक्त करना चाहे तो हम कह सकते हैं कि वे जिओडेसिक मे चलते हैं जिसमे यात्रा की किन्ही दो घटनाओ के बीच का कुल अतराल किसी मार्ग पर अतराल की तुलना मे बडा होगा। (यह तथ्य कि वह छोटा होने के बजाय बडा होगा, इस बात पर आधारित है कि हम जिस अतराल पर विचार कर रहे हैं वह दूरी के मुकाबले समय के अधिक समरूप है)। उदाहरण के लिए यदि कोई व्यक्ति पृथ्वी को छोडकर बाहर निकल जाए और कुछ समय तक यात्रा करके पुन वापस आ जाए तो उसके जाने से वापस आने तक का समय पृथ्वी की घडियो की तुलना मे उसकी अपनी घडियो के अनुसार कम होगा। सूर्य के चारो ओर यात्रा करने के लिए पृथ्वी ऐसा पथ चुनती है कि उसके पथ के किसी भी मार्ग में स्वय इसी की घडियो से जितना समय लगेगा वह दूसरे किसी भी मार्ग से जाने वाली घडियो के मुकाबले अधिक होगा। यदि पिण्डो को स्वतत्र गति के लिए छोड दिया जाए तो वे दिक काल मे जिओडेसिको पर चलते हैं। ऐसा कहने का यही अभिप्राय है जिसका वर्णन ऊपर किया गया है।

यह याद रखना जरूरी है कि दिक काल यूक्लिडीय नही माना जाता है। जहा तक जिओडेसिको का सम्बन्ध है इसका प्रभाव यह होता है कि दिक काल एक पहाडी गाँव की भाँति मालूम पडता है। किसी पदार्थ खण्ड के आस-पास ऐसा मालूम पडता है मानो वहाँ दिक काल की पहाडी हो जो शिखर तक पहुँचते पहुँचते अधिकाधिक ढालदार होती जाती हैं जैसे किसी नेप्सैन की बोतल की सुराहीदार गर्दन होती है। वह एक अत्यन्त ढालदार चट्टान की भाँति हो जाती है और कोई पिण्ड, जो पहाडी के आस-पास आएगा वह शिखर पर पहुँचने का प्रयत्न नही करेगा बल्कि इसके चारो ओर ही जाएगा। सार रूप मे आइन्स्टाइन का गुरुत्व सम्बन्धी मत यही है। किसी पिण्ड का जो भी आचरण है वह उसके आस-पास के दिक-काल की प्रकृति के कारण होता है उसका कारण किसी दूर के पिण्ड से उद्भूत कोई रहस्यमय बल नही होता।

एक सादृश्य से यह बात और स्पष्ट हो जाएगी। मान लो कि किसी अधेरी रात मे बहुत-से व्यक्ति लालटेन लिये एक बहुत विशाल समतल पर विविध

दिशाओं में घूम रहे हैं। और माना कि समतल के किसी भाग में एक पहाड़ी है जिसके शिखर पर एक प्रज्वलित आकाशदीप है। यह पहाड़ी वैसी ही होनी चाहिए जैसा कि ऊपर वर्णन किया गया है अर्थात् ऊपर बढ़ने बढ़ते ढलानदार और शिखर पर एक अत्यन्त ढालदार चट्टान के रूप में। मैं अब यह मानूँगा कि समतल पर गाँव फैले हुए हैं और लोग लालटेन लिये हुए एक गाँव से दूसरे गाँव तक आ जा रहे हैं। समतल पर एक गाँव से दूसरे गाँव तक आने-जाने के लिए सरलतम पथ बने हुए हैं। ये पथ लगभग वक्र ही होंगे और पहाड़ी पर ऊपर की ओर कम होंगे और पहाड़ी के शिखर के पास वे अधिक तीव्र रूप से वक्र होंगे जबकि शिखर से दूर इतने वक्र नहीं होंगे। माना कि आप यह सब-कुछ किसी ऊँचे गुब्बारे में बैठे जितना अधिक सम्भव है, देख रहे हैं। वहाँ से आप भूमि नहीं देख सकते, आप केवल आकाशदीप और लालटेनें ही देख सकते हैं। आप नहीं जानते हैं कि वहाँ एक पहाड़ी है या उसके शिखर पर एक आकाशदीप है। आप देखेंगे कि जब लोग आकाशदीप के पास से गुज़रते हैं तो वे सीधे रास्ते पर नहीं रहते और वे जितने अधिक शिखर के समीप होते हैं उतना ही अधिक सीधे रास्ते से विचलित होते हैं। स्वाभाविक है कि आप इसे आकाशदीप का प्रभाव मानेंगे आप समझेंगे कि वह बहुत गर्म है और लोग जल जाने के डर से उसके पास नहीं जाते। परन्तु यदि आप दिन होने तक प्रतीक्षा करें तो आप पहाड़ी को देख सकेंगे और आपको पता चल जाएगा कि आकाशदीप तो केवल पहाड़ी के शिखर का संकेत देता है, इससे लालटेन लिये हुए लोगों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

इस सादृश्य में आकाशदीप सूर्य के अनुरूप है। लालटेन लिए हुये लोग ग्रह और धूमकेतु के अनुरूप हैं और पथ उनकी कक्षा को व्यक्त करते हैं तथा दिन के प्रकाश का प्रकट होना आइन्स्टाइन के आने के समान है। आइन्स्टाइन का कहना है कि सूर्य एक पहाड़ी के शिखर पर है और पहाड़ी दिक्-काल में है केवल आकाश में नहीं (पाठकों को मेरी यह सलाह है कि वे इसका चित्रण करने का प्रयत्न न करें क्योंकि यह असम्भव है।) प्रत्येक पिण्ड प्रति क्षण ऐसे मार्ग को अपनाने के लिए प्रवृत्त होता है जो सरलतम हो परन्तु पहाड़ी की उपस्थिति के कारण सरलतम मार्ग एक सीधी रेखा नहीं है। पदार्थ का हर छोटा खण्ड अपनी अपनी पहाड़ी के शिखर पर होता है जैसे मुर्गा अपने गोबर के ढेर पर बैठता है। जिसे हम पदार्थ का बड़ा खण्ड कहते हैं वह बड़ी पहाड़ी के शिखर पर स्थित पदार्थ खण्ड है। हम तो वास्तव में केवल पहाड़ी के बारे में ही जानते हैं, उसके शिखर पर पदार्थ का होना तो केवल सुविधा के लिए मान लिया गया है। शायद इसके मानने की कोई खास आवश्यकता भी नहीं है और हमारा केवल पहाड़ी से ही काम चल सकता है क्योंकि हम कभी भी किसी दूसरे की पहाड़ी के शिखर तक नहीं पहुँच सकते, ठीक उसी तरह जैसे

कोई झगडालू मुर्गा उस तुनकमिज़ाज पक्षी से केवल लड सकता है जो उसे दर्पण में दिखाई पड़ता है।

मैंने यहा आइन्स्टाइन के गुरुत्व नियम का केवल व्याख्यात्मक विवरण ही दिया है, इसके सही सही मात्रात्मक सूत्रबन्धन के लिए बहुत अधिक गणित की आवश्यकता होती है जो यहाँ देना सम्भव नही है। इसमे सबसे मज़ेदार बात यह है कि अब यह नियम दूर से क्रिया पर आधारित नहीं रहा, सूर्य ग्रहों पर किसी किस्म का प्रभाव नही डालता। जिस प्रकार ज्यामिती भौतिकी में विलीन हो गई है, उसी तरह, एक प्रकार से भौतिकी ज्यामिती में बदल गई है। गुरुत्वाकर्षण का नियम एक ज्यमितीय नियम हो गया है जिसके अनुसार प्रत्येक पिण्ड एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाने के लिए सरलतम मार्ग अपनाता है परन्तु पथ में आने वाली पहाडियों और घाटियों का इस मार्ग पर प्रभाव पड़ता है।

हम अभी तक यह मान रहे हैं कि विचाराधीन पिण्ड पर केवल गुरुत्वीय बलों का प्रभाव पड़ता है। अभी तक हमारा सम्बन्ध केवल गुरुत्व नियम से है, उप परमाणविक कणों के बीच के बलों से या विद्युत् चुम्बकीय बलों से नहीं। स्वयं आइन्स्टाइन, वाइल (Weyl) कलूज़ा (Kaluza) और क्लाइन (Klein) तथा अन्य ने इन सभी प्रकार के बलों को व्यापक आपेक्षिकता के अन्तर्गत लाने के कई प्रयत्न किए हैं, परन्तु कोई भी प्रयत्न अभी तक सन्तोष जनक नहीं रहा है। अभी हम इस पर विचार नहीं करेंगे क्योंकि ग्रहों पर विद्युत् चुम्बकीय या उप-परमाणविक बलों का सम्पूर्ण ग्रह के रूप में कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। उनकी गति को समझने के लिए केवल गुरुत्व पर विचार करना काफी होगा और हम इस अध्याय में उसी पर चर्चा कर रहे हैं।

हमारा तीसरा अभिगृहीत है प्रकाश ऐसे ढंग से चलता है कि उसके किन्हीं दो भागों के बीच का अन्तराल शून्य होता है। इसमें यह लाभ है कि यह केवल छोटी दूरियों के लिए ही नहीं है। यदि प्रत्येक छोटा अन्तराल शून्य है तो उन सब अन्तरालों का योग भी शून्य होगा, इसलिए एक ही प्रकाश के दूर-से-दूर के भागों का अन्तराल भी शून्य ही होगा। इस अभिगृहीत के अनुसार प्रकाश का पथ भी जिओडेसिक ही होता है। इस प्रकार दिक्-काल में जिओडेसिक ज्ञात करने की हमारे पास दो आनुभविक विधियाँ हैं, अर्थात् प्रकाश-किरणें और स्वतन्त्र रूप से घूमते हुए पिण्ड। स्वयं घूमते हुए पिण्डों में वे सब चीज़ें भी सम्मिलित हैं जिन पर सम्पूर्ण रूप में विद्युत् चुम्बकीय और उप परमाणविक बलों का पर्याप्त प्रभाव नहीं पड़ता। यानी उसमें सूर्य, तारे, ग्रह, उपग्रह और पृथ्वी पर गिरते हुए पिण्ड (कम से-कम यदि वे निर्वात में गिर रहे हों) भी शामिल हैं। जब आप पृथ्वी पर खड़े हों तो आप पर विद्युत् चुम्बकीय बल पड़ते हैं। आपके पैरों के आस पास स्थित इलेक्ट्रॉन और प्रोटॉन

आपके परो पर प्रतिकर्षण बल डालते हैं जो ठीक पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण बल का विरोध करने के लिए काफी होता है। इसी कारण आप पृथ्वी के अन्दर नही गिर जाते जो हालांकि बिलकुल ठोस मालूम पड़ती है परन्तु उसका अधिकांश स्थान खाली ही है।

अध्याय 9

आइन्स्टाइन के गुरुत्वाकर्षण नियम के प्रमाण

न्यूटन के बजाय आइन्स्टाइन के नियम को मान्यता देने के कारण एक हद तक आनुभविक है और एक हद तक तर्कसंगत। हम आनुभविक कारणों से प्रारम्भ करेंगे।

यदि ग्रहों और उनके उपग्रहों की कक्षाओं का परिकलन करना हो तो आइन्स्टाइन के गुरुत्वाकर्षण नियम से लगभग वे ही परिणाम निकलते हैं जो न्यूटन के नियम से निकलते हैं। यदि ऐसा न होता तो वह सही नहीं हो सकता था, क्योंकि न्यूटन के नियम से जो परिणाम निगमित हुए हैं वे प्रेक्षणों द्वारा बिलकुल सत्य निकले हैं। 1815 में जब आइन्स्टाइन ने सबसे पहले अपना नया नियम प्रकाशित किया तो उसमें केवल एक आनुभविक तथ्य ऐसा था जिसके आधार पर वह अपने सिद्धान्त को न्यूटन के सिद्धान्त से अच्छा कह सकता था। यह था बुध (Mercury) के रवि-नीच की गति।

दूसरे ग्रहों की भाँति बुध ग्रह भी सूर्य के गिर्द एक ऐसे इलिप्स में घूमता है जिसका एक फोकस सूर्य पर होता है। अपनी कक्षा के कुछ स्थानों पर दूसरे स्थानों की तुलना में वह सूर्य के अधिक समीप होता है। जहां वह सूर्य के सबसे अधिक समीप होता है उस स्थान को 'रवि-नीच' (Perihelion) कहते हैं। प्रेक्षणों द्वारा यह देखा गया कि बुध जब एक बार सूर्य के निकटतम होता है तो उससे अगली बार निकटतम होने तक वह सूर्य की ठीक एक परिक्रमा नहीं करता बल्कि उससे कुछ अधिक करता है। यह अन्तर बहुत कम होता है यह एक शताब्दी में 42 सेकिण्ड के कोण के बराबर होता है। चूंकि बुध एक शताब्दी में सूर्य की 400 से ज्यादा परिक्रमा करता है इसलिए एक रवि-नीच से अगले रवि-नीच तक जाने में बुध पूर्ण परिक्रमा से लगभग $\frac{1}{10}$ सेकिण्ड कोण अधिक जाता है। न्यूटनीय सिद्धान्त से यह सूक्ष्म अन्तर ज्योतिषज्ञों के लिए एक गुत्थी बन गया। दूसरे ग्रहों के कारण उत्पन्न क्षोभ से एक निश्चित प्रभाव पड़ता था, परन्तु यह सूक्ष्म अन्तर इन क्षोभों की छूट देने के बाद भी बचता था। आइन्स्टाइन के सिद्धान्त से इस शेष अन्तर को भी समझा जा सकता था। दूसरे ग्रहों पर भी ऐसा ही प्रभाव पड़ता है

परन्तु वह इससे भी कम होता है और उसका प्रेक्षण और भी कठिन होता है। जब से आइंस्टाइन ने अपना नया नियम प्रकाशित किया है यह प्रभाव पृथ्वी के लिए भी देखा जा चुका है और कुछ हद तक मंगल के लिए भी देखा जा चुका है। पहले पहल न्यूटन के मुकाबले आइंस्टाइन के सिद्धान्त में केवल रवि-नीच प्रभाव ही एकमात्र आनुभविक अच्छाई थी।

उसकी दूसरी सफलता इससे भी अधिक सनसनीखेज थी। प्रचलित मत के अनुसार निर्वात में प्रकाश सीधी रेखाओं में चलना चाहिए। चूंकि वह द्रव्य-कण से निर्मित नहीं है इसलिए उस पर गुरुत्व का कोई प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए। फिर भी पुराने मत का बिना विशेष खण्डन किए हुये ही यह मानना सम्भव था कि सूर्य के निकट से गुजरने में प्रकाश सीधी रेखा से ऐसे ही विचलित होता है मानो वह द्रव्य-कणों से निर्मित हो। पर आइन्स्टाइन का कहना था कि उसके गुरुत्वाकर्षण नियम से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रकाश में इससे दुगुना विचलन होना चाहिए। इसका मतलब यह हुआ कि यदि किसी तारे का प्रकाश सूर्य के बहुत निकट से गुजरे तो आइंस्टाइन के अनुसार तारे से आने वाली किरण में पौने दो सेकिण्ड के कोण के बराबर विचलन होना चाहिए। उसके विरोधी इससे आधा विचलन मानने के लिए तैयार थे। ऐसा तो प्रतिदिन नहीं होता कि सूर्य की सीध में स्थित किसी तारे को देखा जा सके। यह तो केवल पूर्ण ग्रहण के समय ही सम्भव है और वह भी हमेशा नहीं क्योंकि हो सकता है कि कोई भी चमकदार तारा उचित स्थिति में नहीं हो। एडिंगटन ने बताया कि इस दृष्टि से सबसे अच्छा दिन 29 मई का है क्योंकि उस दिन कई चमकदार तारे सूर्य के निकट होते हैं। असीम सौभाग्य से ऐसा हुआ कि 29 मई 1919 को एक पूर्ण सूर्य ग्रहण पड़ा। दो ब्रिटिश दलों ने ग्रहण के दौरान सूर्य के समीप के तारों के चित्र लिये और उनके परिणामों से आइन्स्टाइन के पूर्वानुमान की पुष्टि हुई। कुछ ज्योतिषियों को इस बारे में संदेह था कि यथार्थता के लिए सारी सावधानियाँ बरती गई थीं या नहीं। उन्हें भी इसका यकीन आ गया जब बाद में एक ग्रहण के समय उनके अपने प्रेक्षणों से भी यही परिणाम निकला। बाद में कई ग्रहण के समय लिये गए प्रेक्षणों के परिणामों में भी आइन्स्टाइन के अनुमान की पुष्टि हो चुकी है और यह अब सर्वत्र माना जाने लगा है।

तीसरा प्रायोगिक परीक्षण कुल मिलाकर आइन्स्टाइन के पक्ष में है परन्तु इसमें जो खामियाँ हैं वे इतनी छोटी हैं कि उन्हें मुश्किल से मापा भी जा सकता है इसलिए इसके परिणाम निर्णायक नहीं हैं। इस प्रभाव को समझाने से पहले कुछ प्रारम्भिक व्याख्याएं देना जरूरी है। किसी तत्व के स्पेक्ट्रम में विभिन्न रंगों के प्रकाश की बहुत-सी रेखाएं होती हैं जो तत्व से भिन्न अवस्था में उत्सर्जित होती हैं उन्हें एक प्रिज्म की सहायता से पृथक किया जा सकता

है। य (लगभग) समान ही रहती हैं चाहे वह तत्त्व पृथ्वी पर हो, सूय पर, या तारों पर हो। प्रत्येक रेखा एक निश्चित रग की होती है और उसका तरग दध्य भी निश्चित होता है। अधिक दध्य वाली तरगें स्पेक्ट्रम के लाल सिरे की ओर होती हैं और लघु दैध्य वाली तरगें बैगनी सिरे पर होती हैं। यदि प्रकाश का स्रोत आपकी दिशा म आ रहा हो तो प्रतीयमान तरग दैध्य ठीक उसी तरह कुछ छोटी हो जाती हैं जैसे यदि आप हवा के विरुद्ध जा रहे हों तो तरगें आपकी ओर तेजी से आती हुई मालूम पडती है। यदि प्रकाश का स्रोत आपसे विपरीत दिशा में जा रहा हो तो प्रतीयमान तरग दैध्य इसीलिए लम्बी हो जाती हैं। इससे हम यह जानकारी प्राप्त हो सकती है कि तारा हमारी ओर आ रहा है या हमसे दूर जा रहा है। यदि व हमारी ओर आ रहे हों तो किसी तत्त्व के सभी तरग दध्य थोडे थोडे बैगनी रग की ओर हट जाते हैं और यदि हमसे दूर जा रहे हों तो लाल रग की ओर हटते हैं। आप किसी दिन ध्वनि म भी इसके सदृश प्रभाव देख सकते हैं। यदि आप स्टेशन पर हों और एक एक्सप्रेस गाडी सीटी देती हुई आ रही है तो जब गाडी आपकी ओर आ रही है तब सीटी का स्वर (note) अधिक तीक्ष्ण (shrill) मालूम पडेगा और जब गाडी जा रही हो तब कम तीक्ष्ण होगा। शायद कुछ स लोग सोचें कि स्वर 'वास्तव म बदल गया है, परन्तु आपके सुनने म जो परिवर्तन आता है उसका कारण यह है कि गाडी पहले आपकी दिशा म आ रही थी और बाद मे आपसे दूर जा रही थी। गाडी म बैठे हुए व्यक्तियों को ऐसा कोई परिवर्तन महसूस नहीं होगा। आइन्स्टाइन का सम्बन्ध इस प्रकार के प्रभाव से नहीं था। पृथ्वी से सूय तक की दूरी मे कभी कोई विशेष परिवर्तन नहीं होता, इसलिए अपने तत्काल उपयोग के लिए हम उसे स्थिर मान सकते हैं। आइन्स्टाइन ने अपने गुरुत्वाकषण नियम से यह परिणाम निकाला कि सूय पर (जहाँ गुरुत्वाकषण बहुत अधिक है) स्थित परमाणु म यदि कोई आवत्त प्रक्रम हो रहा है तो पृथ्वी पर स्थित वैसे ही परमाणु म होने वाले समान प्रक्रम की तुलना म, हमारी घडी के अनुसार, वह मन्द गति से होगा। सूय पर और पृथ्वी पर 'अन्तराल' समान होता है परन्तु विभिन्न क्षेत्रों म एक ही अन्तराल का समय एक ही नहीं होगा। इसका कारण यह है कि गुरुत्व निर्मित दिक्-काल का स्वरूप पहाडियादार है। इसके फलस्वरूप यदि प्रकाश सूय से आ रहा हो तो स्पेक्ट्रम म कोई भी रेखा, पृथ्वी पर स्थित स्रोत से प्राप्त प्रकाश के स्पेक्ट्रम की रेखा की तुलना मे कुछ लाल रग की तरफ हटी हुई मालूम पडेगी। इसका प्रत्याशित प्रभाव बहुत ही कम है—इतना कम है कि अभी तक निश्चित रूप स नहीं कहा जा सकता कि यह प्रभाव होता भी है या नहीं। आइन्स्टाइन के अनुसार ऐसा प्रभाव प्रत्येक तारे में होना चाहिए परन्तु उसके मापने म इतनी वैज्ञानिक कठिनाइयाँ आती हैं

उदाहरण के लिए सूय का गुरुत्व बल, पृथ्वी के गुरुत्व बल स अधिक होता है। न्यूटन का कहना है कि दो पिण्डों के बीच गुरुत्वाकर्षण बल उनके द्रव्यमान के गुणनफल के समानुपाती होता है। अब हम विभिन्न पिण्डो का एक पिण्ड उदाहरण के लिए सूय, के प्रति आकर्षण बल पर विचार करेंगे। विभिन्न पिण्डो पर पडने वाला आकर्षण बल उनके द्रव्यमान के समानुपाती होता है इसलिए उसके कारण सभी पिण्डो म समान त्वरण उत्पन्न होगा। इस प्रकार यदि हम गुरुत्व द्रव्यमान का (1) अथ लेत है अर्थात् इस पर विचार करत हैं कि काई पिण्ड गुरुत्व म किस प्रकार का आचरण करता है, तो हम देखेंगे कि जडत्व और गुरुत्व द्रव्यमानों की समानता' जो इतनी प्रबल मालूम होती है वह केवल निम्न रह जाती है कि किसी निश्चित गुरुत्वीय परिस्थिति म सभी पिण्ड समान आचरण करते हैं। जहा तक पृथ्वी के तल का सम्बन्ध है गलीलियो की सबसे पहली खोज यही थी। अरस्तू का विचार था कि हल्की वस्तुओं की अपेक्षा भारी वस्तु तजी से गिरती है। गैलीलियो ने दिखाया कि ऐसी बात नहीं है बशर्ते कि हवा का प्रतिरोध न हो। निर्वात म सीसे का भारी टुकडा भी उतनी ही तेजी से गिरता है जितनी तेजी से एक पख गिरता है। ग्रहो के सम्बन्ध म तदनुरूप तथ्य न्यूटन न ही सिद्ध किया था। सूय स किसी दूरी पर कम द्रव्यमान वाल धूमकेतु म भी ठीक उतना ही त्वरण होता है जितना कि उसी दूरी पर एक ग्रह मे होता है। इसलिए गुरुत्व जिस प्रकार किसी पिंड को प्रभावित करता है वह इस बात पर निभर करता है कि पिण्ड किस जगह है वह पिण्ड की प्रकृति पर जरा भी निभर नहीं करता। इसस यह अनुमान होता है कि गुरुत्व प्रभाव अवस्थिति का लक्षण है और आइन्स्टाइन भी यही कहना चाहता है।

जहाँ तक गुरुत्व-द्रव्यमान के अथ (2) का सम्बन्ध है अर्थात् किसी पिण्ड द्वारा उत्पन्न बल की तीव्रता का सम्बन्ध है, तो यह जरूरी द्रव्यमान के समानुपाती नहीं होता। इस समस्या पर विचार करन के लिए जटिल गणित की आवश्यकता होती है जो मैं यहाँ नहीं दूँगा।[1]

यदि गुरुत्व नियम अपन आस-पास के वातावरण का लाक्षणिक है और हम ऐसा मानन के कारणों पर भी विचार कर चुके हैं तो उसकी प्रकृति को जानने के लिए हमार पास दूसरा साधन भी है। इस किसी एस नियम के रूप म व्यक्त किया जाना चाहिए कि यदि हम किसी विभिन्न निर्देशांक प्रणाली का प्रयोग करें तो भी वही नियम लागू हो। हम देख चुके हैं कि शुरू-शुरू म हम यह नहीं मानना चाहिए कि हमार निर्देशांको का कोई भौतिक अथ है वे तो दिक्-काल के विभिन्न भागों के समाकरण की केवल क्रमबद्ध विधियाँ के रूप

1 एडिंग्टन की पुस्तक The Mathematical Theory of Relativity, Second Edition पृष्ठ 128 देखिए।

म हैं। चूँकि ये केवल परम्परागत होते हैं इसलिए भौतिक नियमों में उनका समावेश नहीं हो सकता। इसका अभिप्राय यह है कि यदि हम किसी नियम को एक निर्देशांक प्रणाली में सही सही व्यक्त कर सकें तो इसे दूसरी निर्देशांक प्रणाली में भी उसी सूत्र में व्यक्त करना सम्भव होना चाहिए। या और यथार्थ रूप में यों कह सकते हैं कि नियम को व्यक्त करने के लिए एक ऐसा सूत्र होना चाहिए जो अपरिवर्तित ही रहे चाहे हम निर्देशांकों को कितना भी क्यों न बदल दें। ऐसे सूत्र टेनसर सिद्धान्त के अन्तर्गत ही आते हैं। और टेनसर सिद्धान्त से पता चलता है कि एक सूत्र ऐसा है जो स्वयं गुरुत्व नियम जैसा लगता है। जब इस सम्भाव्यता पर विचार किया गया तो मालूम हुआ कि इससे सही परिणाम निकलते हैं और यही इसका आनुभविक पुष्टिकरण है। परन्तु यदि आइन्स्टाइन का नियम अनुभव के अनुरूप न पाया गया होता तो भी हम वापस न्यूटन के नियम पर नहीं जा सकते थे। हम तब से टेनसरों में व्यक्त किसी नियम की खोज निकालने के लिए बाध्य हो जाते जो हमारी निर्देशांक पद्धति पर निर्भर न करता। गणित की सहायता के बिना टेनसर सिद्धान्त को समझना असम्भव है और गणित न जानने वालों के लिए तो इतना ही काफी है कि यह ऐसी वैज्ञानिक विधि है जिससे अपने माप और नियमों में से प्रायोगत अंश का बहिष्कार किया जा सकता है और इस तरह हम ऐसे भौतिक नियमों पर पहुँच सकते हैं जो प्रेक्षक के दृष्टिकोण से स्वतन्त्र हों। आइन्स्टाइन का गुरुत्वाकर्षण नियम इस विधि का सबसे अच्छा उदाहरण है।

अध्याय 10

द्रव्यमान, संवेग, ऊर्जा और क्रिया

मात्रात्मक परिशुद्धता प्राप्त करना जितना महत्वपूर्ण है उतना ही कठिन भी है। भौतिक माप अत्यधिक यथार्थता के साथ ली जाती है। यदि माप लेने में कम सावधानी बरती जाती तो उनसे ऐसी सूक्ष्म असंगतियों का पता कभी भी न चलता जो आपेक्षिकता सिद्धान्त के लिए प्रायोगिक आंकड़े प्रदान करती हैं। आपेक्षिकता के आविर्भाव से पहले गणितीय भौतिकी में ऐसी धारणाएं प्रयुक्त होती थीं जो इतनी ही परिशुद्ध मानी जाती थीं जितनी भौतिक माप, परन्तु ऐसा हुआ कि वे तार्किक रूप से दोषपूर्ण निकलीं और यह दोष परिकलन से प्रत्याशित मान से बहुत अल्प विचलन के रूप में प्रकट हुआ। इस अध्याय में मैं यह दर्शाऊंगा कि आपेक्षिकता से पूर्व की भौतिकी की मूलभूत संकल्पनाएं किस प्रकार प्रभावित होती हैं और उनमें किस किस परिवर्तन की आवश्यकता है।

हम पहले भी द्रव्यमान के बारे में चर्चा कर चुके हैं। हमारे नित्य उपयोग के लिए द्रव्यमान और भार में कोई अन्तर नहीं होता। भार की सामान्य माप—औंस, ग्राम इत्यादि—वास्तव में द्रव्यमान ही है। परन्तु ज्यों ही हम शुद्ध माप लेना चाहते हैं हम द्रव्यमान और भार में भेद करना पड़ता है। तोलने की साधारण रूप से दो विधियां प्रचलित हैं एक तराजू की और दूसरी कमानीदार तुला की। जब आप किसी यात्रा पर जाते हैं और आपका सामान तोला जाता है तो उसे किसी तराजू के पलड़े पर नहीं रखा जाता उसे कमानी (Spring) पर रखा जाता है। भार के कारण कमानी कुछ दब जाती है जिसे डायल की सूई से पढ़कर मालूम कर सकते हैं। आपका वजन बतलाने वाली स्वचालित मशीनों में भी यही सिद्धान्त काम में आता है। जब तक आप सफर के किसी एक भाग में रहते हैं भार में कोई अन्तर मालूम नहीं पड़ेगा परन्तु यदि आप दो भिन्न प्रकार की तोलने की मशीनों से कई भिन्न स्थानों पर भार तोलें तो आप देखेंगे कि यदि वे यथार्थ हैं तो उनके परिणाम हमेशा एक जैसे नहीं होंगे। साधारण तराजू में सब जगह एक ही

परिणाम प्राप्त होगा परन्तु कमानीदार तुला से नहीं। कहने का अभिप्राय यह है कि यदि आपके पास सीसे का एक टुकड़ा है जो तराजू से तोलने पर 10 पौंड है तो संसार के किसी भी भाग में तराजू से उसका भार 10 पौंड ही होगा। परन्तु यदि किसी कमानीदार तुला से लन्दन में उसका भार 10 पौंड है तो उसी तुला से तोलने पर उत्तरी ध्रुव पर उसका भार अधिक होगा, विषुवत रेखा पर कम, हवाई जहाज में ऊँचाई पर कम, तथा कोयले की खान की तली में भी कम होगा। वास्तविकता यह है कि दो प्रकार के उपकरणों से हम भिन्न राशियों को मापते हैं। तराजू से हम जो कुछ मापते हैं उसे (कुछ संशोधनों को छोड़कर जिन पर हम अभी आगे विचार करेंगे) 'पदार्थ की मात्रा' कह सकते हैं। एक पौंड पंखों में और एक पौंड सीसे में 'पदार्थ की मात्रा' समान होती है। मानक 'भार' से, जो वास्तव में मानक 'द्रव्यमान' है तराजू के दूसरे पलड़े में रखी वस्तु का द्रव्यमान मापते हैं। परन्तु भार, पृथ्वी के गुरुत्व के कारण उत्पन्न एक गुण है यह बल की वह मात्रा है जिससे पृथ्वी किसी पिण्ड को अपनी ओर आकर्षित करती है। यह बल भिन्न स्थानों पर भिन्न भिन्न होता है। सबसे पहली बात यह है कि पृथ्वी से बाहर किसी पिण्ड पर पड़ने वाला आकर्षण बल पृथ्वी के केन्द्र से उसकी दूरी के वर्ग के प्रतिलोमानुपाती होता है, इसलिए अधिक ऊँचाई पर बल कम होगा। दूसरी बात यह है कि जब आप किसी कोयले की खान में उतरते हैं तो पृथ्वी का एक भाग आपके ऊपर होता है और वह पदार्थ को नीचे के बजाय ऊपर की ओर खींचता है, इसलिए नीचे की दिशा में कुल आकर्षण बल पृथ्वी की सतह के मुकाबले कम होगा। तीसरी बात यह है कि पृथ्वी के घूर्णन के कारण एक 'अपकेन्द्री बल' होता है जो गुरुत्व के विरुद्ध कार्य करता है। विषुवत् रेखा पर यह सबसे अधिक होता है क्योंकि वहाँ पृथ्वी के घूर्णन के कारण तीव्रतम गति होती है ध्रुवों पर यह बिलकुल नहीं होता क्योंकि वे घूर्णन अक्ष पर होते हैं। इन कारणों से कोई पिण्ड जिस बल से पृथ्वी की ओर आकर्षित होता है वह भिन्न भिन्न स्थानों पर इतना भिन्न होता कि उसके अंतर को मापा जा सके। कमानीदार तुला से यही बल मापा जाता है यही कारण है कि कमानीदार तुला से विभिन्न स्थानों पर भिन्न परिणाम प्राप्त होते हैं। जहाँ तक तराजू का सम्बन्ध है मानक 'भारों' पर भी उतना ही प्रभाव पड़ता है जितना तोली जाने वाली वस्तु पर परन्तु उससे हम द्रव्यमान मालूम करते हैं, 'भार' नहीं। मानक 'भार' (बाट) का द्रव्यमान सब जगह समान रहता है परन्तु उसका वजन सब जगह समान नहीं रहता यह वास्तव में द्रव्यमान का मानक है भार का नहीं। सद्धांतिक उपयोग के लिए द्रव्यमान, जो किसी वस्तु के लिए अपरिवर्ती होता है भार से अधिक महत्त्वपूर्ण है। भार परिस्थिति के अनुसार बदलता रहता है। द्रव्यमान को हम शुरू में 'पदार्थ की

मात्रा' मान सकते हैं। हम देखेंगे कि ऐसा मानना पूर्ण रूप से सत्य नहीं है परन्तु आगे की प्रगति के लिए हम इसे आधारभूत मान सकते हैं।

सद्धांतिक उपयोग के लिए हम द्रव्यमान को उस बल के बराबर मान सकते हैं जो एक निश्चित त्वरण उत्पन्न करने के लिए आवश्यक होगा। कोई पिण्ड जितने अधिक द्रव्यमान वाला होगा उसके वेग में एक निश्चित समय में निश्चित परिवर्तन लाने के लिए उतने ही अधिक बल की आवश्यकता होती है। पहले आधे मिनट के अन्त में 10 मील प्रति घंटे का वेग प्राप्त करने में एक छोटी रेलगाडी के मुकाबले बडी रेलगाडी के लिए अधिक बल की आवश्यकता पडेगी। या हमारी परिस्थितिया ऐसी हो सकती हैं कि कई विभिन्न पिण्डो पर समान बल पडता हो। उस स्थिति में यदि हम उनमें उत्पन्न होने वाले त्वरणो को माप सकें तो हम उनके द्रव्यमानों का अनुपात बता सकेंगे, द्रव्यमान जितना अधिक होगा उसका त्वरण उतना ही कम होगा। हम इसको स्पष्ट करने के लिए एक उदाहरण ले सकते हैं जो आपेक्षिकता में बडे महत्त्व का है। रेडियोसक्रिय कण बीटा कण (इलेक्टान) उत्सर्जित करते हैं जिनके वेग बहुत अधिक होते हैं। यदि उन्हें जल वाष्प में से गुजारा जाए तो वे उसमें अभ्र बनाएँगे और इसी से उनका पथ देखा जा सकता है। इसके साथ-साथ उन पर ज्ञात विद्युत् और चुम्बकीय बल डालें तो हम यह भी मालूम कर सकते हैं कि इन बलो के कारण उनके पथ में कितना विचलन होता है। इससे उनके द्रव्यमानो की तुलना की जा सकती है। यह देखा गया कि वे जितनी तेज चाल से चलते हैं उनका द्रव्यमान उतना ही अधिक होता है बशर्ते कि प्रेक्षक स्थिर रहे। यह भी ज्ञात है कि गति के प्रभाव को छोड कर सभी इलक्टानो का द्रव्यमान समान होता है।

यह सब-कुछ आपेक्षिकता सिद्धान्त के आविष्कार से पहले ही मालूम था परन्तु इससे यह पता चला कि द्रव्यमान के सम्बन्ध में निश्चितता की जो परम्परागत धारणा चली आ रही है वह वास्तव में सत्य नहीं है। द्रव्यमान को 'पदार्थ की मात्रा' माना जाता था और उसे अचर माना जाता था। अब यह देखा गया कि लम्बाई और समय की भांति द्रव्यमान भी प्रेक्षक के अनुसार आपेक्षिक होता है और गति के कारण वह ठीक उसी अनुपात में बदलता रहता है। परन्तु इसका समाधान हो सकता था। हम उसके स्थान पर निजी द्रव्यमान ले सकते थे अर्थात वह द्रव्यमान जो पिण्ड के साथ-साथ गति करने वाले किसी प्रेक्षक की माप के अनुसार होगा। द्रव्यमान की माप से यह निष्कर्ष आसानी से लगा सकते हैं इसके लिए हम वही अनुपात लेना होगा जो हम समय और लम्बाइयों के लिए प्रयुक्त करते हैं।

परन्तु एक स्मरणीय अद्भुत तथ्य है और वह यह है कि यह समाधान कर लेने के पश्चात् भी हम ऐसी राशि प्राप्त नहीं होती जो किसी एक पिण्ड

के लिए हर समय समान रहती हो। जब कोई पिण्ड ऊर्जा का अवशोषण करता है—उदाहरण के लिए गरम होकर—तो उसका निजी द्रव्यमान कुछ बढ जाता है। यह बढाव बहुत अल्प होता है क्योंकि यह ऊर्जा म वृद्धि का प्रकाश वेग के वर्ग से भाग देने पर प्राप्त होता है। दूसरी ओर जब किसी पिण्ड की ऊर्जा का ह्रास होता है तो उसके द्रव्यमान म कमी आ जाती है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण यह हो सकता है जब चार हाइड्रोजन परमाणु मिलकर एक हीलियम परमाणु बनाते हैं। परन्तु एक हीलियम परमाणु का द्रव्यमान हाइड्रोजन परमाणु के द्रव्यमान के चार गुने से कम होता है। यह बात बड प्रायोगिक महत्त्व की है। यह माना जाता है कि तारा के अन्दर ऐसा ही होता रहता है और इसी से तारा को यह ऊर्जा प्राप्त होती है जो तारा प्रकाश के रूप म दिखाई पड़ता है और जहाँ तक सूर्य का सम्बन्ध है इसी ऊर्जा से पार्थिव जीवन का निर्वाह होता है। इस पार्थिव प्रयोगशालाओं म भी उत्पन्न किया जा सकता है इसम प्रकाश और ऊष्मा के रूप म अत्यधिक ऊर्जा मुक्त होती है। इसी से हाइड्रोजन बम बनाना सम्भव हो सका है जो प्रत्यक्ष रूप से बहुत बडे होते हैं और उनकी विनाश शक्ति असीम होती है। साधारण एटम बम जिनम यूरेनियम का विघटन होता है, उनका परिणाम स्वय सीमित रहता है। यदि उनमे यूरेनियम की बहुत अधिक मात्रा एक स्थान पर एकत्रित हो जाए तो उसम स्वय ही विस्फोट हो जाता है, उसके लिए किसी विस्फोट प्रेरक की आवश्यकता नहीं होती। इसलिए एक निश्चित अधिकतम आकार से बडा यूरेनियम बम नहीं बनाया जा सकता। परन्तु हाइड्रोजन बम म हम जितनी हाइड्रोजन चाहे रख सकते हैं। हाइड्रोजन म अपने आपम विस्फोट नहीं होगा। जब हाइड्रोजन को किसी प्रचलित यूरेनियम बम (Conventional Uranium Bomb) से विस्फोटित किया जाए केवल तभी उसम सयोजन होकर हीलियम बनेगी और ऊर्जा मुक्त होगी। इसका कारण यह है कि ऐसा सयोजन बहुत ऊचे ताप पर ही सम्भव है।

इसका एक और भी लाभ है। हमारे इस ग्रह पर यूरेनियम बहुत ही सीमित मात्रा म है और यह भय है कि शायद वह मानव जाति के सर्वनाश से पहले ही समाप्त हो जाए परन्तु अब चूकि असीम मात्रा म प्राप्त हाइड्रोजन का उपयोग होने लगा है इसलिए यह आशा की जा सकती है कि होमो सेपियन (Homo sapien) उन कम हिंसक पशुओं के लाभ के लिए अपना अन्त कर सकता है जो बच रह जाएगे।

अब हम पुन अपने कम रोचक विषय को लेंगे।

इस तरह अब हमारे पास दो प्रकार के द्रव्यमान हैं जिनमे से कोई भी पुरानी धारणा के अनुकूल नहीं है। किसी पिण्ड का वह द्रव्यमान, जो पिण्ड के साथ गति करता हुआ कोई प्रेक्षक मापता है, वह एक मापनिक राशि है और

पिण्ड के गुण की दृष्टि से उसका कोई भौतिक महत्त्व नहीं होता। किसी पिण्ड का निजी द्रव्यमान उसका वास्तविक गुण होता है जो प्रेक्षक पर निर्भर नहीं करता, परन्तु यह भी पूर्ण रूप से अपरिवर्ती नहीं है। जैसा कि हम अभी देखेंगे द्रव्यमान की धारणा ऊर्जा की धारणा में ही लुप्त हो जाती है। हम कह सकते हैं कि यह उस ऊर्जा को व्यक्त करता है जो पिण्ड आन्तरिक रूप से खर्च करता है और उस ऊर्जा से बिलकुल ही भिन्न है जो बाह्य रूप से प्रकट होता है।

द्रव्यमान संरक्षण संवेग संरक्षण और ऊर्जा संरक्षण में चिरसम्मत भौतिकी के महान सिद्धान्त हैं। अब हम संवेग संरक्षण पर विचार करेंगे।

किसी दिशा में एक पिण्ड का संवेग उसी दिशा में उसके वेग को द्रव्यमान से भाग देने पर प्राप्त होता है। इसलिए मंद गति से चलने वाले किसी भारी पिण्ड का भी उतना ही संवेग हो सकता है जितना तेज चलने वाले किसी हल्के पिण्ड का। जब कई पिण्ड किसी भी ढंग से अन्तःक्रिया करते हैं उदाहरण के लिए परस्पर टक्कर से या पारस्परिक गुरुत्व से तो जब तक कि कोई बाहरी प्रभाव न हो उनका कुल संवेग किसी भी दिशा में अचर रहता है। *यह नियम आपेक्षिकता सिद्धान्त में भी सही रहता है।* भिन्न प्रेक्षकों के लिए द्रव्यमान भिन्न भिन्न होता है परन्तु वेग भी भिन्न भिन्न होता है और ये अन्तर एक दूसरे की पूर्ति कर देते हैं और यह सिद्धान्त सही रहता है।

किसी पिण्ड का संवेग विभिन्न दिशाओं में भिन्न भिन्न होता है। इसे मापने की साधारण विधि यह है कि किसी दिशा में पिण्ड का वेग लो (प्रेक्षक द्वारा मापा गया) और इस पिण्ड के द्रव्यमान (प्रेक्षक द्वारा मापा गया) से गुणा करो। किसी दिशा में वेग उस दूरी के बराबर होता है जो मात्रक समय में उस दिशा में तय की जाती है। माना कि अब इसके बजाय हम पिण्ड द्वारा तय की गई वह दूरी लेते हैं जब पिण्ड मात्रक अन्तराल तय करता है (साधारणतः इसमें बहुत थोड़ा अन्तर पड़ेगा क्योंकि यदि वेग प्रकाश के वेग से काफी कम हो तो अन्तराल लगभग समयावधि के बराबर ही होता है) और माना कि हम प्रेक्षक द्वारा मापे गए द्रव्यमान के बजाय उसका निजी द्रव्यमान लेते हैं। इन दो परिवर्तनों से समान अनुपात में वेग बढ़ जाएगा और द्रव्यमान घट जाएगा। इस प्रकार संवेग उतना ही रहेगा परन्तु यहाँ प्रेक्षक द्वारा अनुमानित राशियों के बजाय ऐसी राशियाँ रखी गई हैं जो प्रेक्षक पर निर्भर नहीं होतीं—इसमें पिण्ड द्वारा किसी दिशा में तय की गई दूरी पर यह बात लागू नहीं होती है।

जब हम समय व स्थान पर विचार करते हैं तो हम देखते हैं मापन पर जो द्रव्यमान आता है (निजी द्रव्यमान के विपरीत) वह उसी प्रकार की राशि है जैसा कि किसी निश्चित दिशा में संवेग इसलिए इस द्रव्यमान को हम समय दिशा में संवेग कह सकते हैं। मापा गया द्रव्यमान प्राप्त करने के लिए अपरिवर्ती द्रव्यमान (Invariant Mass) को उस समय से गुणा करते हैं

जो मात्रक अंतराल यात्रा करने में लगता है। संवेग प्राप्त करने के लिए इसी अपरिवर्ती द्रव्यमान को उस दूरी से गुणा करते हैं जो मात्रक अन्तराल यात्रा करने में तय की जाती है। दिक्काल के दृष्टिकोण से ये दोनों एक-दूसरे से सम्बंधित हैं।

यद्यपि किसी पिण्ड का मापा हुआ द्रव्यमान पिण्ड के सापेक्ष प्रेक्षक की गति पर निर्भर करता है फिर भी यह एक महत्वपूर्ण राशि है। मापे गए द्रव्यमान का संरक्षण ऊर्जा संरक्षण के समान है। *यह कुछ अजीब-सा लगेगा* क्योंकि साधारणतः द्रव्यमान और ऊर्जा बिलकुल भिन्न मालूम पड़ते हैं। परन्तु यह मालूम हुआ कि ऊर्जा और मापा गया द्रव्यमान एक ही चीज है। यह कम होता है इसका समझाना आसान नहीं है फिर भी हम कोशिश करेंगे।

साधारण बातचीत में द्रव्यमान और 'ऊर्जा' का एक ही अर्थ नहीं होता। जब हम किसी ऐसे व्यक्ति की कल्पना करते हैं जो कुर्सी पर बैठा रहता है और तेजी से चलता फिरता नहीं है, तो हम उसके साथ 'द्रव्यमान' के सम्बद्ध होने की कल्पना करते हैं परन्तु 'ऊर्जा' को हम उस पतले दुबले व्यक्ति के साथ सम्बद्ध मानते हैं जो 'चुस्त' और दौड़ धूप करने वाला हो। साधारण बातचीत में हम 'द्रव्यमान' को जड़त्व के साथ सम्बद्ध करते हैं परन्तु जड़त्व का यह दृष्टिकोण उसका एक पहलू है, इसमें गति आरम्भ करते समय मन्द रहने का भाव है परन्तु रोकने में नहीं हालांकि वह भी इसके समान ही है। इन सभी शब्दों के भौतिकी में विशेष वैज्ञानिक अर्थ हैं जो सामान्य बातचीत में इनके अर्थों के लगभग समरूप हैं। अभी तो हमारा सम्बन्ध ऊर्जा के विज्ञान विषयक अर्थ से है।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में ऊर्जा संरक्षण या जैसा कि हर्बर्ट स्पेंसर ने इसका नाम रखा है बल की अटलता (Persistence of Force) पर काफी छानबीन हुई। चूंकि ऊर्जा के कई रूप होते हैं इसलिए इसकी सरल व्याख्या कठिन है परन्तु इसमें मुख्य बात यही है कि ऊर्जा न तो कभी उत्पन्न की जा सकती है और न कभी उसका विनाश किया जा सकता है हालांकि उसे हम एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तित कर सकते हैं। इस सिद्धान्त की प्रतिष्ठा जूल के 'ऊष्मा के यांत्रिक तुल्यांक' के आविष्कार के साथ साथ और भी बढ़ गई। उस सिद्धान्त से यह पता चला कि ऊष्मा की निश्चित मात्रा उत्पन्न करने के लिए आवश्यक कार्य और किसी दिये हुए भार को एक निश्चित ऊँचाई तक उठाने के लिए किये गए कार्य में एक निश्चित अनुपात होता है। वास्तव में यांत्रिकत्व के अनुसार दोनों कामों के लिए एक ही प्रकार का कार्य प्रयुक्त किया जा सकता है। जब यह पता चला कि ऊष्मा अणुगति के रूप में होती है तो यह स्वाभाविक ही मालूम पड़ा कि यह भी दूसरे प्रकार की ऊर्जा के समरूप ही होनी चाहिए। मोटे तौर से यह कहा जा सकता है

कि किसी सिद्धान्त के अनुसार हर प्रकार की ऊर्जा दो रूपों में से किसी एक रूप में हो सकती है जिन्हें क्रमशः 'गतिज' और 'स्थितिज' ऊर्जा कहते हैं। इनकी परिभाषा इस प्रकार की गई—

किसी कण की गतिज ऊर्जा उसके द्रव्यमान को वेग के वर्ग से गुणा करने पर प्राप्त होती है। कई कणों की कुल गतिज ऊर्जा उनकी अलग अलग गतिज ऊर्जाओं के योग के बराबर होती है।

स्थितिज ऊर्जा की व्याख्या करना और भी कठिन होता है। यह विकृति की ऐसी अवस्था का वर्णन करती है जिसको केवल बल के प्रयोग से ही बनाए रखा जा सकता है। अब हम एक सरल उदाहरण लें। यदि किसी भार को ऊपर उठाकर उसे वहीं अवलम्बित रखा जाए तो उसमें स्थितिज ऊर्जा होगी, क्योंकि यदि उसे यों ही स्वतन्त्र छोड़ दिया जाए तो वह गिर पड़ेगा। उसकी स्थितिज ऊर्जा उस गतिज ऊर्जा के बराबर होगी जो वह उस दूरी तक वापस नीचे गिरने में प्राप्त कर लेगा जितना कि उसे ऊपर उठाया गया था। इसी प्रकार जब कोई धूमकेतु एक अधिक उत्केन्द्रता (Eccentricity) वाली कक्षा में सूर्य के चारों ओर परिभ्रमण करता है तो वह जब सूर्य के पास होता है तब सूर्य से दूर वाली स्थिति के मुकाबले तेजी से चलता है। इस तरह जब वह सूर्य के समीप होता है तो उसकी गतिज ऊर्जा बहुत अधिक होती है। दूसरी ओर जब वह सूर्य से अधिकतम दूरी पर रहता है तो वहां उसकी स्थितिज ऊर्जा बहुत अधिक होती है क्योंकि वहां वह उस पत्थर की भांति होता है जिसे ऊंचाई पर उठाया गया हो। किसी धूमकेतु की गतिज और स्थितिज ऊर्जा का योग अपरिवर्ती रहता है बशर्ते कि उसकी किसी से टक्कर न हो या उसमें घर्षण से कमी न हो। हम धूमकेतु के एक स्थिति से दूसरी स्थिति में पहुंचने पर उसकी स्थितिज ऊर्जा में होने वाले परिवर्तन को मालूम कर सकते हैं परन्तु उसकी कुल मात्रा तो एक हद तक यादृच्छिक ही होगी क्योंकि हम उसका शून्य स्तर (Zero Level) कहीं भी मान सकते हैं। उदाहरण के लिए ऊपर उठाए पत्थर की स्थितिज ऊर्जा हम उस गतिज ऊर्जा के बराबर मान सकते हैं जो वह पृथ्वी-तल तक गिरने में प्राप्त करता है या पृथ्वी के केन्द्र तक गहरे किसी कुएं में गिरने पर प्राप्त करता है या उससे कम किसी भी दूरी तक गिरने में प्राप्त करता है। इसमें कोई अन्तर नहीं पड़ता कि हम इनमें किसको मानते हैं परन्तु जो भी मानें हमेशा उसे ही मानते रहें। हमारा सम्बन्ध तो स्थान-परिवर्तन से है और इसमें इस बात का कोई प्रभाव नहीं पड़ता कि हमने कितनी ऊंचाई से आरम्भ किया था।

किसी दिए निकाय की स्थितिज और गतिज ऊर्जा भिन्न भिन्न प्रेक्षकों के लिए भिन्न भिन्न होती हैं। चिरप्रतिष्ठित गतिविज्ञान में गतिज ऊर्जा प्रेक्षक की गति के अनुसार भिन्न भिन्न होगी परन्तु उनका योग स्थिर होगा,

स्थितिज ऊर्जा में कोई अंतर नहीं होगा। फलस्वरूप प्रत्येक प्रेक्षक के लिए कुल ऊर्जा स्थिर रहेगी—हमेशा ही यह मानते हुए कि सम्बन्धित प्रेक्षक सीधी रेखा में एक समान गति से चल रहे थे, या अगर ऐसा न हो तो वे अपनी गति ऐसे पिण्डों के प्रसंग में मान सकते थे जो उस ढंग से गतिमान हों। परन्तु आपेक्षिक गति विज्ञान में परिस्थिति बहुत जटिल हो जाती है। गतिज और स्थितिज ऊर्जा-सम्बन्धी न्यूटन की धारणा को आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धान्त के अनुकूल बनाना सरल नहीं है। परन्तु हम स्थितिज ऊर्जा की धारणा को आपेक्षिकता के व्यापक सिद्धान्त के अनुकूल नहीं बना सकते और न ही हम गतिज ऊर्जा की धारणा का सामान्यीकरण कर सकते हैं, उसे अलग अलग पिण्डों के लिए मान्य बना सकते हैं। इसलिए साधारण न्यूटनीय दृष्टि से ऊर्जा का संरक्षण मान्य नहीं होगा। इसका कारण यह है कि किसी पिण्ड निकाय की गतिज और स्थितिज ऊर्जाओं की धारणा वास्तव में ऐसी है जो दिक्-काल के विस्तृत क्षेत्रों के लिए लागू होती है। निर्देशांकों के चुनाव में जितनी विविधता हो सकती है तथा दिक् काल का पहाड़ी स्वरूप, जिनका वर्णन अध्याय आठ में दिया गया था, उन दोनों की वजह से व्यापक सिद्धान्त में ऐसी धारणाओं को लाना बड़ा अजीब सा लगता है। व्यापक सिद्धान्त में भी एक संरक्षण नियम है परन्तु यह इतना लाभदायक नहीं है जितने कि न्यूटनीय यान्त्रिकी के और विशिष्ट सिद्धान्त के संरक्षण नियम हैं। इसका कारण यह है कि यह निर्देशांकों के चुनाव पर ऐसे ढंग से निर्भर करता है जिसे समझना कठिन होता है। हम देख चुके हैं कि निर्देशांकों के चुनाव की स्वतन्त्रता ही आपेक्षिकता के व्यापक सिद्धान्त का मार्गदर्शक है और संरक्षण नियम सन्देहजनक है क्योंकि यह उस सिद्धान्त का विरोध करता है। इस समस्या का समाधान तो अभी बाकी ही है कि क्या इसका अर्थ लगाया जा सकता है कि संरक्षण नियम का जितना महत्त्व समझा जाता था वास्तव में उतना नहीं है या कोई संतोषजनक संरक्षण नियम अभी भी सिद्धान्त की गणितीय कुटिलताओं में छिपा पड़ा है। अभी तो हमें व्यापक सिद्धान्त में एक अकेले कण की गतिज ऊर्जा से ही सन्तोष करना पड़ेगा। आगे आने वाले तर्क में हम केवल इसी की आवश्यकता पड़ेगी। हमें यह याद रखना चाहिए कि ऊर्जा संरक्षण के सम्बन्ध में जो कठिनाइयां हैं वे केवल व्यापक सिद्धान्त में हैं विशिष्ट सिद्धान्त में नहीं। जब भी गुरुत्व को नगण्य माना जा सके और विशिष्ट सिद्धान्त लागू होता हो, तब ऊर्जा का संरक्षण सम्भव हो सकता है।

सिद्धान्त रूप में 'संरक्षण' का जो अर्थ है प्रायोगिक रूप से ठीक वही नहीं है। सिद्धान्त रूप में यदि किसी चीज की मात्रा उतनी की उतनी ही रहती है जितनी अन्य किसी समय थी तो हम कहते हैं कि वह सुरक्षित रहती है। परन्तु प्रायोगिक रूप से हम सारे संसार में उसकी जाँच नहीं कर सकते इसलिए हम

उसका ऐसा अर्थ लेना होगा जो साध्य हो। हमारा मतलब है कि यदि हम कोई निश्चित क्षेत्र लें और उसमे हमारी राशि का मान बदल जाता है तो इसका कारण यह होता है कि उसका कुछ भाग क्षेत्र की सीमाओं के पार चला गया है। यदि न कोई मृत्यु हो और न किसी का जन्म हो तो जनसख्या सरक्षित रहेगी ऐसी अवस्था मे किसी देश की जनसख्या केवल आवास और प्रवास से ही बदल सकती है अर्थात् जब जनसख्या देशो की सीमाओं को पार करके जाए। हो सकता है कि हम चीन या मध्य अफ्रीका की जनसख्या ठीक ठीक न मालूम कर सकें, तब हम ससार की कुल जनसख्या नही मालूम कर सकेंगे। परतु यदि जहाँ कही आँकडे उपलब्ध हैं वहाँ जनसख्या स्थिर ही रहती हो बशर्ते कि जनसख्या का आवास प्रवास न हो तो हम जनसख्या को स्थिर मान सकते हैं। परन्तु वास्तव मे जनसख्या सरक्षित नही रहती। मेरी जान पहचान के एक शरीर-वैज्ञानिक (Physiologist) ने एक बार चार चूहे एक थरमस मे बन्द करके रखे। जब कुछ घटे बाद वह उन्हें बाहर निकालने गया तो वे ग्यारह हो गए। परन्तु इससे द्रव्यमान मे घट-बढ़ नहीं होती उस समय के बाद 11 चूहो का द्रव्यमान भी उतना ही होगा जितना शुरू मे चार चूहो का था।

इससे हम वापस उस समस्या पर आ जाते हैं जिसकी वजह से हमने ऊर्जा की चर्चा की थी। हमने कहा था कि आपेक्षिकता सिद्धान्त में ऊर्जा और मापा गया द्रव्यमान एक ही माना जाता है और हम इसका कारण समझाने में लग गए थे। अब समय आ गया है कि हम इसकी व्याख्या करें। परन्तु यहाँ भी अध्याय 6 के अन्त की भाँति जो पाठक गणित से परिचित नहीं है उनके लिए कठिनाई होगी इसलिए हम उसे छोड़कर अब निम्नलिखित विवरण से प्रारम्भ करेंगे।

माना कि हम प्रकाश वेग को मात्रक वेग मानते हैं आपेक्षिकता सिद्धान्त मे यह हमेशा ही सुविधाजनक होता है। माना कि किसी कण का निजी द्रव्यमान m है और प्रेक्षक के सापेक्ष उसका वेग v है। तब मापन पर इसका द्रव्यमान निम्न होगा—

$$\frac{m}{\sqrt{1-v^2}}$$

और सामान्य सूत्र के अनुसार उसकी गतिज ऊर्जा होगी

$$\frac{1}{2}mv^2$$

जैसा कि हम पहले देख चुके हैं ऊर्जा लाभ हानि सदा ही आती है इसलिए हम इसमे कोई भी स्थिर राशि जोड़ सकते हैं। इस प्रकार हम ऊर्जा को

$$m+\frac{1}{2}mv^2$$

मान सकते हैं।

अब यदि v का मान प्रकाश-वेग का एक बहुत छोटा अंश हो तो $m+\frac{1}{2}mv$ ठीक $\frac{m}{\sqrt{1-v}}$ के बराबर होगा। इसके फलस्वरूप बड़े पिण्डों के वेग के लिए ऊर्जा और माप गए द्रव्यमान में माप की अधिकतम यथार्थता होने पर भी कोई अंतर नहीं आता। वास्तव में अपनी ऊर्जा की परिभाषा को बदल देना ही ठीक रहेगा और तब यह $\frac{m}{\sqrt{1-v}}$ के बराबर होगी, क्योंकि यह ऐसी राशि है जिस पर संरक्षण जैसा नियम लागू होता है। और जब वेग बहुत अधिक होता है तब प्रचलित सूत्र की तुलना में इस सूत्र से ऊर्जा का अधिक सही व्यक्त किया जा सकता है, इसलिए प्रचलित सूत्र को सन्निकट सूत्र मानना चाहिए और नये सूत्र को इसका यथार्थ रूप मानना पड़ेगा। इस प्रकार ऊर्जा और मापा गया द्रव्यमान समरूप हो जाते हैं।

अब मैं 'क्रिया' की धारणा पर आता हूँ जिसमें सामान्य लोग ऊर्जा की तुलना में कम परिचित होते हैं परन्तु यह आपेक्षिकता भौतिकी और क्वांटम सिद्धान्त में बहुत महत्त्वपूर्ण हो गई है (क्रिया की छोटी मात्रा को क्वांटम कहते हैं)। 'क्रिया' शब्द ऊर्जा और समय के गुणनफल को व्यक्त करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है। इसका अभिप्राय है कि यदि किसी तन्त्र में एक मात्रक ऊर्जा हो तो एक सेकिण्ड में उसकी क्रिया एक मात्रक होगी और 100 सेकिण्ड में क्रिया 100 मात्रक होगी। यदि किसी तन्त्र में 100 मात्रक ऊर्जा हो तो एक सेकिण्ड में उसकी क्रिया 100 मात्रक होगी और 100 सेकिण्ड में 10 000 होगी। स्थूल रूप से 'क्रिया' को किए गए कार्य की माप मान सकते हैं। अधिक ऊर्जा और अधिक समय होने से इसका मान बढ़ जाता है। चूंकि ऊर्जा स्वयं माप गए द्रव्यमान के बराबर होती है, इसलिए क्रिया को माप गए द्रव्यमान और समय के गुणनफल के भी बराबर मान सकते हैं। फिर प्रतिष्ठित यान्त्रिकी में किसी भाग में पदार्थ का घनत्व, उसके द्रव्यमान को आयतन से भाग देने पर प्राप्त होता है। इसका मतलब यह है कि यदि आप किसी छोटे भाग का घनत्व जानते हैं तो आप उस छोटे भाग के आयतन का घनत्व से गुणा करके पदार्थ की कुल मात्रा मालूम कर सकते हैं। आपेक्षिकता यान्त्रिकी में हम आकाश के लिए हमेशा दिक्-काल रखते हैं इसलिए किसी एक 'भाग' को हम एकमात्र भाग नहीं मान सकते बल्कि एक समयावधि के लिए आयतन मानेंगे। छोटा भाग कम समयावधि का छोटा आयतन होगा। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि घनत्व ज्ञात हो तो यह अंश में एक छोटा भाग, केवल छोटे द्रव्यमान को ही व्यक्त नहीं करता बल्कि छोटे द्रव्यमान और अल्प समय के गुणनफल अर्थात् 'क्रिया' की अल्प मात्रा को व्यक्त करता है। इसमें

यह समझ म आ जाता है कि हम यह आशा क्यों होनी चाहिए कि क्रिया' आपेक्षिकता यान्त्रिकी म मूलभूत महत्त्व की सिद्ध होगी। और वास्तव म यह बस ही महत्त्व की है।

हमारा एक अभिगृहीत यह था कि मुक्त रूप से गति करता हुआ कण जिओडसिक म चलता है। इसके बजाय हम कण की क्रिया से सम्बन्धित एक दूसरी धारणा (assumption) लेंगे। इस धारणा का न्यूनतम क्रिया सिद्धात (Principle of least Action) कहते हैं। इसके अनुसार एक अवस्था स दूसरी अवस्था म जाने म कोई पिण्ड बाकी सब पथो को छोडकर एसा पथ लेता है जिसम क्रिया न्यूनतम हो—यह भी अवतरि ीय आलस्य का नियम है। न्यूनतम क्रिया सिद्धात केवल अकेले पिण्डो तक ही सीमित नहीं है। इसी प्रकार की एक दूसरी एसी धारणा बनाना सम्भव है जिससे पहाडिया और घाटिया सहित समस्त दिक काल का वणन सम्भव हो। एसे सिद्धात जो क्वाटम सिद्धात और आपेक्षिकता म मुख्य रूप म लागू होते हैं यान्त्रिकी के शुद्ध व्यावहारिक अश की व्याख्या के लिए अत्यधिक व्यापक उपाय है।

अध्याय 11

विस्तारशील ब्रह्माण्ड

हम अब तक उन प्रयोगों और प्रेक्षणों पर विचार कर रहे थे जिनका सम्बन्ध पृथ्वी या सौरतन्त्र से था। केवल प्रयोग से ही हमने तारों तक की दूरी की चर्चा की है। इस अध्याय में हमारा क्षेत्र बहुत विस्तृत दूरियों तक रहेगा। हम विचार करेंगे कि समस्त विश्व के बारे में आपेक्षिकता सिद्धान्त क्या कहता है।

हम जिन ज्योतिष प्रेक्षणों पर विचार करेंगे उन्हें सुस्थापित वैज्ञानिक तथ्य मानना पड़ेगा। फिर भी इन परिणामों की सैद्धान्तिक व्याख्या का स्वरूप अधिक आनुमानिक है और यह नहीं मान लेना चाहिए कि हम ऐसे सामयिक विषयों पर विचार कर रहे हैं जिनमें उतना ही ठोसपन है जितना कि अब तक के विचाराधीन पक्षों में था। उनमें निश्चय ही सुधार की आवश्यकता है। विज्ञान का उद्देश्य चिरंतन सत्य और सनातन सिद्धान्तों की स्थापना करना नहीं है। विज्ञान का उद्देश्य तो उत्तरोत्तर सन्निकटना (Successive Approximations) से सत्य पर पहुँचना है और इसके साथ साथ किसी अवस्था में यह दावा भी नहीं करता है कि यह अन्तिम है या उसमें पूर्ण यथार्थता प्राप्त हो गई है।

विश्व की सामान्य आकृति के बारे में कुछ प्रारम्भिक धारणाएँ देना आवश्यक है। पदार्थ के व्यापक वितरण के बारे में अब काफी कुछ ज्ञात है। हमारा सूर्य 100 000 करोड़ तारों के उस निकाय का एक तारा है जिसे नीहारिका (आकाशगंगा) कहते हैं। नीहारिका का आकार एक विशाल कुण्डलाकार पहिये की तरह है जिसकी दीप्त नाभि (Hub) से सर्पिलाकार भुजाएँ निकल रही हैं आकाशगंगा की बाह्य सीमाएँ बहुत स्पष्ट नहीं हैं परन्तु तारों के मुख्य समूह की चौड़ाई 10 000 प्रकाश वर्ष है और मोटाई उसका दसवाँ भाग है (एक प्रकाश वर्ष वह दूरी है जो प्रकाश एक वर्ष में चलता है=6 लाख करोड़ मील)। सूर्य एक सर्पिल भुजा पर स्थित है और

नाभि स 25 000 प्रकाश वर्ष की दूरी पर है। किसी स्वच्छ रात्रि को तारों की जो चमकदार पट्टी दिखाई पडती है उसे आकाशगगा कहते हैं। वह निहारिका का सर्पिल भुजा से दिखाई देने वाला सिरा मुखी (edge on) आकार है।

तारो के अतिरिक्त नीहारिका म बडी मात्रा म गैसें होती हैं जिनम अधिकांशत हाइड्रोजन और धूल ही हैं। सम्भवत गस और धूल का कुल द्रव्यमान समस्त तारो के कुल द्रव्यमान के बराबर है। धूल, गस और तारो का कुल सचय नाभि के चारो ओर धीमी गति स घूमता रहता है। घूर्णन चाल नाभि से दूरी के साथ साथ बदलती है। सूर्य को एक चक्कर लगाने मे 22 5 करोड वर्ष लगते हैं।

यह आकाशगगा या नीहारिका ब्रह्माण्ड म अकेली नही है। यह ऐसे ही करोडो निकायो म स एक है जो दूरदर्शी म दिखाई पडने वाले समस्त क्षेत्र म फैली हुई हैं। दूसरे निकायो को भी नीहारिकाएँ (कभी कभी नेबूला) कहते हैं। कुछ नीहारिकाएँ चपटी हैं कुछ फुटबाल की तरह गोल कुछ रगबी की गेंद की भाँति अण्डाकार और कुछ टेढे मढे आकार की होती हैं।

नीहारिकाओं मे समूहो म इकट्ठी रहने की प्रवृत्ति दिखाई पडती है। इन समूहो को पुज (cluster) कहते हैं। एक एक पुज म हजार नीहारिकाए तक होती हैं जिनमे स प्रत्येक नीहारिका स्वय आकाशगगा की भाँति विशाल तारा निकाय है। हमारी अपनी नीहारिका एक पुज की सदस्य है जिसे स्थानीय समूह कहते हैं। उसम सत्रह अन्य नीहारिकाएँ है (हम ठीक ठीक नही कह सकते कि उनकी सख्या कितनी है क्योकि उनम स कई तो अपेक्षाकृत छोटी और मन्द हैं)। स्थानीय समूह की सब सुपरिचित पास की नीहारिका है ऐंड्रोमेडा, जो लगभग 1,500 000 प्रकाश वर्ष दूर है। नग्न आख स यह बहुत मन्द दिखाइ पडती है।

नीहारिकाओ के पुज ही ब्रह्माण्ड मे पदार्थ के सबस बडे प्राकृतिक एकक मालूम पडते हैं। हालाकि निश्चित तो नही है पर ऐसा मालूम नही पडता है कि इन पुजों क समूहन से और बडे पुज बनत हो। पुजो का वितरण काफी समान मालूम पडता है। आकाश क किसी एक भाग म जितने पुज हैं उतने ही दूसर भाग म हैं और गहराई क अनुसार भी उनका वितरण समान मालूम पडता है। फिर भी य पुज बिन्दुओ या कतार की तरह एक-दूसरे स नियमित दूरी पर नहीं हैं। य एस ही बेतरतीब फैले हुए है जैसे कि बारिश गिरने पर खिडकी के शीशे पर पानी की बूँदें पडी जाती हैं। पुजो का वितरण उसी तरह एक समान है जसा पानी की बूदो का वितरण होता है—आप यह कह सकते कि प्रत्येक खिडकी के शीशे पर वर्षा की बूदो की सख्या समान है, परन्तु एक खिडकी क शीशे पर बूदो की सख्या दूसरी स बहुत भिन्न नहीं होगी।

चूंकि नीहारिकाओं के पुंज सबसे बड़े प्राकृतिक एकक हैं, और चूंकि हम ऐसे एकक बड़ी संख्या में देख सकते हैं, इसलिए यह मान लेना उचित होगा कि ब्रह्माण्ड का, वर्तमान दूरदर्शियों से, दिखाई पड़ने वाला भाग समस्त ब्रह्माण्ड का द्योतक है। यह मानना उचित नहीं होगा कि एक समान वितरण का क्षेत्र उतना ही है जितना कि हम अब अपने दूरदर्शियों से देख सकते हैं (लगभग 10,000 लाख प्रकाश वर्ष तक) तथा प्रेक्षण विधि में सुधार होने से जो दूरस्थ क्षेत्र खोजे जाएंगे वे भिन्न वितरण के होंगे। हालांकि ऐसा होना असम्भव नहीं है, परन्तु इसका मतलब यह होगा कि स्थानीय समूह या इसके आस पास का भाग विशेष रूप से एक समान भाग है जबकि इसके ऐसा माने जाने का कोई वैज्ञानिक कारण नहीं मालूम पड़ता।

ब्रह्माण्ड समग्र रूप से एक समान है, यह विचार पर्याप्त ज्योतिष प्रमाण उपलब्ध होने से भी बहुत पहले का है और यह अब एक मूलभूत अभिगृहीत बन गया है। इसको सामान्यतः 'ब्रह्माण्ड सिद्धान्त' (Cosmological Principle) कहते हैं। ब्रह्माण्ड सिद्धान्त वास्तव में कॉपरनिकस के विचारों का ही केवल एक विस्तृत रूप है। जैसे ही हम इस अहंकारी धारणा का परित्याग करें कि पृथ्वी समस्त विश्व का केन्द्र है तो हमें यह भी तुरन्त स्पष्ट हो जाता है कि सूर्य भी एक साधारण तारा है और उसका इस विश्व सम्बन्धी हमारी व्याख्या में पृथ्वी से अधिक कोई विशेष स्थान नहीं है। जब हम देखते हैं कि हमारी नीहारिका और जिसकी वह सदस्य है वह पुंज भी आदर्श नमूने हैं तो उन्हें भी दूसरे समान पिण्डों के जैसा ही मानना पड़ेगा। ऐसा मानने का कोई आनुभविक कारण दिखलाई नहीं पड़ता है कि भौतिकी के नियम एवं नीहारिका पुंज से दूसरे पुंज में भिन्न होंगे। ऐसी दलीलों से हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि ब्रह्माण्ड समग्र रूप में एक समान है। दूसरे शब्दों में वह ब्रह्माण्ड सिद्धान्त के अनुरूप है।

इसके अभिप्राय को हम कुछ भिन्न तरीके से व्यक्त कर सकते हैं। माना कि आपको एक ऐसे डिब्बे में बन्द कर दिया जाए जिसमें खिड़कियाँ न हों और ब्रह्माण्ड के किसी दूरस्थ भाग में ले जाया जाए। जब डिब्बे से बाहर निकाला जाए तो आपको तारों और नीहारिकाओं का वह विशिष्ट वितरण तो दिखाई नहीं पड़ेगा जो पृथ्वी से दिखाई पड़ता था—आपके वातावरण का भौगोलिक विवरण भिन्न होगा—परन्तु ब्रह्माण्ड सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड की कुल आकृति वैसी ही मालूम पड़ेगी। विस्तृत विवरण के अतिरिक्त आप यह नहीं बता सकेंगे कि आप ब्रह्माण्ड के किस भाग में हैं।

एक महत्त्वपूर्ण घटना ऐसी है जिससे हम यह मानने लगते हैं कि नीहारिकाओं के स्थानीय समूह का ब्रह्माण्ड में विशिष्ट स्थान है। यह है दूरस्थ नीहारिकाओं के स्पेक्ट्रम में 'लाल वर्ण की ओर स्थानान्तरण (Red

shift) जैसा कि हम आगे देखेंगे इसी प्रभाव के कारण इस विश्व को विस्तारशील माना जाता है।

हमारा सम्बन्ध यहाँ एक ऐसे प्रभाव से है जिसकी व्याख्या अध्याय 9[1] में की गई थी हालांकि उस अध्याय में उससे हमारा सीधा सम्बन्ध नहीं था। आपको ध्वनि का सादृश्य याद होगा जो वहाँ पर प्रस्तुत किया गया था। यदि कोई रेलगाडी आपकी ओर आ रही हो तो उसकी सीटी का स्वर उच्च मालूम पडेगा अपेक्षा उसके जब गाडी रुकी खडी हो और यदि वह आपसे विपरीत दिशा में जा रही हो तो स्वर निम्न होगा। ये प्रभाव प्रकाश के प्रभावों के सादृश्य है। यदि प्रकाश स्रोत आपकी ओर आ रहा हो तो प्रकाश का पूरा स्पेक्ट्रम बैंगनी की दिशा में स्थानांतरित हो जाएगा और यदि आपसे दूर जा रहा हो तो सारा स्पेक्ट्रम लाल की दिशा में स्थानांतरित होगा। स्पेक्ट्रम में यह स्थानांतरण रेलगाडी की सीटी के स्वर में परिवर्तन होने के समरूप है। स्थानांतरण की मात्रा आपके सापेक्ष स्रोत की चाल पर निर्भर करती है। (इसका स्वयं प्रकाश वेग से कोई सम्बन्ध नहीं है जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं प्रकाश वेग स्रोत की गति पर निर्भर नहीं करता।) स्पेक्ट्रम में एसे स्थानांतरण से तारों और नीहारिकाओं की चाल मालूम की जा सकती है। इसके लिए उनके प्रकाश के स्पेक्ट्रम की तुलना प्रयोगशाला में उत्पन्न वैसे ही स्पेक्ट्रम से की जाती है। इस विधि से मापने पर स्थानीय समूह की नीहारिकाओं की चाल 100 मील प्रति सेकिण्ड तक आती है। यह हर तरह से बहुत तेज चाल है परन्तु नीहारिकाओं के बीच की दूरियाँ बहुत अधिक होने के कारण उनकी स्थितियों में किसी दर्शनीय परिवर्तन के लिए करोडों वर्ष लग जाएँगे।

स्थानीय समूह की कुछ नीहारिकाएँ हमारी ओर आ रही हैं और कुछ हम से दूर जा रही हैं। इस गति में कोई विशेष बात नहीं है इसकी तुलना मक्खियों के झुण्ड की गति से की जा सकती है। मक्खियाँ एक-दूसरे के चारों ओर घूमती रहती हैं परन्तु झुण्ड अपनी वही व्यवस्था बना रहता है। जब हम अपने पुंज के बजाय अन्य पुंजों पर विचार करते हैं तो स्थिति भिन्न होती है। प्रत्येक पुंज के अन्दर गति होती रहती है परन्तु सभी पुंज हमारे पुंज से दूर जाते हुए मालूम पडते हैं और कोई पुंज जितनी अधिक दूरी पर हो उसका वेग उतना ही अधिक मालूम पडता है। यही वह विलक्षण घटना है जिससे यह समझा जाता है कि ब्रह्माण्ड विस्तारशील है।

यदि सभी पुंज हमारे पुंज से दूर जाते हुए मालूम पडते हैं इसलिए हम ऐसा सोचने लगते हैं कि स्थानीय समूह किसी ढंग से विस्तारशील विश्व के

1 देखें पृष्ठ 83 और 84।

केन्द्र पर है। परन्तु यह एक भूल होगी क्योंकि इसमें गति के सापेक्ष होने पर ध्यान नहीं दिया गया है जिसको इस पुस्तक में बार बार दोहराया गया है। फिर से मक्खियों के झुण्डों के सादृश्य पर विचार करो। मानो कि वे अच्छी सिखाई हुई मक्खियों के झुण्ड हैं, जो पूर्व से पश्चिम तक जाने वाली रेखा में दस-दस गज की दूरी पर जमीन के ऊपर मंडराते रहते हैं। अब मान लो कि उनमें से एक झुण्ड पृथ्वी के सापेक्ष स्थिर है और इससे पूर्व की दिशा में दस गज की दूरी वाला झुण्ड पूर्व की ओर एक गज प्रति मिनट की दर से जा रहा है, 20 गज पूर्व में एक दूसरा झुण्ड पूर्व दिशा की ओर दो गज प्रति मिनट की दर से जा रहा है, इत्यादि। स्थिर झुण्ड के पश्चिम में स्थित झुण्ड भी इन्हीं दरों से पश्चिम दिशा की ओर जा रहे हैं। ऐसी स्थिति में गतिमान या स्थिर किसी भी झुण्ड की किसी मक्खी को यही मालूम पड़ेगा कि सभी झुण्ड उसके अपने झुण्ड से दूर जा रहे हैं और उनके वेग दूरी के अनुपात में हैं। यदि स्थिरता की परीक्षा के लिए जमीन न होती तो हम किसी एक झुण्ड को ऐसा नहीं मान सकते थे कि उसकी स्थिति किसी रूप में विशेष है।

नीहारिकाओं के पुंज का आचरण भी ठीक ऐसा ही है। हालांकि उनका वितरण सीधी हुई मक्खियों के झुण्डों की भांति पूर्व पश्चिम रेखा में न होकर अनियमित रूप से चारों दिशाओं में है परन्तु झुण्डों की भांति ही किसी एक पुंज में स्थित प्रेक्षक को ऐसा ही मालूम पड़ेगा कि बाकी सभी पुंज उसके अपने पुंज से दूर जा रहे हैं चूंकि विश्व में स्थिर अवस्था होने का कोई आधार नहीं है इसलिए प्रत्येक पुंज से समान विस्तारशीलता दिखाई पड़ेगी।

हमारे पुंज के सबसे पास वाला पुंज 250 लाख प्रकाश वर्ष की दूरी पर है और उसमें 500 से भी अधिक नीहारिकाएं हैं। उसके स्पेक्ट्रम में लाल की दिशा में जो स्थानान्तरण होता है उससे अनुमान होता है कि वह हमसे 750 मील प्रति सेकिण्ड की दर से दूर जा रहा है और सबसे दूर की ज्ञात नीहारिका, जिसका प्रेक्षण किया गया, उसमें लाल की दिशा में होने वाले स्थानान्तरण का 100 गुना है अर्थात् उसकी हमसे दूर जाने की चाल प्रकाश-वेग का छठा भाग है।

अब हम इस बात की जांच करेंगे कि विश्व के सम्बन्ध में यह जानकारी आपेक्षिकता के न्यायपरक सिद्धान्त में कैसे ठीक बैठती है। हम देख चुके हैं कि सूर्य के गुरुत्वीय प्रभावों को किस प्रकार दिक्काल में पहाड़ियों के रूप में समझाया जा सकता है। एक नीहारिका या एक पुंज को भी इसी प्रकार व्यक्त किया जा सकता है परन्तु उसको व्यक्त करने वाली पहाड़ी बहुत बड़ी होगी क्योंकि उनका द्रव्यमान बहुत अधिक होता है (एक आदर्श नीहारिका का द्रव्यमान सूर्य से एक लाख करोड़ गुना होता है)। यदि हम इस प्रकार के वितरण

मे प्रत्येक नीहारिका के सब तारो को और प्रत्येक पुज म नीहारिकाओ के वितरण को व्यक्त करना चाहे तो यह पहाडी बडी जटिल हो जाएगी जिसम बहुत स शिखर और घाटियाँ होंगी। इससे अब हम समस्त ब्रह्माण्ड को पहाडी युक्त दिक्-काल से व्यक्त करने का प्रयत्न कर सकते हैं जिसम पुज इधर-उधर फले हो। एसा विवरण गणितीय दृष्टि से बहुत जटिल होगा क्योंकि इसम एसे भौगोलिक विवरण भी होग जिनकी विश्व के समग्र रूप स वणन म कोई आवश्यकता नही पडती। इस वणन को सरल करने के लिए हम एस माडल बनाते हैं जिनम केवल व ही लक्षण रखे जाते हैं जो आवश्यक हो उसम *भौगोलिक विवरण को छोड देते हैं। जो लक्षण उसम रखे जाते हैं वे हैं बड* पमाने पर एक समानता और विस्तारशीलता। अलग अलग पुजो की बनावट, आकार और उनकी ठीक ठीक स्थिति छोड दी जाती है।

इस प्रकार हम दिक काल का एसा प्रतिरूप बनाते ह जिसम ब्रह्माण्ड को सन्निकट के बजाय यथातथ रूप से एक समान मानकर व्यक्त किया जाता है। इन सरल प्रतिरूपो (माडलो) मे हम यह मान लेत हैं कि पदाथ ऐस पुजो क रूप म एकत्रित नही है जिनके बीच मे बहुत स्थान हो बल्कि उसका वितरण सतत और निष्कोण (smooth) है।

जिस प्रकार हम पुज के रूप मे पदाथ के वितरण को यह कहकर समझा सकते हैं कि वह दिक्-काल म एक एसी पहाडी है जहाँ पुज दिखाई देता है, या हम कह सकते हैं कि दिक् काल पुज क आस पास वक्रित है, उसी प्रकार निष्कोण किये हुए प्रतिरूप मे विश्व को ऐस दिक्-काल से व्यक्त कर सकत ह जो एक समान रूप स वक्रित हो। विभिन्न पुजो क पदाथ को निष्कोण करने का प्रभाव यह होता है कि उनकी वक्रता भी तदनुसार निष्कोण हो जाती है जिससे थोडी-सी वक्रता सारे प्रतिरूप म ही आ जाती है। विश्व की यह समग्र वक्रता कुछ-कुछ साधारण आकाश म गोले की वक्रता क सदृश है, परतु हम दिक् काल की कुल वक्रता की पृथ्वी के साथ तुलना करके वक्रता का दिक् काल पहाडियो क साथ सादृश्य और आगे नहीं बढ़ाएँगे क्योंकि यह भ्रम उत्पन्न करन वाला होगा।

आइन्स्टाइन का गुरुत्व नियम और उसक साथ साथ निष्कोण करने की कल्पना—विशुद्ध एक-समानता की धारणा—स हम विश्व के अनक प्रतिरूप बना सकत है जिनम समग्र वक्रता क कई भिन्न रूप होत हैं। इस समग्र वक्रता का मुख्य प्रभाव यह है कि कुछ प्रतिरूपो म इसका मतलब यह होगा कि विश्व विस्तारशील मालूम पडता है। चूँकि आपेक्षिकता सिद्धात म निर्देशाक पद्धति के चुनाव म हम स्वतन्त्र हैं इसलिए यहाँ भी हम चुनाव की कुछ स्वतन्त्रता है। हम एस निर्देशाक ल सकत है कि निष्कोण किया गया पदाथ विरामावस्था म हो और दिक्-काल म एक निश्चित वक्रता हो, या हम

निर्देशांक ऐसे ले सकते हैं कि पदार्थ विस्तारशील मालूम हो और वक्रता कुछ कम मालूम हो। यह तो स्वेच्छा पर है कि हम कौन से निर्देशांक लेते हैं इससे अन्तिम परिणाम पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अन्तिम परिणाम यह भविष्यवाणी ही है कि विश्व सम्बन्धी इन प्रतिरूपों के अनुसार दूरस्थ पिण्डों का स्पेक्ट्रम लाल की दिशा में स्थानान्तरित दिखाई पड़ेगा। हम लाल की दिशा में स्थानान्तरण का कारण या तो विस्तार मान सकते हैं या वक्रता और या थोड़ा थोड़ा दोनों को ही मान सकते हैं। चूंकि विस्तार की संकल्पना, दिक्-काल वक्रता की संकल्पना से आसान है इसलिए विश्व को विस्तारशील मानना वक्रित मानने से अधिक सरल होता है, परन्तु गणितीय दृष्टि से दोनों संकल्पनाएँ एक ही हैं। जहां तक सूर्य के स्पेक्ट्रम की रेखाओं में लाल की दिशा में स्थानान्तरण सम्बन्धी भविष्यवाणी का सम्बन्ध है और जिससे अध्याय 9 में भी हमारा सम्बन्ध रहा था, उसमें दूसरे ढंग से सोचना अच्छा रहता है अर्थात् लाल की दिशा में स्थानान्तरण का कारण वक्रता मानना सरल होता है।

हम जिन प्रतिरूप विश्वों पर विचार कर रहे थे उनके लक्षण कुल मिला कर हमारे अपने विश्व के गुणों से मिलते जुलते हैं। कुछ दूसरे प्रतिरूप भी हैं जो आइन्स्टाइन नियम और एकसमानता की धारणा के अनुकूल हैं और उनमें लाल के बजाय नीले रंग की दिशा में स्थानान्तरण होता है जो विश्व के संकुचन के अनुरूप है। ऐसे प्रतिरूपों के होने से आइन्स्टाइन सिद्धान्त के बहिष्कार करने का कोई कारण नहीं है। इसका मतलब है कि सिद्धान्त अपूर्ण है—किसी अतिरिक्त धारणा की आवश्यकता है जिससे अवांछित प्रतिरूपों का बहिष्कार हो जाएगा। बहुत सी धारणाएं सुझाई गई हैं, परन्तु अभी तक कोई सन्तोषजनक सिद्ध नहीं हुई है।

अब हम यह ध्यान में रखते हुए, विस्तार के परिणामों पर आगे विचार करेंगे कि हम जो कुछ कहते हैं उसे यदि आवश्यक हो तो, कभी भी दिक्-काल की वक्रता के रूप में व्यक्त किया जा सकेगा। इसका सबसे प्रत्यक्ष परिणाम यह है कि यदि विश्व विरल होता जा रहा है—यदि नीहारिका-पुंज एक-दूसरे से दूर होते जा रहे हैं, तो पहले वे अब के मुकाबले पास-पास रहे होंगे। मान लो कि हम विस्तारशील विश्व का कई करोड़ वर्ष पहले तक का एक चलचित्र लेते हैं ताकि उसमें विस्तार का सारा इतिहास आ जाए। यदि इस चलचित्र को उल्टा दिखाया जाए तब इससे विश्व का इतिहास विलोम क्रम में प्रदर्शित होगा। एक-दूसरे से दूर होने जाने के बजाय, नीहारिकाओं के पुंज एक दूसरे के समीप आते हुए मालूम पड़ेंगे। ज्यों-ज्यों चलचित्र पीछे घूमता जाएगा वे एक दूसरे के समीप होते जाएँगे, जब तक कि अन्त में वे सम्भवतः इतने समीप आ जाएँगे कि उनके बीच में कोई स्थान नहीं बचेगा। उससे भी पीछे हम यह मान सकते हैं कि तारों के बीच की जगह भी कम

म प्रत्येक नीहारिका के सब तारों को और प्रत्येक पुंज म नीहारिकाओं के वितरण को व्यक्त करना चाहते तो यह पहाड़ी बड़ा जटिल हो जाएगा जिसमें बहुत से शिखर और घाटियाँ होंगी। इससे अब हम समस्त ब्रह्माण्ड को पहाड़ी युक्त दिक्-काल से व्यक्त करने का प्रयत्न कर सकते हैं जिसमें पुंज इधर-उधर फैले हों। ऐसा विवरण गणितीय दृष्टि से बहुत जटिल होगा क्योंकि इसमें ऐसे भौगोलिक विवरण भी होंगे जिनकी विश्व के समग्र रूप से वर्णन म कोई आवश्यकता नहीं पड़ती। इस वर्णन को सरल करने के लिए हम एक मॉडल बनाते हैं जिसमें केवल वे ही लक्षण रखे जाते हैं जो आवश्यक हों। उसमें भौगोलिक विवरण को छोड़ देते हैं। जो लक्षण उसमें रखे जाते हैं वे हैं बड़े पैमाने पर एक समानता और विस्तारशीलता। अलग अलग पुंजों की बनावट आकार और उनकी ठीक ठीक स्थिति छोड़ दी जाती है।

इस प्रकार हम दिक्-काल का ऐसा प्रतिरूप बनाते हैं जिसम ब्रह्माण्ड को सन्निकट के बजाय यथार्थ रूप से एक समान मानकर व्यक्त किया जाता है। इन सरल प्रतिरूपों (माडलों) म हम यह मान लेते हैं कि पदार्थ एम पुंजों के रूप म एकत्रित नहीं है जिनके बीच म बहुत स्थान हो बल्कि उसका वितरण सतत और निष्कोण (smooth) है।

जिस प्रकार हम पुंज के रूप मे पदार्थ के वितरण को यह कहकर समझा सकते हैं कि वह दिक्-काल मे एक ऐसी पहाड़ी है जहाँ पुंज दिखाई देता है या हम कह सकते हैं कि दिक्-काल पुंज के आस पास वक्रित है उसी प्रकार निष्कोण किये हुए प्रतिरूप मे विश्व को एक दिक्-काल से व्यक्त कर सकते हैं जो एक समान रूप से वक्रित हो। विभिन्न पुंजों के पदार्थ को निष्कोण करने का प्रभाव यह होता है कि उनकी वक्रता भी तदनुसार निष्कोण हो जाती है जिससे थोड़ी-सी वक्रता सारे प्रतिरूप म ही आ जाती है। विश्व की यह समग्र वक्रता, कुछ-कुछ साधारण आकाश म गोले की वक्रता के सदृश है परंतु हम दिक् काल की कुल वक्रता की पृथ्वी के साथ तुलना करके वक्रता का दिक् काल पहाड़ियों के साथ सादृश्य और आगे नहीं बढ़ाएंगे क्योंकि यह भ्रम उत्पन्न करने वाला होगा।

आइंस्टाइन का गुरुत्व नियम और उसके साथ-साथ निष्कोण करने की कल्पना—विशुद्ध एक-समानता की धारणा—से हम विश्व के अनेक प्रतिरूप बना सकते है जिसम समग्र वक्रता के कई भिन्न रूप होते हैं। इस समग्र वक्रता का मुख्य प्रभाव यह है कि कुछ प्रतिरूपों म इसका मतलब यह होगा कि विश्व विस्तारशील मालूम पड़ता है। चूंकि आपेक्षिकता सिद्धान्त म निर्देशांक पद्धति के चुनाव म हम स्वतन्त्र है, इसलिए यहाँ भी हम चुनाव की कुछ स्वतन्त्रता है। हम ऐसे निर्देशांक ले सकते है कि निष्कोण किया गया पदार्थ विरामावस्था म हो और दिक्-काल म एक निश्चित वक्रता हो, या हम

निर्देशाक ऐसे ले सकते है कि पदाथ विस्तारशील मालूम हो और वक्रता कुछ कम मालूम हो । यह तो स्वेच्छा पर है कि हम कौन से निर्देशाक लेते है इससे अन्तिम परिणाम पर कोई प्रभाव नही पडता । अन्तिम परिणाम यह भविष्यवाणी ही है कि विश्व मन्त्र की इन प्रतिरूपो के अनुसार दूरस्थ पिण्डो का स्पेक्ट्रम लाल की दिशा म स्थानान्तरित दिखाई पडेगा । हम लाल की दिशा मे स्थानान्तरण का कारण या तो विस्तार मान सकते हैं या वक्रता और या थोडा थोडा दोनो को ही मान सकत हैं । चू कि विस्तार की सकल्पना, दिक्-काल वक्रता की सकल्पना से आसान है, इसलिए विश्व को विस्तारशील मानना कठिन मानने से अधिक सरल होता है पर तु गणितीय दृष्टि स दोना सकल्पनाएँ एक ही हैं । जहा तक सूय के स्पेक्ट्रम की रेखाओ म लाल की दिशा मे स्थानान्तरण सम्बन्धी भविष्यवाणी का सम्ब ध है और जिससे अध्याय 9 म भी हमारा सम्बन्ध रहा था, उसम दूसरे ढग से सोचना अच्छा रहता है अर्थात् लाल की दिशा मे स्थानान्तरण का कारण वक्रता मानना सरल होता है ।

हम जिन प्रतिरूप विश्वो पर विचार कर रहे थे उनके लक्षण कुछ मिलते जुलते हैं । कुछ दूसरे प्रतिरूप भी हैं जो हमारे अपने विश्व के गुणो से मिलते जुलते हैं । कुछ दूसर प्रतिरूप भी हैं जो आइन्स्टाइन नियम और एकसमानता की धारणा के अनुकूल हैं और उनम लाल के बजाय नीले रग की दिशा मे स्थानान्तरण होता है जो विश्व के सकुचन के अनुरूप है । ऐसे प्रतिरूपा के होने से आइन्स्टाइन सिद्धान्त के बहिष्कार करने का कोई कारण नही है । इसका मतलब है कि सिद्धा त अपूर्ण है—किसी अतिरिक्त धारणा की आवश्यकता है जिससे अवाछित प्रतिरूपा का बहिष्कार हो जाएगा । बहुत-सी धारणाए सुझाई गई हैं, पर तु अभी तक कोई सतोषजनक सिद्ध नही हुई है ।

अब हम यह ध्यान मे रखते हुए, विस्तार के परिणामा पर आगे विचार करेंगे कि हम जो कुछ कहते हैं उसे यदि आवश्यक हो तो, कभी भी दिक् काल की वक्रता के रूप म व्यक्त किया जा सकेगा । इसका सबसे प्रत्यक्ष परिणाम यह है कि यदि विश्व विरल होता जा रहा है—यदि नीहारिका पुज एक-दूसरे से दूर होते जा रहे हैं, तो पहले वे अब के मुकाबले पास पास रहे होगे । माना कि हम विस्तारशील विश्व का कई करोड वष पहले तक का एक चलचित्र लेते हैं ताकि उसमे विस्तार का सारा इतिहास आ जाए । यदि इस चलचित्र को उल्टा दिखाया जाए तब इससे विश्व का इतिहास विलोम क्रम म प्रदर्शित होगा । एक दूसरे से दूर होने जाने के बजाय नीहारिकाओ के पुज एक-दूसरे के समीप आते हुए मालूम पडेंगे । जसे-जसे चलचित्र पीछे खुलता जाएगा व एक दूसर के समीप होते जाएगे जब तक कि अन्त म वे सम्भवत इतने समीप आ जाएगे कि उनके बीच म कोई स्थान नही बचेगा । उसम भी पाद हम यह मान सकते हैं कि तारा के बीच की जगह भी कम

होती जाएगी, और सारा उपलब्ध स्थान एक परम सघनित गोले में भर जाएगा जिसमें तारे बने होंगे। इस गोले में इतना सघनन हो चुका होगा क्योंकि ज्योतिष के द्वारा यह पता न चलने पर कि अभी अत्यधिक सघनित गोल अवस्था कभी आई थी या नहीं। एकमात्र ब्रह्माण्डीय प्रतिरूपों से ही ऐसा मानने का कारण समझ में आ सकता है।

वस्तुतः पहले क्या हुआ होगा इस सम्बन्ध में जानकारी के लिए हम ब्रह्माण्डीय प्रतिरूपों पर भी विश्वास नहीं कर सकते क्योंकि यदि ऐसी अत्यन्त सघनित अवस्था वास्तव में कभी थी तो उसके पास क्वांटम गुणों से ऐसा मालूम पड़ता है कि ऐसी स्थिति में क्वांटम गुणों का महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा होगा। हम देख चुके हैं कि आइंस्टाइन के सिद्धान्त में ऐसे प्रभावों की व्याख्या नहीं की जा सकती। इसलिए वास्तव में इस अत्यधिक सघनित अवस्था के बारे में कोई विश्वसनीय जानकारी प्राप्त नहीं है। इसके अतिरिक्त क्वांटम प्रभाव के होने से यह निष्कर्ष निकलता है कि अत्यधिक सघनित अवस्था में पहले जो भी रहा होगा उसका विश्व के आगे के आचरण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा होगा। यह सब तो केवल अनुमान ही है। इससे हम केवल यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि यदि यह विश्व वास्तव में अत्यधिक सघनित अवस्था से ही उत्पन्न हुआ है तो वह अत्यधिक सघनित अवस्था ही सबसे प्राचीन अवस्था है जिसके बारे में कुछ भी वैज्ञानिक जानकारी मिलने की कोई सम्भावना नहीं है। वास्तव में ऐसी अवस्था कभी आई थी या नहीं यह अब भी विवादास्पद विषय है। उपलब्ध ज्योतिष आंकड़े इतने परिशुद्ध नहीं हैं कि इस समस्या के बारे में कोई निर्णय लिया जा सके। जो लोग इस अवस्था के होने में विश्वास करते हैं वे उस अत्यधिक सघनित अवस्था को विश्व का प्रारम्भ या विश्व की उत्पत्ति का समय या इसी प्रकार की संज्ञा देते हैं। इन अभिव्यक्तियों का अर्थ केवल आरम्भिक समय ही है जिसके बारे में किसी वैज्ञानिक जानकारी की कभी कोई सम्भावना नहीं है। अच्छा यही होगा कि इनका बहिष्कार किया जाए क्योंकि इनसे अवांछित तत्त्वमीमांसीय अर्थ निकलेंगे।

विश्व के अन्य प्रतिरूप भी हैं जिनमें अत्यधिक सघनित अवस्था आती ही नहीं और वे उपलब्ध आंकड़ों तथा आइंस्टाइन के गुरुत्व नियम के संगत भी हैं। इनमें सबसे अच्छा प्रतिरूप वह है जिसे स्थिर अवस्था प्रतिरूप कहते हैं। हम देख चुके हैं कि ब्रह्माण्ड सिद्धान्त के अनुसार आप यह नहीं बता सकते कि विश्व में आप किस स्थान पर हैं। परन्तु विभिन्न नीहारिकाओं के भिन्न ग्रहों पर स्थित दो प्रेक्षक यह बता सकते हैं कि वे कब हैं (उनका काल कौन-सा है)—उदाहरण के लिए वे दोनों ही देखेंगे कि यह विश्व विस्तृत होने के साथ-साथ विरल होता जा रहा है और विश्व के एक निश्चित

विरलन के लिए समय के बारे में दोनों एकमत होंगे। परन्तु स्थिर अवस्था-प्रतिरूप में आप अपनी स्थिति के बारे में जितना शुद्धता से कहाँ बता सकते हैं उतनी ही शुद्धता से 'कब' बता सकेंगे। कहने का मतलब यह है कि स्थिर-अवस्था प्रतिरूप में यह मान लिया गया है कि विश्व देखने में न केवल विभिन्न स्थानों पर स्थित प्रेक्षकों को मोटे तौर से समान मालूम पड़ता है, बल्कि विभिन्न समयों पर एक या विभिन्न स्थानों पर स्थित प्रेक्षकों को भी समान ही दिखाई पड़ेगा। यहाँ पर आकाश और काल का जो विभाजन आता है वह आपेक्षिकता का विरोधी नहीं है—यह उस ज्योतिषविदों के लिए प्रयुक्त किया गया है जो नीहारिका पुंजों के साथ-साथ चलते हों। यदि किसी ज्योतिषविद् का वर्ग नीहारिका से काफी भिन्न हो तो उससे विश्व का वर्णन काफी जटिल हो जाएगा। इसलिए स्वाभाविक है कि हम उन्हीं के विवरणों पर विचार करना चाहेंगे जो सबसे सरल हों।

विस्तार होने पर भी विश्व का रूप समय के साथ साथ न बदले इसके लिए यह प्रत्यक्ष रूप से आवश्यक है कि जैसे जैसे नीहारिका पुंजों का विरलन होता रहे वैसे-वैसे उनके बीच के स्थान को भरने के लिए नये पुंज बनते रहें। परन्तु नये पुंज कहाँ से आएँ? स्थिर अवस्था सिद्धान्त के अनुसार अन्तर्नीहारकीय आकाश में इस दर से पदार्थ आता रहना चाहिए कि विस्तार के कारण होने वाले विरलन की पूर्ति होती रहे। हम यह मान सकते हैं कि सारा पदार्थ शुरू में हाइड्रोजन गैस के रूप में था और उसी से आगे चलकर तारे, नीहारिकाएँ और पुंज बने। हाइड्रोजन के प्रकट होने की दर बहुत कम मानी जाती है—एक हजार वर्ष में सेंट पाल कथेड्रल के बराबर स्थान में एक परमाणु—यह इतनी कम है कि इसे सीधे प्रेक्षण से अलग पहचानना कठिन है परन्तु विस्तार के कारण विरलन की पूर्ति करने के लिए यह काफी है। जिस प्रक्रम से हाइड्रोजन प्रकट होता रहती है उसे सतत सृष्टि' कहते हैं, परन्तु इस शब्द में भी तत्त्वमीमांसा की झलक है और अच्छा यह होगा कि इसका प्रयोग न किया जाए। पहले पहल ऐसा मालूम होगा कि ऐसा प्रक्रम ऊर्जा संरक्षण नियम के प्रतिकूल है जो आइंस्टाइन के सिद्धान्त का एक अंग है। परन्तु जब विश्व की कुल वक्रता पर विचार करें तो ऐसा मालूम पड़ेगा कि यह प्रक्रम आपेक्षिकता के पूर्णतः अनुकूल है। ऐसा नहीं हो सकता कि हाइड्रोजन के प्रकट होने की दर कुछ भी हो। नये परमाणुओं के प्रकट होने की दर ठीक उतनी ही होनी चाहिए जो विस्तार की पूर्ति के लिए आवश्यक है।

विश्व के कई एक प्रतिरूप हैं जो आइंस्टाइन के सिद्धान्त पर आधारित हैं और जो प्राप्त ज्योतिष आँकड़ों के अनुकूल हैं। उन सबमें ही कुछ-न-कुछ दोष है और उन दोषों में सबसे प्रत्यक्ष यह है कि वे केवल एक स्थान चित्र ही प्रदर्शित करते हैं जिसमें नीहारिकाओं और पुंजों का आकार और रचना

व्यक्त नहीं होती। इससे अधिक विस्तृत प्रतिरूप बनाने से पहले कुछ भीषण गणितीय समस्याएँ हल करनी पड़ेंगी। कौन सा प्रतिरूप सबसे अच्छा है यह निश्चित करने के लिए हमें अधिक शुद्ध ज्योतिष आँकड़ों की आवश्यकता है।

अध्याय 12

परम्परा और प्राकृतिक नियम

सारे विवाद मे सबसे कठिन समस्या यह है कि शब्द सम्बन्धी विवाद और तथ्य-सम्बन्धी विवाद म भेद किया जाए। यह कठिन नही होना चाहिए पर व्यवहार म यह कठिन हो है। यह भौतिकी के लिए भी उतना ही सत्य है जितना अन्य विषयों म। सत्रहवी शताब्दी म इस पर बहुत विवाद रहा कि 'बल' क्या है। हमार लिए तो अब यह एक वादविवाद के समान ही लगता है कि बल की परिभाषा क्या हो, परन्तु उस समय इसका महत्व बहुत अधिक था। टेन्सर विधि, जो आपेक्षिकता गणित म प्रयुक्त की जाती है, उसका एक उद्देश्य यह है कि भौतिकी क नियमो म जो कुछ पूर्णत ऐच्छिक (विस्तृत दृष्टि से) है उसका बहिष्कार किया जाए। यह तो प्रत्यक्ष ही है कि जो कुछ भी निर्देशांक के चुनाव पर निर्भर है वह उन दृष्टि से 'ऐच्छिक' है। एक व्यक्ति किसी नाव का बाँस से खेता हुआ उसके साथ-साथ चलता है, यदि वह अपने बाँस को हटा न ले तो नदी के तल से उसकी स्थिति समान रूप से बनी रहेगी। लिलीपुट के निवासी इस बात पर कितनी ही लम्बी बहस कर सकते हैं कि वह व्यक्ति चल रहा है या स्थिर खडा है। पर वादविवाद शब्दो का होगा तथ्यों का नहा। यदि हम अपने निर्देशांक नाव के सापेक्ष स्थिर मानें तो वह चलता हुआ मालूम पडेगा और यदि हम निर्देशांक नदी के तल के सापेक्ष स्थिर मानें तो वह व्यक्ति स्थिर होगा। हम भौतिक नियमो को ऐसे ढग से व्यक्त करना चाहते हैं कि यदि हम एक नियम को दो अलग अलग निर्देशांक पद्धतियों म व्यक्त करें तो हम गलती से यह न मान बैठें कि हमार पास दो भिन्न नियम हैं जब कि प्रत्यक्ष रूप से एक ही नियम को भिन्न भाषाओं म दो तरह से व्यक्त किया गया है। यह टेन्सर विधि की मदद से सम्भव हो सकता है। कुछ नियम, जो एक भाषा म युक्तिसंगत मालूम पड़ते हैं उनका दूसरी भाषा म रूपान्तरण नहीं किया जा सकता। ऐसे नियमों का प्राकृतिक होना सम्भव नही है। जो नियम एक निर्देशांक भाषा म दूसरी म रूपान्तरित किए जा सकते हैं उनमे कुछ लक्षण होने हैं।

इन्हीं की मदद से ऐसे प्राकतिक नियम ढूँढे जा सकते हैं जो आपेक्षिकता सिद्धान्त के अनुसार सम्भव हों। इन सम्भाव्य नियमों में से हम एक सरलतम नियम लेते हैं, जो पिण्डों की वास्तविक गति का ठीक ठीक पूर्वानुमान करता है। इस व्यंजक को प्राप्त करने में तर्कशास्त्र और अनुभव दोनों का समान योग दान है।

परन्तु वास्तविक प्राकृतिक नियमों पर पहुँचने की समस्या को अकेले टेन्सर विधि से ही हल नहीं करना है उसके लिए सतर्क ध्यान की भी आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में कुछ किया गया है, विशेष रूप से एडिंगटन ने इस सम्बन्ध में काय किया है परन्तु अभी बहुत-कुछ करना बाकी है।

अब हम एक सरल उदाहरण लेंगे। फिट्सजेरल्ड आकुंचन की सकल्पना की भाँति मानो कि लम्बाइयाँ एक दिशा में दूसरी की अपेक्षा कुछ छोटी रहती हैं। मानो कि उत्तर दिशा की ओर किसी फुटे की लम्बाई पूर्व दिशा में उसकी लम्बाई की आधी है और मानो कि बाकी सभी पिण्डों के बारे में भी यही बात सत्य है। क्या ऐसी परिकल्पना का कोई अर्थ है? यदि आपके पास मत्स्य वसी हो जिसकी लम्बाई पश्चिम दिशा में होने पर 15 फुट हो और आप इसे अब उत्तर दिशा में रखते हैं। पर उसकी लम्बाई अब भी 15 फुट ही रहती है क्योंकि आपका फुटा भी तो आकुंचित हो गया है। वह आपको छोटी नहीं महसूस होगी क्योंकि आँख भी समान रूप से प्रभावित होती है। यदि आप परिवर्तन को देखना चाहते हैं तो साधारण मापों से यह सम्भव नहीं होगा यह तो किसी माइकल्सन मोर्ली जैसे प्रयोग से ही सम्भव हो सकता है जिसमें लम्बाइयाँ मापने के लिए प्रकाश-वेग का उपयोग होता है। तब आपको यह निर्णय करना होगा कि लम्बाई में परिवर्तन मानना सरल है या प्रकाश वेग में। प्रायोगिक तथ्य तो यही होगा कि आपके फुटे के अनुसार मापी गई दूरियों के लिए प्रकाश को एक दिशा में दूसरी दिशा की अपेक्षा अधिक समय लगता है—या माइकल्सन मोर्ली प्रयोग की भाँति इसमें अधिक समय लगना चाहिए पर लगता नहीं है। इसके लिए आप अपनी मानें कई ढंग से ले सकते हैं पर आप जो भी विधि अपनाएँ उसमें परम्परा का एक प्रश्न अवश्य रहेगा। मापकों के बारे में निर्णय ले लेने के बाद भी परम्परा का प्रश्न नियमों में रहता ही है और यह प्रायः भ्रान्तिजनक और दुर्बोध रूप में होगा। परम्परागत प्रश्न को हटाना वास्तव में बड़ा ही कठिन है जितना ही विषय का अध्ययन करें यह उतना ही अधिक जटिल मालूम होगा।

एक दूसरा महत्त्वपूर्ण उदाहरण है इलेक्ट्रॉन के आकार का प्रश्न। प्रायोगिक रूप से हम जानते हैं कि सभी इलेक्ट्रॉनों का आकार समान होता है। प्रयोगों द्वारा निर्णीत यह तथ्य कितना सत्य है और किस हद तक यह मापने की परम्परा का परिणाम है? हम यहाँ दो प्रकार की तुलनाएँ करनी हैं (1) एक ही

इलेक्ट्रान की विभिन्न समयों पर, (2) एक ही समय पर दो इलेक्ट्रानों की। तब (1) और (2) का मिलाकर हम दो इलेक्ट्रानों की विभिन्न समयों पर तुलना कर सकते हैं। हम ऐसी कल्पनाओं का बहिष्कार करेंगे जिनका सभी इलेक्ट्रानों पर समान प्रभाव पड़ता हो। उदाहरण के लिए यह मानने का कोई लाभ नहीं है कि दिक्-काल के किसी भाग में वे सभी किसी दूसरे भाग की तुलना में बड़े होंगे। ऐसे परिवर्तन से हमारे मापकों पर भी उतना ही प्रभाव पड़ेगा जितना मापी जाने वाली वस्तुओं पर, इसलिए इससे कोई दर्शनीय प्रभाव मालूम नहीं हो सकता। या हम यों कह सकते हैं कि उससे कोई परिवर्तन होता ही नहीं। पर उदाहरण के लिए दो इलेक्ट्रानों का द्रव्यमान समान होना पूर्णतः परम्परागत नहीं माना जा सकता। यदि काफी सूक्ष्म रूप से और परिशुद्धता से मापा जाए तो हम दो अलग अलग इलेक्ट्रानों के कारण एक तीसरे इलेक्ट्रान पर पड़ने वाले प्रभावों की तुलना कर सकते हैं और यदि समान परिस्थितियों में यह प्रभाव समान हो, तो हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि उनकी समानता पूर्णतः परम्परागत नहीं है।

सम्बन्धित प्रक्रम को एडिंगटन ने आपेक्षिकता सिद्धान्त के बहुत भाग के भाग में 'संसार निर्माण' की संज्ञा दी है। जिस संरचना का निर्माण करना है वह उसी प्रकार का भौतिक संसार है जैसा कि हम उसे जानते हैं। एक मितव्ययी आर्किटेक्ट उसे कम से कम पदार्थ से बनाने का प्रयत्न करेगा। यह प्रश्न तर्कशास्त्र और गणित का है। इन दो विषयों में हमारी जितनी अधिक तकनीकी योग्यता है हम उतना ही वास्तविक निर्माण कर सकेंगे और एकमात्र पत्थर के ढेरों से हम सन्तोष प्राप्त नहीं होगा। परन्तु प्रकृति में जो निर्माण पत्थर उपलब्ध हैं उन्हें उपयोग में लाने से पहले काट-छाँट करके सही आकार में गढ़ना होगा यह सब निर्माण प्रक्रम का ही एक अंग है। यह सम्भव होने के लिए कच्चे माल की कोई संरचना होनी चाहिए, (इसे हम लकड़ी में दानेदार संरचना के सदृश मान सकते हैं) परन्तु किसी भी प्रकार की संरचना से काम चल जाएगा। उत्तरोत्तर गणितीय संशोधनों से हम अपनी आरम्भिक आवश्यकताओं को काट छाँटकर कम करते जाते हैं जब तक कि वे बहुत थोड़ी न रह जाएँ। यदि कच्चे माल के रूप में यह आवश्यक न्यूनतम संरचना ज्ञात हो तो हम देखेंगे कि हम उससे वह गणितीय व्यंजक बना सकते हैं जिसमें उस संसार को व्यक्त कर सकने के लिए सभी गुण हों, जिसे हम जानते हैं—विशेष रूप से संरक्षण का गुण जो संवेग और ऊर्जा (या द्रव्यमान) का लक्षण है। हमारा कच्चा माल मुख्यतः घटनाएँ ही है, परन्तु हम देखते हैं कि हम इसमें जो कुछ बना सकते हैं उसे मापने पर ऐसा मालूम पड़ता है कि उसे न कभी उत्पन्न किया जा सकता है और न कभी नष्ट किया जा सकता है तो कोई आश्चर्य न होगा कि हम पिण्डों में विश्वास करने लगें। ये घटनाओं से बनी

गणितीय सरचनाएँ हैं परन्तु उनके शाश्वत होने के कारण वे व्यावहारिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं और हमारी इन्द्रियाँ जो सम्भवत जीव-सम्बन्धी आवश्यकता के लिए बनी है घटनाओ में सातत्य—जो सद्धान्तिक दृष्टि से अधिक मूलभूत है—के बजाय उन्हे देखने की आदी हैं। इस दृष्टिकोण से यह बड़े आश्चर्य की बात है कि भौतिक विज्ञान से वास्तविक ससार के बारे में कितना कम ज्ञान प्राप्त होता है। हमारा ज्ञान न केवल परम्परागत ज्ञान से ही बल्कि हमारे दृश्यपरक तन्त्र (Perceptual Apparatus) की वरणात्मकता के कारण भी सीमित है।

विशेष रूप से सममिति अवस्थाएँ पूर्ण रूप से माप की परम्परा से बनाई जा सकती हैं और यह मानना स्वाभाविक ही होगा कि वे वास्तविक ससार के किसी गुण को व्यक्त नही करती। एडिंगटन के अनुसार गुरुत्व नियम को स्वय माप की परम्परा पर आधारित माना जा सकता है। उसका कहना है कि माप की परम्परा से मापे गए आकाश में एक समदिक्ता (Isotropy)[1] और समागता आ जाती है और यह आवश्यक नही है कि आरम्भ में उस सम्बन्ध सरचना में इसका कोई प्रतिरूप हो जिसके बारे में सर्वेक्षण किया जा रहा है। यह समदिक्ता और समागता आइन्स्टाइन के गुरुत्व नियम में सही-सही व्यक्त होती है।[2]

हमारे दृश्यपरक तन्त्र में वरणात्मकता के कारण जो परिमितता है उसे ऊर्जा अविनाशिता द्वारा निदर्शित किया जा सकता है। यह धीरे धीरे प्रयोगो द्वारा खोजा गया और प्रकृति का एक सुस्थापित आनुभविक नियम मालूम पडा। अब यह सम्भव मालूम हुआ कि हम अपने मूल दिक्काल सातत्यक से एक ऐसा गणितीय व्यजक बना सकते हैं जिसमें ऐसे गुण होगे कि वह अविनाशी मालूम पडेगा। तब यह कथन कि ऊर्जा अविनाशी है भौतिकी का साध्य (proposition) नही रह जाता उसके बजाय वह भाषाशास्त्र (Linguistics) और मनोविज्ञान का साध्य रह जाता है। *भाषाशास्त्र* के साध्य के रूप में ऊर्जा विचाराधीन गणितीय व्यजक का दूसरा नाम है। मनोविज्ञान का एक साध्य है हमारी इन्द्रियाँ ऐसी हैं कि हम यह जान सकते हैं कि विचाराधीन गणितीय व्यजक क्या है और जैसे-जैसे हम वैज्ञानिक प्रेक्षणों द्वारा अपने स्थूल प्रत्यक्ष ज्ञान में सुधार करते जाते हैं हम उसके अधिकाधिक समीप पहुँचते जाते हैं। भौतिकीविद जितना समझते थे कि वे ऊर्जा के बारे में *जानते थे यह उससे बहुत कम है।*

---

1 समदिक्ता का अर्थ है सब दिशाओं में एक समान—अर्थात एक फुटे की लम्बाई उत्तर दिशा में भी उतनी ही होगी जितनी पूर्व दिशा में।

2 Mathematical Theory of Relativity पृष्ठ 238।

पाठक पूछ सकता है तो फिर भौतिकी म क्या दवा है ? द्र यात्मक ससार के बार म हम वास्तव म क्या जानते हैं ? यहाँ हम भौतिकी के तीन विभागों मे भेद कर सकते हैं। सबसे पहला विभाग आपेक्षिकता सिद्धान्त मे सम्मिलित है जिसका अधिक-से अधिक सम्भव सामान्यीकरण किया गया है। दूसरे व नियम हैं जो आपक्षिकता के अतगत नही आ सकते। तीसरा वह है, जिसे हम भूगोल कह सकते हैं। अब हम इन पर बारी बारी से विचार करेंगे।

आपेक्षिकता सिद्धात हम परम्परा के अतिरिक्त यह बताता है कि विश्व म घटनाओ की चार विमाएँ होती हैं और इस क्रम मे जो घटनाएँ पास पास हो उनके बीच एक सम्बन्ध होता है जिसे अन्तराल कहते हैं और यदि उपयुक्त सावधानिया बरती जाएँ तो उसका मापना भी सम्भव है। इससे हम यह भी ता चलता है कि 'निरपक्ष गति' निरपक्ष आकाश और निरपेक्ष काल का कोई भौतिक महत्त्व नही है भौतिकी के व नियम, जिनम य सकल्पनाएँ आती हैं, मान्य नही हैं। यह स्वय एक भौतिक नियम नही है बल्कि यह एक ऐसा लाभदायक नियम है जिससे हम कुछ प्रस्तावित भौतिक नियमों का असन्तोष जनक कहकर उनका बहिष्कार कर सकते हैं।

आपेक्षिकता सिद्धात म इसके अतिरिक्त और कुछ ऐसा नही है जिसे भौतिक नियम माना जा सके। बहुत-सा गणित ऐसा है जिससे यह प्रदर्शित होता है कि कुछ गणित निर्मित राशियाँ ठीक वसी ही होनी चाहिएँ जसी कि हम चीजो को प्रत्यक्ष रूप म देखते हैं और एक मत यह है कि सिद्धान्त रूप म भौतिकी और मनोविज्ञान म एक भेद यह है कि य गणित निर्मित राशियाँ वही हैं जिन्हे हमारी इन्द्रियाँ देखने की आदी हैं। परन्तु यथार्थ दृष्टि म उनमे से एक भी भौतिकी के अतगत नही आती ह।

भौतिकी का वह भाग जो अभी भौतिकी के अन्तगत नही लाया जा सकता काफी बडा और महत्त्वपूर्ण है। भौतिकी म ऐसा कुछ नही है जिससे यह समझा जा सके कि इलेक्ट्रान और प्रोटान क्यो होने चाहिएँ आपक्षिकता से यह भी नहीं समझाया जा सकता कि पदार्थ छोटे-छोटे खण्डो के रूप मे क्यो होता है। इसके लिए क्वाटम सिद्धात है जो पदार्थ के सूक्ष्म स्वरूप के गुणो की व्याख्या करता है। क्वाटम सिद्धान्त को आपक्षिकता के विशिष्ट सिद्धान्त के अनुकूल तो बना लिया गया है परन्तु क्वाटम सिद्धान्त और व्यापक आपक्षिकता के सन्नियमन की दिशा म किए गए प्रयत्न असफल रहे हैं। भौतिकी के इस भाग को व्यापक आपेक्षिकता के ढाचे के अन्तगत लाने म बडी भीषण कठिनाइयाँ दिखाई पडती हैं। अभी तो स्वय क्वाटम सिद्धान्त मे उतनी ही भीषण कठिनाइयाँ हैं और कई भौतिकीविदो का विचार है कि सम्भवत क्वाटम सिद्धात और व्यापक आपक्षिकता के सश्लेषण से इनम से कई कठिनाइयाँ दूर हो जाएँगी। जसा कि हम देख चुके हैं इस समय स्थिति यह

है कि आपेक्षिकता सिद्धात से, विन्यास रूप में पदार्थ के गुणों की काफी संतोषजनक रूप मे समझा जा सकता है जबकि क्वाटम सिद्धात से सूक्ष्म रूप में पदार्थ के गुणों को काफी सन्तोषजनक रूप से समझा गया है। फिर भी सिवाय इसके कि आपेक्षिकता व विशिष्ट सिद्धात में दोनों का आधार समान ही है, इन दोनों सिद्धातो में प्रत्यक्ष रूप से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह परिस्थिति सन्तोषजनक नहीं है और इसके स्थायी होने की सम्भावना नहीं है। कुछ लोगों का विचार है कि व्यापक आपेक्षिकता का एक ढग से विस्तार किया जा सकता है कि उससे क्वाटम सिद्धात के सभी परिणामों की व्याख्या की जा सके बल्कि इस समय जितनी अच्छी तरह क्वाटम सिद्धात से व्याख्या होती है उससे भी अधिक सन्तोषजनक ढग से। अपने जीवन के अन्तिम दिनो आइस्टाइन ऐसा सोचने वाला म से था। आजकल अधिकाश भौतिकविद् समझते है कि यह दृष्टिकोण गलत है।

व्यापक आपेक्षिकता उसका एक चरम उदाहरण है जिसे अगली-से अगली विधि कहा जा सकता है। अब गुरुत्व को ग्रहों पर सूर्य के प्रभाव के कारण मानने की आवश्यकता नहीं है। इसे उस क्षेत्र का लक्षण माना जा सकता है जिसमें किसी समय ग्रह स्थित है। यह माना जाता है कि जैसे-जैसे हम दिक्काल के एक भाग से दूसरे भाग में जाते हैं यह लक्षण थोड़ा थोड़ा करके क्रमिक रूप से और लगातार बदलते हैं न कि अचानक और झटको के साथ। विद्युत् चुम्बकत्व के प्रभाव को भी इसी प्रकार का माना जा सकता है परन्तु जैसे ही विद्युत् चुम्बकत्व को क्वाटम सिद्धात के अनुकूल बनाया जाता है उसका स्वरूप बिलकुल ही बदल जाता है। उसका सतत होने का लक्षण पूर्णत खत्म हो जाता है और उसका आचरण असतत हो जाता है। यह क्वाटम सिद्धान्त का एक लक्षण है जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं। परन्तु यदि हम क्वाटम सिद्धात की ये धारणाए गुरुत्व पर लागू करना चाहे तो हम देखते है कि वे उसके लिए उपयुक्त नहीं बैठती और किसी एक या दोनों ही सिद्धान्तो में काफी परिवर्तन की आवश्यकता होती है। किस परिवर्तन की आवश्यकता है यह हम अभी तक नहीं जानते।

इस कठिनाई को एक भिन्न ढग से समझाया जा सकता है। जब कोई ज्योतिर्विद् सूर्य का प्रेक्षण करता है तो सूर्य उससे पूर्णत नवाब की भाँति बेखबर रहता है। परन्तु जब कोई भौतिकीविद यह जानने का प्रयत्न करता है कि परमाणु में क्या हो रहा है तो वह जिस उपकरण का प्रयोग करता है वह प्रेक्षित वस्तु से बहुत छोटा होने के बजाय बहुत बड़ा होता है और इसलिए उसका प्रेक्षित वस्तु पर कुछ प्रभाव पड सकता है। यह देखा गया कि जिस प्रकार का उपकरण किसी परमाणु की स्थिति मालूम करने के लिए सबसे अच्छा है वह उसके वेग पर अवश्य प्रभाव डालेगा और वह उपकरण, जो

परमाणु का वेग मालूम करने के लिए सबसे उपयुक्त है, वह उसकी स्थिति पर प्रभाव डालता है। इससे क्वाटम सिद्धात को आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धात के अनुकूल बनाने म काइ कठिनाई नही पडती, क्योकि उसम गुरुत्व की उपेक्षा कर दी जाती है और दिक्-काल को चपटा मान लिया जाता है चाह उसम परमाणु हो या न हो। परन्तु यदि हम क्वाटम सिद्धात को आपेक्षिकता के व्यापक सिद्धात के अनुकूल बनाना चाह तो गुरुत्व की उपेक्षा नही की जाती, और तब दिक-काल की वक्रता परमाणुओ के जहाँ तहा होने पर निभर रहती है। परन्तु जैसा कि हमने अभी देखा है, क्वाटम सिद्धात से यह स्पष्ट हो जाता है कि हम परमाणुओ की अवस्थिति सदव ही सही सही नही बता सकत। यही कठिनाई की जड है।

अन्त मे हम भूगोल पर आते हैं जिसम मैं इतिहास भी शामिल करता हूँ। भूगोल का इतिहास से पृथक्करण आकाश से काल के पृथक्करण पर निभर करता है जब हम उनका दिक काल के रूप मे सम्मिश्रण कर देते है तो हम भूगोल और इतिहास क सयोग को भी एक ही शब्द से व्यक्त करना होगा। आसानी के लिए, मैं इस व्यापक अथ म यहाँ एक ही शब्द, भूगोल, का प्रयोग करूगा।

भूगोल मे इस दृष्टि से व सभी बातें आ जाती है जो स्थूल रूप स दिक-काल के विभिन्न भागो म भेद करती हैं। एक भाग मे सूय है, एक म पृथ्वी है, इन दोनो के बीच के भाग म प्रकाश-तरगें है, कोई पदाथ नही है (वहा इधर उधर थोडे पदाथ को छोडकर)। विभिन्न भौगोलिक तथ्यो म कुछ हद तक सद्धान्तिक सम्बन्ध होता है इस सिद्ध करना ही भौतिक नियमो का उद्देश्य है।

हम अब इस स्थिति मे हैं कि हम सौरतन्त्र के सम्बन्ध मे भविष्य के और पीछे के बडे-बडे तथ्यो की सगणना लम्बी समयावधियो तक के लिए कर सकते है। परन्तु ऐसी सभी सगणनाओं म हम आधार के रूप में स्थूल तथ्यो की आवश्यकता होती ह। तथ्य परस्पर सम्बधित होते हैं परन्तु तथ्य केवल सामान्य नियमो स नही मालूम किए जा सकते उन्हे केवल दूसरे तथ्यों के आधार पर ही मालूम किया जा सकता है। इस प्रकार भूगोल के तथ्यो का भौतिकी मे अपना एक अलग स्वतन्त्र अस्तित्व है। चाहे कितने भी भौतिक नियम क्या न प्रयुक्त किए जाएँ किसी भौतिक तथ्य क बारे म केवल तभी कुछ अनुमान हो सकता है जब आँकडो के रूप म अन्य तथ्य मौजूद हो। यहाँ जब मैं 'तथ्यो' के बारे म कहता हूँ तो मेरा अभिप्राय भूगोल के विशिष्ट तथ्यो से है और उसी व्यापक अथ म जिसम कि मैं इस शब्द को प्रयुक्त करता रहा हूँ।

आपेक्षिकता सिद्धान्त म हमारा सम्बन्ध सरचना से है, न कि उस पदाथ

से जिनकी संरचना निर्मित है। इसके विपरीत भूगोल में पदार्थ का महत्त्व है। यदि एक स्थान और दूसरे स्थान में कोई अन्तर है तो या तो एक स्थान के पदार्थ और दूसरे स्थान के पदार्थ में कुछ अन्तर होना चाहिए या स्थान ऐसे हों कि किसी में पदार्थ है और किसी में नहीं है। इनमें से पहला अन्तर अधिक उपयुक्त मालूम पड़ता है। शायद हम यह कहना चाहें कि इलेक्ट्रॉन प्रोटॉन और अन्य उप परमाणविक कणों के अतिरिक्त बाकी स्थान खाली होता है। परन्तु खाली स्थान में प्रकाश-तरंगें होती हैं इसलिए हम यह नहीं कह सकते कि उसमें कुछ भी नहीं है। क्वांटम सिद्धान्त के अनुसार हम यह भी निश्चित रूप से नहीं बता सकते कि कौन-सी चीज कहाँ पर है केवल इतना ही कह सकते हैं कि एक इलेक्ट्रॉन के किसी एक स्थान में होने की सम्भावना दूसरे स्थानों की तुलना में अधिक है। कुछ लोगों का मत है कि प्रकाश-तरंगें और कण दोनों ही ईथर में विक्षोभ मात्र हैं दूसरे लोग केवल इतना ही कहते हैं कि वे केवल विक्षोभ हैं परन्तु जो भी हो जहाँ कहीं भी प्रकाश-तरंगें या कण होने की सम्भावना है वहाँ घटनाएं हो रही हैं। जहाँ कहीं भी ऊर्जा के किसी-न किसी रूप में होने की सम्भावना है उन स्थानों के बारे में हम इतना ही कह सकते हैं क्योंकि यह मालूम हुआ कि स्वयं ऊर्जा भी घटनाओं से निर्मित गणितीय संरचना है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि दिक्-काल में सब जगह घटनाएं हैं परन्तु उनका रूप इस बात पर निर्भर करेगा कि हम जिस क्षेत्र पर विचार कर रहे हैं वहां इलेक्ट्रॉन या प्रोटॉन के होने की कितनी सम्भावना है या वह क्षेत्र ऐसा है जिसे साधारणतः खाली कहा जाता है। परन्तु जहां तक घटनाओं की निजी प्रकृति का सम्बन्ध है हम उनके बारे में सिवाय इसके और कुछ नहीं जानते कि वे हमारे जीवन में घटनाओं के रूप में कब आती हैं। हमारा अपना अनुभव और प्रत्यक्ष ज्ञान भी घटनाओं के उस अपरिष्कृत द्रव्य का एक अंग ही होना चाहिए जिसे भौतिकी आकृति के रूप में व्यवस्थित करती है—या जिसे भौतिकी आकृतियों के रूप में व्यवस्थित पाती है। जहां तक उन घटनाओं का सम्बन्ध है जो हमारे जीवन का अंग नहीं हैं भौतिकी हमें उनकी आकृति तो बताती है परन्तु भौतिकी से यह पता नहीं चलता कि उनका अपना स्वरूप क्या है और न ही इसकी कोई सम्भावना दिखाई पड़ती है कि यह किसी विधि से मालूम किया जा सकता।

अध्याय 13

'बल' का बहिष्कार

न्यूटनीय पद्धति में, जिन पिण्डों पर कोई बल कार्य न कर रहे हों वे मानो रेखाओं में एकसमान वेग से चलते हैं, जब पिण्ड इस ढंग से गति नहीं करते तो उनकी गति में परिवर्तन का कारण 'बल' ही होता है। कुछ बल हमारी कल्पना शक्ति के लिए ग्राह्य मालूम पड़ते हैं उदाहरण के लिए किसी रस्सी या धागे द्वारा डाला गया बल टक्कर होने पर पिण्डों का बल, या किसी प्रकार का खिंचाव या धक्के का बल। जैसा कि हम पहले के एक अध्याय में बता चुके हैं, इन प्रसंगों के बारे में हमारा प्रत्यक्ष कल्पनाशील ज्ञान बिलकुल भ्रम-जनक है। वास्तव में इसका मतलब तो केवल इतना ही है कि पूर्व अनुभव की मदद से हम पहले से ही लगभग यह बता सकते हैं कि क्या होने वाला है और इसमें गणितीय संगणनाओं की आवश्यकता भी नहीं होगी। परन्तु गुरुत्व में तथा अल्प परिचित विद्युतीय क्रियाओं में प्रयुक्त 'बल' हमारी कल्पना को उस ढंग से स्वाभाविक नहीं लगते। यह बड़ा अजीब-सा लगता है कि पृथ्वी रिक्त स्थान में तैरती है स्वाभाविक तो यही लगता है कि उसे गिर जाना चाहिए था। इसीलिए पुराने लोगों का यह मत था कि पृथ्वी किसी हाथी पर टिकी होगी और हाथी किसी कछुए पर ठहरा हुआ होगा। न्यूटन के सिद्धान्त ने, दूर से क्रिया के अतिरिक्त दो अन्य कल्पनाशील नवीनताएं प्रस्तुत की। पहली यह थी कि गुरुत्वाकर्षण सदैव ही और नित्य ही नीचे की दिशा में नहीं होता अर्थात् सदैव पृथ्वी के केन्द्र की दिशा में नहीं होता। दूसरी यह थी कि एकसमान वेग से एक वृत्त में लगातार परिक्रमा करता हुआ पिण्ड उस अर्थ में एकसमान गति नहीं करता जिस अर्थ में हम वाक्यांश का प्रयोग उन पिण्डों के लिए होता है जो बिना किसी बल के प्रभाव के गति कर रहे हों। उसका कहना था कि पिण्ड को शाश्वत रूप से सरलरेखीय मार्ग से वृत्त के केन्द्र की दिशा की ओर हटाया जाता है जिसके लिए पिण्ड को उस दिशा की ओर खींचने वाला कोई बल होना चाहिए। इस प्रकार न्यूटन इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि ग्रह सूर्य की ओर एक बल द्वारा आकर्षित हो रहे हैं जिसे गुरुत्वाकर्षण कहते हैं।

17

जैसा कि हम देख चुके हैं इस विचार के स्थान पर आपेक्षिकता स्थापित हो गई। पुराने ज्यामितीय पथ में अब सीधी रेखाएं नहीं रहीं। अब या तो सरलतम रेखाएं या जियोडेसिक हैं परन्तु उनमें काल और आकाश दोनों ही सम्बद्ध हैं। यदि कोई प्रकाश किरण सौरतंत्र में से होकर गुजर रही हो तो ज्यामितीय दृष्टिकोण से उसकी कक्षा वह नहीं होगी जो धूमकेतु की होती है, परन्तु दोनों ही जियोडेसिक में चलते हैं। इससे सारा कल्पनात्मक चित्र ही बदल गया है। एक कवि कहेगा कि पानी पहाड़ियों से नीचे इसलिए आता है कि समुद्र उसे अपनी ओर आकर्षित करता है, परन्तु एक भौतिकीविद या साधारण व्यक्ति तो यही कहेगा कि पानी प्रत्येक स्थान पर इसलिए गति करता है कि उस स्थान पर भूमि की प्रकृति ही ऐसी है और इस बात का कोई प्रभाव नहीं होता कि आगे क्या है। जिस प्रकार आगे समुद्र होने के कारण पानी उस ओर बहने के लिए प्रवृत्त नहीं होता उसी प्रकार सूर्य के कारण भी ग्रह उसके चारों ओर घूमने के लिए प्रवृत्त नहीं होते। ग्रह सूर्य के चारों ओर इसलिए घूमते हैं कि वही मार्ग उनके लिए सबसे सुगम है—वैज्ञानिक भाषा में निम्नतम क्रिया का मार्ग है। जहां वे घूम रहे हैं उस क्षेत्र की प्रकृति के कारण ही वह मार्ग सबसे सुगम है न कि सूर्य से उद्भूत होने वाले किसी बल के कारण।

गुरुत्व को एक ऐसे बल के रूप में मानने की आवश्यकता—जो ग्रहों को सूर्य की ओर आकर्षित करता है—इस उद्देश्य से पड़ी कि यूक्लिडीय ज्यामिती को हर हालत में बनाए रखना था। यदि हम मान लें कि हमारा आकाश यूक्लिडीय है जबकि वास्तव में ऐसा नहीं है तो हमें भौतिकी में अपनी ज्यामिती की अशुद्धियां को दूर करने की आवश्यकता पड़ेगी। हम देखेंगे कि पिण्ड उस पथ में नहीं चलते जिसे हम सरलरेखीय मानने पर जोर देते हैं और हमें उनके इस आचरण की व्याख्या की आवश्यकता होगी। एडिंगटन ने इसी बात को काफी स्पष्टता के साथ प्रस्तुत किया है। उसने एक ऐसे भौतिकीविद की कल्पना की है जिसने अंतराल के लिए एक ऐसा *सूत्र मान लिया है जो आपेक्षिकता के विशिष्ट सिद्धांत में प्रयुक्त होता है*—वह एक ऐसा सूत्र है जिसमें प्रेक्षक का आकाश यूक्लिडीय हो माना गया है। वह आगे लिखता है

चूंकि अन्तरालों की प्रायोगिक विधियों से तुलना की सकती है इसलिए उसे जल्दी ही यह मालूम हो जाएगा कि अंतराल के लिए उसका सूत्र प्रेक्षण परिणामों के अनुकूल नहीं हो सकता और उसे अपनी भूल मालूम हो जाएगी। परन्तु मस्तिष्क को ग्रस्तता से सहज ही छुटकारा नहीं मिल सकता। अधिक सम्भावना यही है कि हमारा प्रेक्षक अपनी धारणा बनाए रखेगा और प्रेक्षणों में उत्पन्न विसंगति को किसी ऐसे प्रभाव के कारण मानेगा जो मौजूद है और

उसके परीक्षाधीन पिण्डा के आचरण पर प्रभाव डालता है। या हम कह सकते हैं कि वह किसी अलौकिक सत्ता का अस्तित्व मानेगा जिसे वह अपनी त्रुटियो के लिए उत्तरदायी ठहराएगा। सीधी रेखा मे एक समान गति म विपथन उत्पन्न करने वाली सत्ता को बल' नाम दिया गया है, जो यूटन की परिभाषा वाला बल है। हमारे प्रेक्षक की त्रुटि से जिस सत्ता का सहारा लिया गया है उसे 'बल क्षेत्र कहा जाता है

बल क्षेत्र किसी निर्देशाक तत्र की प्राकृतिक ज्यामिती, और उसके लिए स्वेच्छा से मानी गई अमूत ज्यामिती के बीच विसगति को व्यक्त करता है।[1]

यदि लोग नये तरीके मे, जिसमे बल की धारणा नही हो, इस ससार की कल्पना करना सीखें तो इससे न केवल उनकी भौतिक कल्पना शक्ति मे ही परिवतन आएगा बल्कि सम्भवत उनकी नैतिकता और राजनीति मे भी परिवतन आजाएगा। दूसरा वाला प्रभाव तर्कहीन होगा, फिर भी सम्भव तो है ही। सौरतत्र सम्बन्धी यूटन के सिद्धान्त मे सूय एक सम्राट की भाँति है जिसके आदेश ग्रहो को मानने पडते हैं। आइन्स्टाइन जगत मे व्यक्तिवाद अधिक है और न्यूटन की भाँति शासन कम है। इसके अतिरिक्त उसम रेल-पल भी कम है। हम देख ही चुके हैं कि आलस्य आइन्स्टाइन-जगत का मूल नियम है। समाचार पत्रो की भाषा म 'गतिशील का अथ होता है 'स्फूर्तिवान और प्रबल, परन्तु यदि इसका अभिप्राय गतिविज्ञान के सिद्धान्तो का निदशन' हो तो इसे ऊष्ण जलवायु वाले लोगो पर लागू करना होगा जो केले के वृक्ष के नीचे बठे इस बात की प्रतीक्षा करते हैं कि फल कब उनके मुँह मे आकर गिरेगा। मुझे आशा है कि भविष्य मे पत्रकार जब कभी 'सक्रिय व्यक्तित्व शब्द का प्रयोग करेंगे तो उनका अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से होगा जो किसी भी काय को उस समय सबसे कम कठिनाई वाली विधि से करेगा चाहे उसके भावी परिणाम कुछ भी क्यो न हो। यदि मैं भी इस परिणाम से सहमत होता तो मैंने बेकार म यह सब क्या लिखा होता।

हम क्या करना चाहिए इस सम्बन्ध मे प्राकृतिक नियमो स दलीलें लेन की प्रथा-सी बन गई है। ऐसी दलीलें मुझे भूल मालूम पडती हैं प्रकृति की नकल करना तो एक दासवृत्ति ही होगी। परन्तु आइन्स्टाइन न प्रकृति का जो चित्रण किया है यदि वही हमारा आदश हो तो ऐसा मालूम पडेगा कि अराजकतावादी ही सबसे अधिक सत्य हैं। भौतिक विश्व व्यवस्थित है पर इसलिए नही कि उसम कोई केन्द्रीय शासन है बल्कि इसलिए है कि हर कोई अपन अपन काय में सलग्न है। पदाथ के कोई दो कण कभी भी एक-दूसरे के सम्पक म नही आते। जब वे एक दूसरे के बहुत पास आ जाते हैं तब वे परस्पर दूर हट जाते

---

1 Mathematical Theory of Relativity, पृष्ठ 37 38।

हैं। यदि कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति को धक्का देकर गिराने के अपराध में पकड़ा जाए और सफाई में कहे कि मैंने उसे कभी छुआ ही नहीं, तो यह कथन वनानिक दृष्टि से सही होगा। वास्तव में यह हुआ कि दूसरे व्यक्ति की नाक के पास वाले दिक काल क्षेत्र में एक पहाड़ी थी और वह उस पहाड़ी से नीचे गिर पड़ा था।

ऐसा मालूम पड़ता है कि बल के बहिष्कार का सम्बन्ध भौतिक सकल्पनाओं में स्पर्श के स्थान पर दृष्टि रखने से है जैसा कि पहले अध्याय में बताया गया था। जब किसी दपण में प्रतिबिम्ब गति करता है तो हम जानते हैं कि किसी ने उसे धकेला नहीं है। यदि किसी स्थान में दो बड़े दपण एक-दूसरे के सामने हों तो आपको एक ही वस्तु के असंख्य प्रतिबिम्ब दिखाई देंगे। मान लो कि ऊंचा टोप पहने एक व्यक्ति उन दपणों के बीच में खड़ा है प्रतिबिम्बों में बीस या तीस ऊँचे टोप दिखाई देंगे। यदि अब कोई दूसरा आदमी आये और छड़ी से उस व्यक्ति का ऊंचा टोप गिरा देता है तो उसी समय वे बीसों या तीसों टोप भी नीचे गिर जाएँगे। हम जानते हैं कि असली ऊंचे टोप को गिराने के लिए किसी बल की आवश्यकता होती है परन्तु हम समझते हैं कि बाकी बीसों या तीसों टोप अपने आप ही गिर पड़ते हैं अथवा नकल की लालसा से गिर पड़ते हैं। *अब हम इस पर कुछ गभीरतापूर्वक विचार करेंगे।*

प्रत्यक्ष है कि जब दपण में प्रतिबिम्ब गति करता है तो कुछ-न-कुछ घटना होती है। जहाँ तक दृष्टि का सम्बन्ध है घटना उसी तरह वास्तविक मालूम पड़ती है जैसे दपण के न होने पर मालूम पड़ती। परन्तु स्पर्श या ध्वनि की दृष्टि में कुछ भी नहीं हुआ है। जब असली ऊँचा टोप गिरता है तो कुछ शोर होता है परन्तु बाकी बीस या तीस प्रतिबिम्ब बिना किसी शोर के गिर जाते हैं। यदि वह आपके पैर के अंगूठे पर गिरता है तो आप उसका अनुभव करते हैं, पर आप जानते हैं कि दपण में बीस या तीस व्यक्ति कुछ भी अनुभव नहीं करते हालांकि टोप उनके अंगूठों पर भी गिरते हैं। परन्तु यह सब ज्योतिष-ससार में भी इतना ही सत्य है। इसमें कोई शोर उत्पन्न नहीं होता क्योंकि ध्वनि निर्वात में नहीं चल सकती। जहाँ तक हम जानते हैं उससे कोई अनुभूति नहीं होती क्योंकि उस स्थान पर उसे अनुभव करने वाला कोई नहीं है। इस प्रकार ज्योतिष ससार दपण के ससार से अधिक वास्तविक या ठोस मालूम नहीं पड़ता और उसकी गति के लिए भी उसी तरह किसी बल की आवश्यकता नहीं पड़ती।

पाठक सोचेंगे कि मैं निरर्थक कुतर्क में पड़ गया हूँ। वह सोचेगा कि आखिरकार दपण का प्रतिबिम्ब किसी ठोस वस्तु की ही छाया है और दपण में ऊंचा टोप इसलिए गिरता है कि असली टोप पर बल का प्रयोग किया गया है। दपण के टोप का अपना कोई अलग आचरण नहीं है वह तो केवल

असली टोप की नकल ही कर सकता है। इससे स्पष्ट होता है कि एक प्रतिबिम्ब सूर्य और ग्रहों से कितना भिन्न होता है, क्योंकि उन्हें शाश्वत रूप में किसी मूल वस्तु की नकल नहीं करनी पड़ती है। इसलिए अब अच्छा होगा, यदि आप यह कहना छोड़ दें कि एक प्रतिबिम्ब उतना ही वास्तविक है जितना कि कोई आकाशीय पिण्ड।

फिर भी इसमें कुछ तथ्य अवश्य है। देखने की बात यह है कि वास्तव में सत्य क्या है। सबसे पहली बात यह है कि प्रतिबिम्ब 'काल्पनिक' नहीं होते। जब आप किसी प्रतिबिम्ब को देखते हैं तो पूर्णतः वास्तविक प्रकाश-तरंगें आपकी आँखों तक पहुँचती हैं और यदि आप दर्पण के ऊपर एक कपड़ा डाल दें तो ये प्रकाश-तरंगें भी बन्द हो जाती हैं। एक प्रतिबिम्ब और एक 'वास्तविक' चीज में शुद्ध प्रकाशीय भेद होता है। प्रकाशीय भेद नकल की समस्या के साथ सम्बद्ध है। जब आप दर्पण पर एक कपड़ा डाल देते हैं तो उससे 'वास्तविक' वस्तु पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता परन्तु यदि आप वास्तविक वस्तु को दूर हटा दें तो प्रतिबिम्ब भी लुप्त हो जाता है। इसलिए हम कहते हैं कि जिन प्रकाश किरणों से प्रतिबिम्ब बनता है वे केवल दर्पण की सतह से ही परावर्तित होती हैं वास्तव में दर्पण के पीछे के किसी स्थान से नहीं आतीं बल्कि 'वास्तविक' वस्तु से आती हैं। यह एक महत्त्वपूर्ण सामान्य सिद्धान्त का उदाहरण है। संसार की अधिकांश घटनाएँ एकाकी घटनाएं नहीं हैं बल्कि लगभग एक जैसी घटनाओं के समूहों में से हैं। ये समूह ऐसे हैं कि उनमें से प्रत्येक का सम्बन्ध किसी निर्धारित ढंग से दिक्-काल के एक छोटे भाग से है। यह बात प्रकाश किरणों के साथ में है जिससे हम वस्तु और दर्पण में उसका प्रतिबिम्ब दोनों को ही देख सकते हैं। वे सभी किरणें वस्तु से ही निकलकर आती हैं। यदि आप वस्तु को घेरता हुआ एक अपारदर्शी ग्लोब रखें तो वस्तु से एक निश्चित दूरी पर हो, तो ग्लोब के बाहर के किसी भी स्थान से वस्तु और उसका प्रतिबिम्ब दोनों अदृश्य होंगे। हम देख चुके हैं कि हालांकि गुरुत्वाकर्षण को अब दूर से क्रिया नहीं माना जाता, पर अब भी वह एक केन्द्र से सम्बन्धित है। इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि उसके शिखर के चारों ओर सममित रूप में व्यवस्थित एक पहाड़ी है और शिखर वह स्थान है जहाँ हम उस पिण्ड को स्थित मानते हैं जो विचाराधीन गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र से सम्बद्ध है। सरलता के लिए उन सब घटनाओं को एकत्रित कर देते हैं जो उपरोक्त अर्थ में एक ही समूह की हैं। जब दो व्यक्ति एक ही वस्तु को देखते हैं तो दो भिन्न घटनाएं होती हैं परन्तु वे एक समूह की घटनाएँ हैं और एक ही केन्द्र से सम्बन्धित हैं। जब दो व्यक्ति एक ही शोर को (हमारे अनुसार) सुनते हैं तब भी ऐसा ही होता है। इस प्रकार एक दर्पण में बना प्रतिबिम्ब प्रकाशीय दृष्टिकोण से प्रतिबिम्बित वस्तु से कम वास्तविक है क्योंकि प्रतिबिम्ब

जहाँ स्थित मालूम पडता है वहाँ से प्रकाश किरणें सब दिशाओं म नहा फलती बल्कि केवल दपण क सामने वाली दिशा म ही जाती हैं और केवल उसी समय तक जब तक कि प्रतिबिम्बित वस्तु अपनी स्थिति पर बना रहती है। यह एक ही केन्द्र से सम्बन्धित घटनाओं के समूह का लाभ दर्शाता है जिस पर हम विचार कर रहे थे।

जब हम वस्तुओं के एसे समूह म होने वाले परिवतनो की जाँच करते हैं तो हम देखते हैं कि व दो प्रकार के हैं एक वे परिवतन हैं जो समूह के कुछ सदस्यो पर ही प्रभाव डालते हैं और कुछ एसे हैं जो समूह क सभी सदस्यो मे उपयुक्त प्रभाव उत्पन्न करते है। यदि आप दपण क सामन एक मोमबत्ती रखें और फिर दपण पर एक कपडा लटका दें तो उससे आप केवल विभिन्न स्थानो स दिखाई देने वाले प्रतिबिम्बो पर ही प्रभाव डालेंगे। यदि आप अपनी आँखें बन्द कर लें तो जसा आपको दिखाई देता था उसम परिवतन कर सकते हैं परन्तु अन्यत्र वह ज्यो-का-त्यो दिखाई देगा। परन्तु यदि आप मोमबत्ती के चारो ओर एक फुट की दूरी पर घेरने वाला एक गोला रख दें तो आप एक फुट से आग सभी स्थानो पर दिखाई देने वाले उसके रूप मे परिवतन कर देंगे, परन्तु एक फुट से कम दूरी वाले स्थानो पर नहीं। इन सभी परिस्थितियो म आप यह मानते हैं कि स्वय मोमबत्ती म कोई परिवतन नही आया है। इन सभी उदाहरणो मे आप देखते हैं कि परिवतनो के ऐसे समूह होते हैं जो एक भिन्न केन्द्र से या कई भिन्न केन्द्रो से सम्बद्ध हैं। उदाहरण के लिए, जब आप अपनी आँखें बन्द कर लेते हैं तब मोमबत्ती तो नही परन्तु आपकी आँखें ही अन्य प्रेक्षको को बदली हुई लगती है जो परिवतन होते हैं उनका केन्द्र आपकी आँखो म ही है। परन्तु यदि आप फूक मारकर मोमबत्ती को ही बुझा दें तो वह सभी जगह बदली हुई दिखाई देगी। तब आप कहेंगे कि मोमबत्ती म परिवतन हुआ है। जो परिवतन स्वय वस्तु मे होते हैं वे उन सभी घटनाओं के समूहो पर प्रभाव डालते हैं जिनका केन्द्र वस्तु म ही है। यह उसकी सामान्य व्याख्या है और यह समझाने का प्रयत्न है कि जब किसी मोमबत्ती के दपण म बने प्रतिबिम्ब को मोमबत्ती से कम वास्तविक कहा जाता है तो इसका क्या अभिप्राय है। जहा प्रतिबिम्ब स्थित मालूम पडता है उस स्थान के आस पास उससे सम्बन्धित घटनाओं का कोई समूह नहीं है और प्रतिबिम्ब मे होने वाल परिवतनो का केन्द्र मोमबत्ती म है, न कि दपण क अन्दर किसी बिन्दु म। इससे इस कथन का पूणतया सत्यापनीय अथ मिलता है कि प्रतिबिम्ब एक छाया मात्र है। इसके साथ-साथ इससे हम आकाशीय पिण्डो को दपण के प्रतिबिम्ब से अधिक वास्तविक मानने मे सहायता मिलती है हालाँकि हम उन्हे केवल देख ही सकते हैं छू नही सकते।

अब हम एक पिण्ड के दूसरे पिण्ड के ऊपर प्रभाव की धारणा का

सामान्य अथ मे अर्थापन्न करना आरम्भ कर सकते हैं। यदि हम बल के बहिष्कार के अथ को वास्तव मे समझना चाहे तो यह आवश्यक है। माना कि आप एक अधेरे कमरे मे जाते हैं और बत्ती जला देते हैं कमरे मे प्रत्येक वस्तु का रूप बदल जाता है। चूंकि कमर की हर वस्तु केवल इसीलिए दिखाई पडता ह कि वह विद्युत प्रकाश को परावर्तित करती है इसलिए यह दपण के प्रतिबिम्ब के सदृश है। विद्युत् प्रकाश वह केंद्र है जिसमे सारे परिवतन आरम्भ होते हैं। इस स्थिति म 'प्रभाव' को उसी प्रकार समझा सकते हैं जैसा कि हम पहले ही बता चुके हैं। यदि प्रभाव गतिमय हो तो वह स्थिति अधिक महत्त्वपूण होगी। माना कि किसी भीड म आप एक चीते का खुला छोड देते हैं। सब लोग भागने लगेंगे और चीता उन सबकी गतियों का केन्द्र होगा। एक व्यक्ति जो चीते को तो नही देख सकता परन्तु लोगों को देख रहा है, यह अनुमान लगाएगा कि उस स्थान पर कोई प्रतिकपक वस्तु है। यहा हम कहते हैं कि चीते के कारण लोगो पर प्रभाव पड रहा है और उन पर चीते की क्रिया प्रतिकषक बल क किस्म की है। परन्तु हम जानते हैं कि वे इसलिए भाग रहे हैं कि उनके साथ कुछ घटना घटी है केवल इसलिए नही कि चीता उस स्थान पर उपस्थित है। भागने का कारण यह है कि व उसे देख सकते हैं सुन सकते हैं और किसी प्रकार ता तरगें उनकी आंखो और कानो तक पहुँच रही हैं। यदि चीते की अनुपस्थिति म भी य तरगें उन तक पहुँचती रह तो भी व उतनी ही तेजी म भागेंगे क्योकि उनके आस पास का वातावरण तो उतना ही भयावना होगा।

अब हम सूय के गुरुत्वाकषण पर भी समान तक लागू करेंगे। सूय द्वारा पडने वाला प्रभाव चीते के प्रभाव से केवल इतना ही भिन्न है कि वह प्रतिकषण क बजाय आकषण प्रभाव है। ध्वनि और प्रकाश-तरगों की मदद से काय करने क बजाय सूय की शक्ति इस तथ्य स ह कि उसके चारो ओर दिक काल का रूपातरण भिन्न भिन्न ह। चीते के शोर की तरह वह स्रोत के समीप बहुत तीव्र है और जसे जस हम स्रोत से दूर होत जाते हैं उसकी तीव्रता घटती जाती है। यदि हम कहें कि सूय के कारण ही दिक्-काल म रूपान्तरण (modification) होता है ता इसस हमार ज्ञान म कोई वृद्धि नही होगी। जो हम जानते हैं वह यह है कि रूपान्तरण किसी निश्चित नियम क अनुसार आगे बढते जाते है और यह कि वे सूय को केन्द्र मानकर उसके चारो ओर सम्मिलित समूह बनाये हुए है। कारण काय की भाषा से वह बिलकुल अप्रासंगिक कल्पनाएँ आ जाती है जिनका सम्बन्ध इच्छा, मासपेशीय तनाव तथा ऐसी अन्य बातो स है। हम लगभग जो कुछ भी निश्चित करते हैं वह केवल एक सूत्र होगा, जिसके अनुसार गुरुत्वाकर्षीय पदाथ की उपस्थिति म दिक काल म रूपान्तरण होते हैं। और भी शुद्ध रूप स कहे तो हम यह निश्चित कर

सकते हैं कि गुरुत्वाकर्षीय पदार्थ की उपस्थिति किस प्रकार का दिक्काल है। यदि किसी भाग में दिक्काल शुद्ध रूप से यूक्लिडीय न हो बल्कि अ-यूक्लिडीय लक्षण वाला हो जो किसी केन्द्र की ओर बढ़ने पर अधिकाधिक स्पष्ट होता जाता हो और जब इसके अतिरिक्त दिक्-काल का यूक्लिडीयता से विपथन किसी विशिष्ट नियम के अनुसार हो रहा हो तो ऐसी परिस्थिति की संक्षिप्त व्याख्या करने के लिए हम कहते हैं कि केन्द्र पर कोई गुरुत्वाकर्षीय पदार्थ विद्यमान है। परन्तु जो कुछ हम जानते हैं वह उसका सारभूत विवरण है। हम तो केवल उन स्थानों के बारे में जानते हैं जहाँ गुरुत्वाकर्षीय पदार्थ विद्यमान न हो, उन स्थानों के बारे में नहीं जानते जहाँ वह हो। इस प्रकार कारण-कार्य की भाषा (जिसका एक विशिष्ट उदाहरण बल है) किसी विशेष उद्देश्य के लिए केवल एक आशुलिपि (short hand) की भाँति है यह किसी ऐसी चीज़ को व्यक्त नहीं करती जो वास्तव में भौतिक संसार का लक्षण हो।

अब द्रव्य के सम्बन्ध में क्या विचार है? क्या द्रव्य भी एक सुविधाजनक साधन ही तो नहीं है? चूंकि यह प्रश्न कुछ लम्बा है इसलिए इस पर अलग अध्याय में चर्चा करनी होगी।

अध्याय 14

द्रव्य क्या है

द्रव्य क्या है ? यह प्रश्न उस प्रकार का है जैसे तत्त्वमीमांसाशास्त्री (Metaphysicians) पूछा करते हैं और उसका उत्तर आश्चर्यजनक गूढ़ता वाली बडी बडी पुस्तकों में मिलता है। परन्तु मैं यह प्रश्न तत्त्वमीमांसाशास्त्री की भांति नहीं पूछ रहा हूं। मैं तो इस प्रश्न को यह जानने के लिए पूछ रहा हूं कि आधुनिक भौतिकी का और विशेष रूप से आपेक्षिकता सिद्धान्त का मूल तत्व क्या है। द्रव्य के सिद्धान्त के बारे में हमने जो भी सीखा है उससे यह तो स्पष्ट है कि द्रव्य की संकल्पना ठीक वैसी नहीं हो सकती जैसा कि इसे माना जाता रहा है। मैं समझता हूँ कि अब लगभग हम बता सकते हैं कि नई संकल्पना क्या होनी चाहिए।

द्रव्य के सम्बन्ध में दो प्रचलित संकल्पनाएँ हैं। जब से वैज्ञानिक चिंतन शुरू हुआ है तभी से दोनों ही संकल्पनाओं के समर्थक रहे हैं। कुछ परमाणुवादी थे उनका विचार था कि द्रव्य एक छोटे छोटे कणों का बना होता है जिनका और आगे विभाजन नहीं हो सकता और यह माना जाता था कि वे एक दूसरे से टकराकर कई तरह से हटकर दूर भागते हैं। न्यूटन के बाद से यह माना जाने लगा कि वास्तव में वे एक दूसरे के सम्पर्क में नहीं आते बल्कि एक दूसरे को आकर्षित या प्रतिकर्षित करते हैं और एक दूसरे के गिर्द कक्षाओं में घूमते हैं। कुछ दूसरे ऐसे लोग थे जिनका मत था कि किसी न किसी प्रकार का द्रव्य हर जगह विद्यमान है और पूर्ण निर्वात असम्भव है। डेकार्ट का यही मत था वह ग्रहों की गति को ईथर में भ्रमिल (voritices) के होने के कारण मानता था। न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त से यह मत गलत हो गया कि हर जगह द्रव्य होना आवश्यक है और विशेष रूप से इसका यह भी कारण था कि न्यूटन और उनके शिष्य प्रकाश को ऐसे कणों के रूप में मानते थे जो प्रकाश स्रोत से निकलते हैं। परन्तु जब प्रकाश के बारे में यह मत गलत निकला और यह सिद्ध किया गया कि प्रकाश तरंगों का ही बना होता है तब ईथर की पुनः स्थापना हुई ताकि कोई ऐसी चीज हो जिसमें लहरें उत्पन्न हो सकें। ईथर का महत्त्व तब और भी बढ़ा जब यह मालूम हुआ कि वह विद्युत चुम्बकीय घटना

में भी उसी तरह उपयोगी है जिस प्रकार-साधारण में। उस समय तो यहाँ तक आशा की गई थी कि शायद परमाणु भी केवल ईथर की गति के रूपमात्र ही हों। इस स्थिति में आकर द्रव्य का परमाणुवादी मत कुल मिलाकर नष्ट होता चला गया।

यदि अभी आपेक्षिकता को छोड़ दें तो सामान्य द्रव्य की परमाणु-संरचना के सम्बन्ध में आधुनिक भौतिकी में काफी प्रमाण हैं और उसमें ईथर के पक्ष में जा तर्क हैं वे भी असत्य सिद्ध नहीं हुए हैं जबकि ईथर की संरचना कभी नहीं मानी गई है। इसका परिणाम दो मतों का समजन-सा था—एक वह जो वृहद (gross) द्रव्य पर लागू होता था और दूसरा ईथर पर। इलेक्ट्रान और प्रोटॉनों के बारे में कोई सन्देह नहीं था यद्यपि जैसा कि हम अभी देखेंगे उन्हें उस प्रकार का मानने की कोई आवश्यकता नहीं थी जैसा कि परमाणुओं का आम तौर से माना जाता था। मेरे विचार में सत्य तो यह है कि आपेक्षिकता में द्रव्य की पुरानी संकल्पना का बहिष्कार करना होगा जो पदार्थ (substance) से सम्बद्ध तत्त्वमीमांसा से ग्रस्त है और एक ऐसे मत का व्यक्त करता है जिसकी इस घटना पर विचार करने के लिए कोई आवश्यकता ही नहीं है। हम अब इसी के बारे में जाँच पड़ताल करनी है।

पुराने मत के अनुसार द्रव्य का टुकड़ा एक ऐसी चीज थी जो हमेशा बनी रहती है और किसी एक समय पर वह एक से अधिक स्थानों पर नहीं होगा। चीजों का इस दृष्टिकोण से देखना आकाश और काल के पूर्ण पृथक्करण से सम्बन्धित है जैसा कि लोग पहले विश्वास करते थे। जब हम आकाश और काल के बजाय दिक् काल रखते हैं तो स्वाभाविक है कि हम भौतिक संसार की व्युत्पत्ति ऐसे घटकों से होने की आशा करेंगे जो काल में भी उतने ही सीमित हैं जितने आकाश में। ऐसे घटकों को ही घटनाएँ कहते हैं। कोई घटना प्रचलित दृष्टि से द्रव्य के टुकड़े की भाँति न अटल होती है और न ही गति करती है वह केवल अल्प क्षण तक रहती है और समाप्त हो जाती है। जैसे पुराने मत के अनुसार एक विस्तृत पिण्ड कई कणों का बना होता था ठीक उसी प्रकार काल में विस्तृत कण को ऐसे अंशों से बना माना जा सकता है जिन्हें घटना कण कह सकते हैं। ऐसी घटनाओं की समस्त श्रेणी से ही कण का इतिहास बना होता है और स्वयं कण को ही वह सत्ता मानी जा सकती है जो उसका इतिहास है, वह कोई तत्त्वमीमांसीय सत्ता नहीं है जिस पर घटनाएँ होती हैं। यह मत इसलिए आवश्यक हो गया है कि आपेक्षिकता हम आकाश और काल को पुरानी भौतिकी की तुलना में एक ही स्तर पर रखने के लिए बाध्य करती है।

इस अभौतिक तथ्य का सामंजस्य भौतिक संसार के ज्ञात तथ्यों से करना होगा। पर ज्ञात तथ्य क्या है? एक तो हम यह निश्चित मान लें कि प्रकाश

तरंगों का बना होता है जो प्राप्त वेग से चलती हैं। इसके अलावा दिक्-काल के जो भाग पदार्थरहित हैं उनमें जो रहा है उसके बारे में हमें काफी जानकारी है। इसका अर्थ यह है कि हम यह जानते हैं कि कुछ आवर्ती घटनाएँ (प्रकाश तरंगें) होती हैं जो निश्चित नियमों का पालन करती हैं। ये प्रकाश किरणें परमाणु से उत्पन्न होती हैं और परमाणु-संरचना के आधुनिक सिद्धांत से हम उन परिस्थितियों के बारे में भी काफी कुछ जानते हैं जहां से वे निकलती हैं और यह भी जानते हैं कि किन बातों पर उनका तरंग दैर्घ्य निर्भर करता है। हम न केवल यही जान सकते हैं कि प्रकाश तरंग कैसे चलती है बल्कि उसके स्रोत की हमारे सापेक्ष गति क्या है। जब मैं यह कहता हूँ तो इसका अभिप्राय है कि हम दो थोड़े भिन्न समयों पर स्रोत का एक ही मान रहे हैं। परंतु यह तो वह बात है जिसकी जाँच हम करना चाहते हैं।

पिछले अध्याय में हमने देखा कि परस्पर सम्बन्धित उन घटनाओं का एक समूह कैसे बन सकता है जो एक-दूसरे से किसी नियम के अनुसार सम्बन्धित रहती हैं और दिक्-काल में किसी केंद्र के चारों ओर विन्यस्त रहता है। एक अल्पकालिक प्रकाश दमक जब कई भिन्न स्थानों पर पहुँचती है तो घटनाओं का ऐसा ही समूह बनता है। हम यह मानने की आवश्यकता नहीं है कि केंद्र पर कोई विशेष घटना हो रही है कम-से-कम हमें यह मानने की जरूरत नहीं है कि हम केंद्र पर होने वाली घटना को जानते हैं। हम तो यह जानते हैं कि ज्यामिती के अनुसार विचाराधीन घटनाओं का समूह एक केंद्र के चारों ओर व्यवस्थित है जैसे किसी तालाब पर मक्खी बैठ जाने से उसके तल पर विस्तारशील वीचि बन जाती है। हम किसी ऐसी परिकल्पित घटना को मान सकते हैं जो केंद्र पर हुई है और ऐसे नियमों की स्थापना कर सकते हैं जिनके अनुसार विक्षोभ आगे बढ़ता है। तब परिकल्पित घटना व्यावहारिक रूप से विक्षोभ का कारण प्रतीत होगी। यह उस कण की जीवनी में भी एक घटना मानी जाएगी जो विक्षोभ के केंद्र पर माना गया है।

हम देखते हैं कि न केवल एक प्रकाश-तरंग ही केंद्र से बाहर की ओर एक निश्चित नियम के अनुसार फैलती है बल्कि सामान्यतः इसके पीछे-पीछे उसी प्रकार की अन्य तरंगें भी आती हैं। उदाहरण के लिए सूर्य का रूप एकाएक नहीं बदल जाता, यहाँ तक कि अगर तेज हवा के समय उसके सामने से एक बादल का टुकड़ा गुजर जाए तो भी रूपांतरण यथाक्रम होगा हालांकि तेजी से होगा। इस प्रकार दिक्-काल में एक केंद्र से सम्बन्धित घटनाओं के समूह का उससे मिलते-जुलते अन्य समूहों से सम्बन्ध स्थापित किया जाता है जिनके केंद्र दिक्-काल में पहले केंद्र के आस-पास ही हों। इन दूसरे समूहों के लिए भी सामान्य बोध उनके केंद्रों पर समान परिकल्पित घटनाओं का होना मानता है और फिर यह मानता है कि ये सभी परिकल्पित घटनाएँ एक ही

इतिनाम के विभिन्न भाग हैं, अर्थात् वह एक परिकल्पित कण की उपस्थिति की कल्पना करता है जिस पर ये सभी घटनाएँ हुई हैं। केवल परिकल्पनाओं के इस प्रकार दूसरे प्रयोग की मदद से ही जो प्रत्येक अवस्था में पूर्णत: अनावश्यक है हम पुराने अर्थ में पदार्थ तक पहुँच सकते हैं।

यदि हम अनावश्यक परिकल्पनाओं को न लाना चाहें तो हम कहेंगे कि आस पास के माध्यम में विभिन्न प्रकार के विक्षोभों से मिलकर जो कुछ भी है वही परमाणु है, साधारण भाषा में हम इन विक्षोभों को परमाणु के कारण हुआ मानते हैं। पर हम इन विक्षोभों का अर्थ इस दृष्टि से नहीं लेंगे कि हमारे सामने इस समय क्या समस्या है क्योंकि तब वे प्रश्न पर निर्भर रहेंगे। उसके बजाय हम परमाणु से बाहर प्रकाश वेग से यात्रा करेंगे और जैसे जैसे हम किसी स्थान पर पहुँचते जाएँगे उस स्थान के विक्षोभ पर विचार करेंगे। विक्षोभों के लगभग एक जैसे निकायों को—जिनका केन्द्र लगभग एक ही हो, जिसकी उपस्थिति का ज्ञान कुछ पहले या कुछ बाद में हुआ हो—या तो थोड़ा समय पहले या थोड़ा समय बाद के क्षण परमाणु माना जाएगा। इस प्रकार हम भौतिकी के सभी नियमों को बनाए रखते हैं और उसके लिए अनावश्यक परिकल्पनाओं का सहारा भी नहीं लेना पड़ता और न ही किसी सत्त के होने की कल्पना करनी पड़ती है। इसमें हम मितव्ययिता के सामान्य सिद्धान्त से सगत होते हैं जिसकी मदद से आपेक्षिकता सिद्धान्त से बहुत-सी बेकार की बातें हटाई जा सकी हैं।

सामान्य बोध से यह अनुमान होता है कि हम जब एक मेज देखते हैं तो एक मेज ही देखते हैं। यह एक महान् भ्रम है। जब सामान्य बोध से एक मेज देखी जाती है तो कुछ प्रकाश-तरंगें उसकी आँखों तक पहुँचती हैं और वे तरंगें ऐसी हैं जो उसके पुराने अनुभवों में स्पर्श इन्द्रिय के साथ सम्बद्ध रही हैं। उसके साथ साथ अन्य लोगों का यह साक्ष्य भी है कि उन्होंने भी मेज देखी है। परन्तु इनमें से किसी में भी हम कभी मेज तक नहीं पहुँचे। प्रकाश तरंगों से हमारी आँखों में कुछ अनुभूति हुई और उनसे हमारी दृक् तन्त्रिका (optic nerve) में अनुभूति उत्पन्न हुई और इनसे मस्तिष्क में अनुभूति उत्पन्न हुई। इनमें से किसी भी अनुभूति से बिना किसी प्राथमिक घटना के भी वैसे ही संवेदन होने जिसे हम मेज देखना कहते हैं चाहे कोई मेज न भी हो। (यदि द्रव्य को सामान्यत: घटनाओं के समूह के रूप में माना जाए तो यह बात आँख दृक् तन्त्रिका और मस्तिष्क के लिए भी लागू होती है)। जहाँ तक स्पर्शेन्द्रिय का प्रश्न है जब हम मेज को अपनी अंगुलियों से दबाते हैं तो आधुनिक भौतिकी के अनुसार मेज के इलेक्ट्रानों और प्रोटानों की सन्निकटता से हमारी अंगुलियों के सिरों के इलेक्ट्रान और प्रोटानों में विद्युतीय विक्षोभ उत्पन्न हो जाता है। यदि हमारी अंगुलियों के सिरों में उसी प्रकार

के विश्राम किसी अन्य विधि से उत्पन्न हो तो हम वही अनुभूति होगी चाहे वहाँ मेज न भी हो। इस सम्बन्ध में दूसरे लोगों का साक्ष्य तो प्रत्यक्ष रूप से द्वितीय कोटि का है। यदि कचहरी में किसी गवाह से पूछा जाए कि उसने घटना को देखा है, या नहीं तो वह यह नहीं कह सकता कि उसका ऐसा विश्वास है क्योंकि दूसरे लोग इसके साक्षी हैं। जो भी हो साक्ष्य तो ध्वनि तरंगों पर आधारित है और उनके लिए मनोवैज्ञानिक तथा भौतिक व्याख्या की आवश्यकता होती है, इसलिए वस्तु से उसका सम्बन्ध बहुत परोक्ष है। इन सब बातों की वजह से, जब हम कहते हैं कि कोई व्यक्ति मेज को देख रहा है तो हम एक अत्यधिक संक्षिप्त भाषा का प्रयोग करते हैं जिसमें जटिल तथा दुरूह व्याख्याएँ अव्यक्त रहती हैं जिनकी प्रामाणिकता संदेह जनक है।

परन्तु हम यह भय है कि हम वहीं मनोवैज्ञानिक प्रश्नों में न उलझ जाएँ जिन्हें यदि सम्भव हो तो दूर ही रखना है। इसलिए हम फिर से पूर्णतः भौतिक दृष्टिकोण की ओर लौटते हैं।

मैं जो बात सामने रखना चाहता हूँ उसे इस प्रकार कहा जा सकता है। हर घटना के बारे में जो अन्यत्र कहीं भी होती है, परमाणु की उपस्थिति के कारण, कम से कम सिद्धांत रूप में प्रयोग द्वारा गवेषणा की जा सकती है बशर्ते कि वह किसी विशेष रूप से छिपे ढंग से न हो रही हो। परन्तु परमाणु के अन्दर क्या होता है (यदि कुछ होता हो तो), यह जानना असम्भव है कोई ऐसा ज्ञात उपकरण नहीं है जिससे उसकी एक झलक भी प्राप्त हो सके। कोई परमाणु अपने 'प्रभावों' द्वारा ही जाना जाता है। परन्तु 'प्रभाव' शब्द कारणतावाद का है जो आधुनिक भौतिकी में ठीक नहीं बैठता और विशेष रूप से आपेक्षिकता में तो ठीक नहीं बैठेगा। हम तो केवल इतना ही कहने का अधिकार है कि घटनाओं के कुछ समूह एक साथ घटित होते हैं, अर्थात् दिक्-काल में पास पास होते हैं। कोई एक प्रेक्षक किसी समूह की एक घटना को दूसरी घटना से पहले घटित मानेगा, परन्तु हो सकता है कि दूसरे प्रेक्षक इन घटनाओं को भिन्न समय क्रम से देखें। और यदि सभी प्रेक्षकों के लिए समय क्रम एक-सा ही हो तो दो घटनाओं में हम केवल एक सम्बन्ध ही मालूम होगा जो अग्र और पश्च दिशा में समान रूप से लागू होगा। यह सच नहीं है भविष्य भूत को जिस ढंग से निर्धारित करता है, भूत भविष्य को उससे किसी भिन्न ढंग से निर्धारित करता है। इतना आभासी अन्तर है जो हमारी अज्ञानता के कारण है क्योंकि हम भूत के मुकाबले भविष्य के बारे में कम जानते हैं। यह तो केवल एक संयोग की बात है हो सकता है कि ऐसे लोग भी हों जो भविष्य के बारे में अधिक जानते हों और भूत के बारे में उन्हें अनुमान लगाना पड़ता हो। ऐसे मामलों में इन लोगों की अनुभूति हमारी अनुभूति से बिलकुल विपरीत होगी परन्तु उससे अधिक भ्रान्तिजनक नहीं होगी।

यह काफी स्पष्ट मालूम पडता है कि भौतिकी के सभी नियम और तथ्य बिना यह मानते हुए भी समझे जा सकते हैं कि 'द्रव्य घटनाओं के समूह के अतिरिक्त और कुछ नहीं है जिनमें से प्रत्येक घटना ऐसी होगी जिसे हम स्वाभाविक रूप से पदार्थ के कारण' ही घटित मानेंगे। इसके लिए भौतिकी के सूत्रों और सकेतों में किसी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं होगी यह तो एकमात्र सकेता को समझने का प्रश्न है।

अर्थापन (interpretation) में ऐसी स्वाधीनता गणितीय भौतिकी का एक लक्षण है। हम जो कुछ जानते हैं वह एक वस्तुतः अमूर्त तार्किक सम्बन्ध है जिसे हम गणितीय सूत्र के रूप में व्यक्त करते हैं। हम जानते हैं कि कुछ स्थितियों में हम ऐसे परिणामों पर पहुँचते हैं जिनका प्रायोगिक सत्यापन सम्भव होता है। उदाहरण के लिए ग्रहण का प्रेक्षण है जिससे आइस्टाइन का प्रकाश वक्रन (मुडना) का सिद्धान्त स्थापित हुआ था। उसके वास्तविक प्रेक्षण थे फोटो-प्लेटो पर कुछ विशेष दूरियों की सावधानीपूर्वक माप। कुछ ऐसे सूत्रों का सपादन करना था जो सूर्य के समीप से गुजरती हुई प्रकाश किरण के मार्ग से सम्बधित थे यद्यपि इन सूत्रों के उस भाग का अर्थापन सदैव एक-जैसा ही होना चाहिए जिससे प्रेक्षित परिणाम प्राप्त होता है परन्तु उनके दूसरे भाग का अर्थापन कई विभिन्न तरीकों से किया जा सकता है। ग्रहों की गति को व्यक्त करने वाले सूत्र आइन्स्टाइन सिद्धात में भी ठीक वे ही हैं जो न्यूटन के सिद्धात में हैं परन्तु उन सूत्रों के अर्थ सर्वथा भिन्न हैं। सामान्यतः यह कहा जा सकता है कि प्रकृति के विभिन्न अर्थों की तुलना में उसकी गणितीय व्याख्या में प्रयुक्त सूत्रों के परिशुद्ध होने के बारे में हम कहीं अधिक निश्चित होंगे। इसलिए जिस चीज से हमारा सम्बन्ध इस अध्याय में है यानी इलेक्ट्रान या प्रोटान के स्वरूप के प्रश्न का उत्तर केवल जानकारी के आधार पर नहीं दिया जा सकता कि उसके गति नियमों के बारे में गणितीय भौतिकी क्या कहती है और वातावरण से उसकी अतर्क्रिया (interaction) किस नियम के अनुसार होती है। हमारे प्रश्न का निश्चित और निर्णयात्मक उत्तर देना केवल इसलिए सम्भव नहीं हो सकता कि कई उत्तर ऐसे हैं जो गणितीय भौतिकी के सत्य के सगत हैं। फिर भी कई उत्तर दूसरों की तुलना में अधिक मान्य हैं क्योंकि उनके पक्ष में प्रायिकता अधिक है। इस अध्याय में हम द्रव्य की ऐसे ढग से व्याख्या करना चाह रहे थे कि उसके लिए भौतिकी के सूत्र सही रहें। यदि हमने अपनी व्याख्या ऐसी रखी होती कि उसमें कोई द्रव्य कण इस प्रकार का होता जिसे द्रव्यात्मक कठोर और निश्चित पिण्ड समझा जाता है तो हम ऐसी चीज के अस्तित्व के बारे में निश्चित नहीं हो सकते थे। यही कारण है कि हमारी परिभाषा हालाँकि जटिल मालूम होती है पर तर्क में बचत और वैज्ञानिक सचेतन की दृष्टि से अच्छी है।

अध्याय 15

दार्शनिक परिणाम

आपेक्षिकता के दार्शनिक परिणाम न इतने असाधारण ही हैं और न इतने विस्मयजनक ही हैं जितना कि कभी-कभी माना जाता है। इससे चिरप्रचलित विवादों जैसे यथार्थवाद और आदर्शवाद के प्रश्न पर कोई प्रकाश नहीं पड़ता। कुछ लोगों का विचार है कि यह काट के इस मत का समर्थन करता है कि आकाश और काल 'व्यक्तिनिष्ठ' हैं और 'अन्तर्ज्ञान' के ही रूप हैं। मेरा विचार है कि लेखकों ने प्रेक्षक का उल्लेख जिस ढंग से किया है उसी के कारण ये लोग ग़लतफ़हमी में पड़ जाते हैं। यह सोचना स्वाभाविक ही है कि प्रेक्षक कोई मनुष्य या कम-से-कम कोई मन होना चाहिए लेकिन हो सकता है कि वह केवल फोटोग्राफी का प्लेट या घड़ी ही हो। कहने का अभिप्राय यह है कि जब हम एक 'दृष्टिकोण' और दूसरे दृष्टिकोण के विस्मयजनक भेद का उल्लेख करते हैं तो 'दृष्टिकोण' शब्द का प्रयोग जिस प्रकार प्रत्यक्ष ज्ञान युक्त मनुष्य के लिए होता है उसी प्रकार भौतिक उपकरणों के लिए भी होता है। आपेक्षिकता में जिस 'व्यक्तिनिष्ठता' से सम्बन्ध होता है वह भौतिक व्यक्तिनिष्ठता है और यदि संसार में मन और इन्द्रियाँ न हों तो भी उसका अस्तित्व बना रहेगा।

इसके अतिरिक्त यह यथार्थतः सीमित व्यक्तिनिष्ठता है। सिद्धान्त यह नहीं कहता कि हर चीज़ आपेक्षिक है, बल्कि इसके विपरीत इससे हम उस विधि का पता चलता है जिससे हम यह भेद कर सकें कि क्या सापेक्ष है और क्या भौतिक घटना का अपना निजी लक्षण है। यदि हम कहें कि यह सिद्धान्त आकाश और काल के सम्बन्ध में काट का समर्थन करता है तो हम यह कहना होगा कि दिक्-काल के सम्बन्ध में यह काट का खण्डन करता है। मेरे विचार में इनमें से कोई भी कथन सत्य नहीं है। मैं नहीं समझता कि कोई वजह ऐसी भी हो सकती है कि दार्शनिक अपने उसी पुराने मत पर न डटे रहें। पहले भी किसी पक्ष में कोई निश्चायक दलीलें नहीं थीं और अब भी नहीं हैं और किसी एक मत को सही मानना रूढ़िबद्ध दृष्टिकोण होगा, वैज्ञानिक नहीं।

फिर ी जसे जस माइन्स्टान की सात म मान वाल विचार सुपरिचित हान जात है जमा कि स्कूल म पन्ाए जात व कारण स्वाभाविक हा है ता उमस हमार गोजन का प्रवृत्ति म कुछ परिवतन हाग मार मनन व बडे महत्त्व क हाग ।

इसस यह निष्कप निकलता है कि भौतिकी से भौतिक ससार क बारे म उतना ज्ञान प्राप्त नही होता जितना हम समझत माए हैं। पुरानी भौतिकी क *लगभग सभी बडे सिद्धात इस महान नियम की तरह के ही मालूम पडते हैं* कि एक गज म हमशा तीन फुट हाते हैं, बाकी सब सिद्धात एकदम गलत निकलते हैं। इन दोनो से किसी नियम की जो दुर्गति होती है वह द्रव्यमान सरक्षण को लेकर स्पष्ट की जा सकती है। द्रव्यमान की व्याख्या पदाथ की मात्रा' के रूप म की जाती रही है और प्रयोगा स यही सिद्ध होता है कि यह न कभी घटता है न बढता है। परन्तु अधिक यथायता वाली माधुनिक मापा स विलक्षण बातें सामने आइ। एक तो यह देखा गया कि द्रव्यमान वग बढन के साथ साथ बढता है। इस प्रकार का द्रव्यमान वास्तव म ऊजा की तरह का हा था। किसी वस्तु का यह द्रव्यमान स्थिर नही रहता। परन्तु इस नियम को भी उसी 'नियम की भाँति स्वयसिद्ध (Truism) माना जा सकता है जिसके अनुसार एक गज म तीन फुट होते हैं। यह हमारी मापविधि की देन है पदाथ का कोई यथाथ गुण नही है। दूसरे प्रकार का द्रव्यमान वह है जिसे निजी द्रव्यमान कहत हैं। यह वह द्रव्यमान है जो पिण्ड के साथ गति करते हुए *किसी प्रेक्षक के अनुमान स होगा। यह साधारण पार्थिव परिस्थिति* है। पथ्वी पर हम जिस पिण्ड का भार तोलते है वह हवा म गति नही कर रहा है। किसी पिण्ड का निजी द्रव्यमान लगभग स्थिर रहता है पूणत नही। यह माना जाएगा कि अगर आपके पास एक एक पौंड के चार बाट हैं और चारा का एक साथ तराजू के पलडे म रख दिया जाए तो उनका सयुक्त भार चार पौंड होगा। परतु यह भ्रम निकला उनका भार कम हाता है परन्तु यह कमी इतनी कम होती है कि अत्यन्त सावधानीपूवक मापने पर भो इसे मालूम नही किया जा सकता। हालांकि यदि चार हाइड्रोजन परमाणु हो और उन्ह एक साथ सयुक्त करके एक हीलियम परमाणु बनाया जाए तो *द्रव्यमान म न्यूनता दश्यमान होती है। हीलियम परमाणु का द्रव्यमान चार* अलग अलग हाइड्रोजन के परमाणुआ से इतना कम होता है कि उसे मापा जा सकता है।

माटे तौर से कह ता प्रचलित भौतिकी दो भागा मे बँट गई है स्वयसिद्ध (Truism) और भूगोल (Geography)।

आपेक्षिकता सिद्धान्त हमारी कल्पना के लिए जो ससार प्रस्तुत करता है वह गतिमय वस्तुआ का इतना नही है जितना कि घटनाओं का है। यह ता

सत्य है कि अब भी ऐसे कण हैं जो अटल (persist) मालूम पड़ते हैं परन्तु (जैसा कि हमने पिछले अध्याय में देखा था) उन्हें वास्तव में सम्बन्धित घटनाओं की एक लड़ी के रूप में माना जा सकता है जैसे किसी गाने के क्रमिक स्वर। घटनाएँ ही आपेक्षिकता भौतिकी की मूल वस्तु हैं। ऐसी दो घटनाओं के बीच जो एक दूसरे से बहुत दूरी पर नहीं हों, व्यापक सिद्धान्त तथा विशिष्ट सिद्धान्त दोनों के अनुसार एक निश्चित सम्बन्ध होता है जिसे 'अन्तराल' कहते हैं। यह एक भौतिक सत्य मालूम पड़ता है, तथा कालावधि और आकाश में दूरी उसकी दो लगभग अस्पष्ट अभिव्यक्तियाँ हैं। दो दूरस्थ घटनाओं के बीच कोई एक निश्चित अन्तराल नहीं है। परन्तु एक घटना से दूसरी तक जाने का एक पथ सबसे छोटा है अर्थात् उस पथ में पड़ने वाले अलग अलग छोटे-छोटे अन्तरालों का योग अन्य सभी पथों के अन्तरालों के योग से छोटा होगा। इस पथ को 'जिओडेसिक' कहते हैं और कोई भी पिण्ड यदि मुक्त रूप से गति करने के लिए छोड़ दिया जाए तो इसी पथ से जाएगा।

सम्पूर्ण आपेक्षिकता भौतिकी पुराने समय की भौतिकी और ज्यामिती से अधिक अमायल है। इसमें यूक्लिड की सीधी रेखाओं के स्थान पर प्रकाश किरणें रखना पड़ता है जो सूर्य या किसी अन्य भारी पिण्ड के समीप से गुजरते समय उस प्रकार सीधी नहीं होतीं जैसे यूक्लिड की कल्पना के अनुसार होनी चाहिए थीं। किन्तु आकाश के बहुत छोटे भाग में किसी त्रिभुज के तीनों कोणों का योग अब भी दो समकोण के बराबर माना जाता है, परन्तु विस्तृत क्षेत्र में ऐसा नहीं माना जाता। ऐसा स्थान कहीं भी नहीं मिलता जहाँ यूक्लिड पूर्णतः सही हो। पहले जो साध्य तर्क द्वारा सिद्ध किए जाते थे वे अब या तो केवल परम्परागत रह गए हैं या ऐसे सन्निकट सत्य रह गए हैं जो प्रेक्षणों द्वारा सिद्ध किए जाते हैं।

यह एक अजीब बात है—जिसका आपेक्षिकता ही एकमात्र उदाहरण नहीं है—कि जैसे जैसे तर्क शक्ति (reasoning) में विकास होता है उसमें तथ्यों को सिद्ध करने की शक्ति घटती जाती है। यह समझा जाता था कि तर्कशास्त्र हमें यह सिखाता है कि अनुमान कैसे लगाया जा सकता है अब वह हमें यह सिखाता है कि अनुमान कैसे-कैसे नहीं लगाया जाना चाहिए। पशुओं और बच्चों में अनुमान लगाने की प्रवृत्ति बहुत ही अधिक होती है यदि आप किसी असाधारण मोड़ से जाएँ तो घोड़ा अत्यधिक चकित होता है। जब मनुष्यों ने तर्क का प्रयोग शुरू किया तो उन्होंने मन में पहले उन परिणामों को सही सिद्ध करने का प्रयत्न किया जो उन्होंने बिना सोचे विचारे पहले निर्धारित किए थे। इस स्वाभाविक प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप बहुत-सा कुज्ञान और कुविज्ञान उत्पन्न हुआ। प्रकृति की एक समानता और 'सार्वत्रिक कारणता (universal causation)' का नियम जैसे महान सिद्धान्त हमारे इस विश्वास

का सहारा देते हैं कि जो पहले कई बार होता रहा है वह आगे भी होगा। यह एक घोड़े के इस विश्वास से अधिक सुस्थापित नहीं है कि आप उस मोड़ पर ही मुड़ेंगे जिस पर हमेशा मुड़ा करते हैं। यह जान लेना इतना आसान नहीं है कि व्यावहारिक विज्ञान में इन कल्पित सिद्धांतों का स्थानापन्न किस सिद्धांत से किया जाए परन्तु शायद आपेक्षिकता सिद्धान्त में हमें एक झलक-सी मिलती है कि ऐसे नये सिद्धांत किस प्रकार के होंगे। कारणता का पुराना अर्थ में अब सैद्धांतिक भौतिकी में कोई स्थान नहीं रह गया है। फिर भी इसका स्थानापन्न करने के लिए दूसरी चीज़ है परन्तु उसके स्थान पर दूसरा जो कुछ भी रखा जाता है उसका अपने पूर्वगामी सिद्धांत की तुलना में अधिक अच्छा आनुभविक आधार (empirical foundation) है।

विश्व की सभी घटनाओं का काल निर्धारण करने वाले एक सर्वनिष्ठ समय की धारणा के खंडन से आगे चलकर कारण और कार्य विकास (evolution) तथा अन्य कई विषयों के सम्बन्ध में हमारे विचारों पर प्रभाव पड़ेगा। उदाहरण के लिए विश्व में कुल मिलाकर कुछ प्रगति हुई है या नहीं यह प्रश्न हमारे समय मापन के चुनाव पर निर्भर करेगा। यदि हम कई समान रूप से अच्छी घड़ियों में से एक लेते हैं तो हो सकता है कि हम यह विश्व इतनी तीव्रता से गति करता हुआ मालूम पड़े जितना कि बड़े-से-बड़ा आशावादी अमरीकी उसकी प्रगति के बारे में सोचता है। पर यदि हम उतनी ही अच्छी कोई दूसरी घड़ी ले लें तो हो सकता है कि यह विश्व हमें बदतर होता हुआ दिखाई पड़े जितना कि बड़े-से-बड़ा निराश स्लाव सोच सकता है। इस प्रकार आशावाद या निराशावाद न तो सही है न गलत, बल्कि घड़ियों के चुनाव पर निर्भर करता है।

इसका प्रभाव किसी एक प्रकार के मनोभाव (emotion) पर विनाशकारी होता है।

कवि कहता है—

> एक बहुत दूर पर दैविक घटना
> जिसकी ओर समस्त सृष्टि जा रही है
> (One far off divine event
> To which the whole creation moves)

परन्तु यदि घटना काफी अधिक दूरी पर हो और सृष्टि काफी तेज़ी से गति कर रही हो तो उसके एक भाग का अनुमान होगा कि घटना हो चुकी है जबकि दूसरे भाग का अनुमान होगा कि घटना अभी भविष्य में होने वाली है। इससे कविता का आनन्द ही समाप्त हो जाता है। इसलिए दूसरी पंक्ति होनी चाहिए

> सृष्टि का कुछ भाग उसकी ओर जा रहा है और कुछ
> उससे दूर जा रहा है।

(To which some part of the creation move, while other move away from it

परन्तु इससे काम नहीं चलेगा। मेरा विचार है कि यदि किसी मनोभाव का थोडे-से गणित से नष्ट किया जा सके, वह न तो बहुत शुद्ध ही होगा और न बहुत लाभदायक ही। परन्तु इस प्रकार के तर्क से विक्टोरिया युग की आलोचना ही उठेगी जो इस प्रसंग से बाहर है।

मैं पुनः कहता हूँ कि भौतिक संसार के बारे में हम जो कुछ जानते हैं वह उससे कहीं अधिक अमूर्त है जितना कि पहले माना जाता था। पिण्डों के बीच में घटनाएँ होती हैं जैसे प्रकाश-तरंगें। उन घटनाओं के नियमों के बारे में हम कुछ अवश्य जानते हैं—ठीक इतना कि उसे गणितीय सूत्र के रूप में व्यक्त किया जा सके—परन्तु उनकी प्रकृति के बारे में हम कुछ भी नहीं जानते। जैसा कि हमने पिछले अध्याय में देखा था स्वयं इन पिण्डों के बारे में हम इतना कम जानते हैं कि हम निश्चित रूप से यह भी नहीं कह सकते कि वे वास्तव में कुछ हैं भी या नहीं। हो सकता है कि वे दूसरे स्थानों पर होने वाली घटनाओं के समूह मात्र ही हों और उन घटनाओं को हमें उनका प्रभाव ही मानना होगा। स्वाभाविक है कि संसार का हमारा अर्थ बिम्बात्मक है यानी हम यह कल्पना करते हैं कि जो भी हो रहा है वह लगभग वैसा ही है जैसा कि हम उसे देखते हैं। परन्तु वास्तव में यह साम्य केवल संरचना को व्यक्त करने वाले कुछ व्यावहारिक तार्किक गुण धर्मों तक ही सीमित है। इसलिए हम उसमें होने वाले परिवर्तनों के कुछ सामान्य लक्षणों को ही जान सकते हैं। शायद एक निदर्शन से यह बात अधिक स्पष्ट हो जाएगी। किसी संगीत की धुन को बजाने पर वह जैसा होता है तथा स्वर संकेत रूप में छपा होने पर, उनमें एक प्रकार की अनुरूपता होती है जिसे संरचना-सम्बन्धी अनुरूपता कहा जा सकता है। यह अनुरूपता इस प्रकार की है कि यदि आपको नियम मालूम हो तो आप स्वर संकेतों से संगीत मालूम कर सकते हैं या संगीत से स्वर संकेत मालूम कर सकते हैं। अब मान लो कि आप जन्म से ही एकदम बहरे हो परन्तु संगीतज्ञों के साथ रहते रहे हो। यदि आपने बोलना और होठों से पढ़ना सीखा हो तो आप यही समझेंगे कि ध्वनि के स्वर संकेत स्वयं ध्वनि के निजी गुणों से सर्वथा भिन्न हैं यद्यपि संरचना[1] में एक समान हैं। *संगीत का मूल्य आपके लिए* पूर्णतः अग्राह्य होगा परन्तु आप उसके सब गणितीय लक्षण पहचान सकेंगे चूंकि वे स्वर संकेत के लक्षण जैसे ही होंगे। प्रकृति के सम्बन्ध में हमारा ज्ञान कुछ इस प्रकार है कि हम स्वर-संकेत पढ़ सकते हैं और हम उससे उतना ही

---

1 'संरचना' की परिभाषा के लिए लेखक की पुस्तक Introduction to Mathematical Philosophy देखिए।

अनुमान लगा सकते हैं जितना हमारा जन्मजात बहरा व्यक्ति संगीत के बारे में अनुमान लगा सकता था। परन्तु हम उस ज्ञान से वंचित हैं जो उसने संगीतज्ञ के साथ रहने के कारण प्राप्त किया है। हम यह नहीं जान सकते कि स्वर-संकेत से व्यक्त संगीत अच्छा होगा कि नहीं। सम्भवतः हम इस बारे में भी निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कह सकते कि स्वर संकेत किसी चीज को व्यक्त भी करते हैं या नहीं। परन्तु यह एक ऐसा संदेह है जो किसी भौतिकविद् को भौतिकीविद् होने के नाते सताना भी नहीं चाहिए।

भौतिकी के बारे में अधिकतम सफलता मानते हुए भी वह यह नहीं बता सकती कि परिवर्तन किस चीज में होता है या उसकी विभिन्न अवस्थाएं कौन कौन सी हैं। इससे हम केवल उन चीजों का पता चलता है जो आवर्त परिवर्तन के फलस्वरूप एक के बाद बनती रहती हैं या किसी निश्चित दर से फैलती हैं। यहाँ तक कि अब भी सम्भवतः हम निरी कल्पना का उखाड़ डालने के प्रक्रम के अंतिम चरण पर नहीं हैं जिससे हम शुद्ध वैज्ञानिक ज्ञान तक पहुँच पाते। *आपेक्षिकता सिद्धान्त से इस दिशा में बहुत-कुछ समझ लिया गया है* और इसने करने में उसने हमें शुद्ध संरचना के समीपतम पहुँचा दिया है और यही तो गणितज्ञ का ध्येय भी है—यह ध्येय इसलिए नहीं है कि मानव होने के नाते वह केवल इसी में रुचि रखता है बल्कि इसलिए है कि केवल यही एक ऐसी चीज है जिसे वह गणितीय सूत्र के रूप में व्यक्त कर सकता है। परन्तु चूँकि अमूर्तीकरण की दिशा में हम बहुत आगे बढ़ चुके हैं इसलिए हो सकता है कि हमें और भी आगे जाना पड़े।

पिछले अध्याय में मैंने द्रव्य की एक अल्पतम परिभाषा का उल्लेख किया था अर्थात् ऐसी परिभाषा जिसमें पदार्थ का उतना कम-से-कम पर्याय रूप माना गया था जितना कि भौतिकी के तथ्यों के अनुरूप हो। इस प्रकार की व्याख्या लेने में हमने असंदिग्धता पर जोर दिया है। हमारा विरल पर्याय तो बना ही रहेगा चाहे इससे भी अधिक पुष्ट कोई चीज क्यों न हो। द्रव्य की अपनी व्याख्या को हमने जेन आस्टिन में इसाबेला की लपसी की भांति बनाने का प्रयत्न किया है 'पतला किन्तु बहुत पतला नहीं'। यदि हम दृढ़तापूर्वक दावा करने लग जाएँ कि द्रव्य इससे अधिक और कुछ नहीं है तो हम गलती करेंगे। लाइबनीटज का विचार था कि द्रव्य का एक टुकड़ा वास्तव में आत्माओं की बस्ती होता है। उसे गलत सिद्ध करने के लिए हमारे पास कोई प्रमाण नहीं है हालांकि उसे सही सिद्ध करने का भी हमारे पास कोई प्रमाण नहीं है। हम उसके सही या गलत होने के बारे में उससे अधिक नहीं जानते जितना हम मंगल ग्रह के प्राणियों और वनस्पतियों के बारे में जानते हैं।

अगणितिक व्यक्ति को हमारे भौतिक ज्ञान का अमूर्त स्वरूप असंतोष-जनक लगेगा। एक कलात्मक या काल्पनिक दृष्टिकोण से सम्भवतः यह

खेदजनक हो परन्तु व्यावहारिक दृष्टिकोण से इसका कोई महत्त्व नहीं है। अमूर्तीकरण जोकि बड़ा कठिन है व्यावहारिक शक्ति का स्रोत है। एक पूँजीपति (financier) जिसका व्यापार अन्य किसी व्यवहार कुशल व्यक्ति के व्यापार से अधिक अमूर्त है, वह व्यवहारकुशल व्यक्ति से अधिक शक्ति सम्पन्न भी होगा। वह गेहूँ या रुई का व्यापार कर सकता है चाहे वह उन्हें देखे भी नहीं उसे तो केवल यह जानने की आवश्यकता है कि उनका मूल्य गिरेगा या चढ़ेगा। यह अमूर्त गणितीय ज्ञान है, कम-से-कम खेतिहर के ज्ञान की तुलना में तो ऐसा ही है। इसी प्रकार भौतिकीविद द्रव्य के गति-सम्बन्धी नियमों के अतिरिक्त और कुछ नहीं जानता, फिर भी इतना तो जानता ही है कि स्वेच्छा से उसका उपयोग कर सकता है। बड़े-बड़े समीकरणों के साथ जोड़ तोड़ करता हुआ, जिनमें ऐसी-ऐसी चीजों के संकेत प्रयुक्त किए गए हैं जिनके निजी गुण हम कभी भी नहीं जान सकेंगे, वह अन्त में ऐसे परिणाम पर पहुँचता है जिसका अर्थ हम अपने प्रत्यक्ष ज्ञान के रूप में लगा सकते हैं और उसके प्रयोग से हम अपने जीवन में लक्षित प्रभावों की व्याख्या कर सकते हैं। पदार्थ जो अमूर्त और योजना बद्ध है उसके बारे में हम जो कुछ भी जानते हैं वह सिद्धान्त रूप में हमें वे नियम बताने के लिए पर्याप्त हैं जिनके अनुसार इससे हममें चेतना और प्रत्यक्ष ज्ञान उत्पन्न होते हैं और भौतिकी का प्रायोगिक लाभ इन्हीं नियमों पर निर्भर रहता है।

अन्तिम निष्कर्ष यह है कि हम बहुत ही कम जानते हैं, फिर भी आश्चर्य की बात है कि हम इतना सब मालूम है और इससे भी आश्चर्य की बात यह है कि इतने अल्प ज्ञान से भी हमें कितनी अधिक शक्ति मिली है।

पारिभाषिक शब्दों की सूची

अक्षांश	longitude
अणुगति	molecular motion
अन्तराल	interval
अन्तरिक्षीय आलस्य का नियम	law of cosmic laziness
अन्तरिक्ष किरणें	cosmic rays
अन्तर्नीहारिकीय आकाश	intergalactic space
अन्तर्लिप्त	surreptitious
अन्योन्य	reciprocal
अपकेन्द्री बल	centrifugal force
अपरिवर्ती द्रव्यमान	invariant mass
अभिगृहीत	postulate
अभिलेख यन्त्र	recording machine
अमूर्त शास्त्र	abstract logic
अमूर्तीकरण	abstraction
अयुक्लिडीय ज्यामिती	non Euclidean geometry
अराजकतावादी	anarchist
अवस्थिति	position
अशुद्धता	inaccuracy
आकाश	space
आकाशगंगा	milky way
आकाशमय	space like
आकुंचन	contraction
आकर्षण	attraction
आत्मवाद	idealism
आनुभविक	empirical
आपेक्षिक	relative
आपेक्षिकता	relativity
आपेक्षिकता का विशिष्ट सिद्धान्त	special theory of relativity
आपेक्षिकता का व्यापक सिद्धान्त	general theory of relativity
आपेक्षिकता भौतिकी	relativity physics
आपेक्षिकता सिद्धान्त	theory of relativity
आवेश	charge
आवर्त	periodic
इंडिया रबर	India rubber
इन्द्रधनुष	rainbow
इन्द्रियाँ	senses
इलिप्स	ellipse
इलक्ट्रान	electron
ईथर	aether
उत्तरदिनांकित	post-dated
उपपत्ति	proof
उप परमाणविक	sub atomic particle
ऊर्जा संरक्षण	conservation of energy
ऊष्मा का यान्त्रिक तुल्यांक	mechanical equivalent of heat

एकसमान वेग	uniform velocity
कक्षा	orbit
कमानीदार तुला	spring balance
कारण कार्य	cause and effect
कार्तीय निर्देशांक	cartesian co ordinate
कालिक	temporal
कालमय	time like
काल्पनिक	imaginary
क्रिया	action
कैथेराइन पहिया	Catherine wheel
क्रानोमीटर	chronometer
क्वांटम सिद्धान्त	quantum theory
गणितज्ञ	mathematician
गणितीय भौतिकी	mathematical physics
गणितीय व्यंजक	mathematical expression
गतिज ऊर्जा	kinetic energy
गतिमान मंच	moving platform
गतिविज्ञान	dynamics
गुरुत्व	gravitation
गुरुत्व द्रव्यमान	gravitational mass
गुरुत्व नियम	law of gravitation
गुरुत्वाकर्षण	gravitation
ग्रस्तता	obsession
ग्रह	planet
ग्रहण	eclipse
ग्रीनिच समय	Greenwich time
घटना	event, occurrence
घड़ी	clock

घनत्व	density
घूर्णन अक्ष	axis of rotation
चिर प्रतिष्ठित गतिविज्ञान	classical dynamics
जड़त्व द्रव्यमान	inertial mass
जियोडेसिक	geodesic
ज्यामिती	geometry
ज्योतिषज्ञ	astronomer
टेंसर सिद्धान्त	theory of tensors
तत्वमीमांसा	metaphysics
तरंग	wave
तरंग दैर्ध्य	wave length
तारा प्रकाश	star light
तार्किक गुणधर्म	logical properties
तीक्ष्ण स्वर	shrill *note*
त्रिज्या	radius
त्वरक	accelerator
दर्पण	mirror
दार्शनिक	philosopher
दिक्	space
दिक्-काल	space time
दूरदर्शी	telescope
दूरदृष्टि	long sight
दूर से क्रिया	action at a distance
दृक् तंत्रिका	optic nerve
दृश्यपरक तंत्र	perceptual apparatus
दृष्टि	sight
द्रव्यमान	mass
द्रव्यमान संरक्षण	conservation of mass
द्रव्यमान न्यूनता	mass defect

द्वितीयक गुण secondary quality
धन विद्युत् positive electricity
धूमकेतु comet
नाभि hub (of a wheel)
निकट दृष्टि short sight
निजी intrinsic
निजी लम्बाई proper length
निजी समय proper time
निरपेक्ष गति absolute motion
निर्वात vacuo
निर्देशांक coordinate
निष्कोण smooth
नीहारिका galaxy
न्यूटनीय यान्त्रिकी Newtonian mechanics
न्यूनतम क्रिया सिद्धान्त principle of least action
परमाणुवादी atomist
परमाणु संरचना atomic structure
परम्परा convention
पार्थिव भौतिकी terrestrial physics
परावर्तन reflection
परिकलित calculated
परिकल्पना hypothesis
परिभ्रमण rotation
पिण्ड body
पिण्ड निकाय system of bodies
पुंज cluster
पूर्व अवधारणा pre conception
पृष्ठों का सिद्धान्त theory of surfaces
प्रकाश light
प्रकाश की दमक flash of light
प्रकाश वेग velocity of light
प्रकाश संकेत light signal
प्रकाशीय optical
प्रचलित बम conventional bomb
प्रतिध्वनि echo
प्रतिबिम्ब image
प्रतिरूप model
प्रतिरोध resistance
प्रतिलोमानुपाती inversely proportional
प्रतीयमान apparent
प्रत्यक्ष ज्ञान perception
प्राकृतिक नियम natural laws
प्रागनुभव a priori
प्राथमिक गुण primary
प्रायोगिक practical
प्रेक्षक observer
प्रेक्षण observation
प्रेषण वेग velocity of transmission
प्लायाडिज Pleides
फिटसजरल्ड आकुंचन fitzgerald contraction
फोकस focus
बल force
बल की अटलता persistence of force
बीजगणित algebra
बीटा कण beta particle
बुध Mercury
बृहद् वृत्त great circle
बृहस्पति Jupiter
ब्रह्माण्ड सिद्धान्त cosmological principle

भार	weight
भौतिक	physical
भौतिक ससार	physical world
भौतिकीविद्	physicist
भ्रमिल	vortex
मगल	Mars
मत्स्य बसी	fishing rod
मन	mind
मनोविज्ञान	psychology
माइकल्सन-मोर्ली प्रयोग	Michelson Morley Experiment
मात्रक	unit
मात्रात्मक नियम	quantitative laws
माध्यम	medium
मानक	standard
माप की परम्परा	convention of measurement
मापन पद्धति	system of measurement
मूल बिन्दु	origin (of coordinates)
मेसान	meson
मक्सवेल समीकरण	Maxwell's equation
यथार्थवाद	realism
यादृच्छिक	arbitrary
याम्योत्तर	meridian
यूक्लिडीय ज्यामिती	Euclidean geometry
रवि-नीच	perihelion
रेखांश	latitude
रेडार	radar
रेडियोसक्रियता	radioactivity
रेडियो तरंग	radio wave
लाउड स्पीकर	loudspeaker
लोरेंटस रूपान्तरण	*Lorentz transformation*
वरणात्मकता	selectiveness
वस्तुनिष्ठ	objective
वायुपोत	airship
वास्तविक	real
विक्षोभ	disturbance
विघटन	disintegration
विद्युत् चुम्बकत्व	electro magnetism
विपथन	deviation
विमा	dimension
विरामावस्था	state of rest
विरोधाभास	paradox
विविक्त सरचना	discrete structure
विश्व	universe
विसगति	discrepancy
विस्तारशील ब्रह्माण्ड	expending universe
विस्तृत पिण्ड	extended object
विस्फोट	explosion
विस्फोट प्रेरक	detonator
वीचि	ripple
वृत्ताकार	circular
व्यक्तिनिष्ठ	subjective
शरीरक्रियात्मक	physiological
शरीर वैज्ञानिक	physiologist
शाश्वत गति	perpetual motion
सकल्पना	concept
सघनित गैस	condensed gas
सवेग	momentum
सश्लेषण	synthesis

सतत सृष्टि continual creation
सत्यापन verification
समकोण त्रिभुज right angled triangle
समकालिक simultaneous
समदिक्ता isotrophy
सममिती symmetry
समय क्रम time order
समय विस्तार time dilation
समांगता homogeneity
समीकरण equation
सर्पमीन eel
सहज ज्ञान intuition
सातत्य continuity
सातत्यक continuum
साक्ष्य testimony
साध्य proposition
सापेक्ष relative
सामान्यीकरण generalisation
सार्वत्रिक कारणता universal causation
सार्वत्रिक ब्रह्माण्ड समय universal cosmic time
सार्वत्रिक समय universal time
सीरियस sirius
सुग्राही फोटोग्राफी प्लेट sensitive photographic plate
सूक्ष्मदर्शी microscope
सैद्धान्तिक भौतिकी theoretical physics
सौर तन्त्र solar system
स्थानिक spatial
स्थानीय समूह local group
स्थायित्व stability
स्थितिज ऊर्जा potential energy
स्थिर अवस्था प्रतिरूप steady state model
स्थिर तारे fixed stars
स्पर्श touch
स्पेक्ट्रम spectrum
स्वयंसिद्ध truism
स्वर note (music)
हर्ट्स प्रयोग Hertz experiment
हाइपेरान hyperons
होमोसेपियन homosapieun